विजय रहस्य

क्या आप अपने जीवन में उपलब्धियां हासिल करना चाहते हैं? जीवन की समस्याओं का समाधान करना चाहते हैं? क्या आप अपने जीवन में निरंतर असफल हो रहे हैं? क्या जीवन को समझ नहीं पा रहे हैं?

वास्तव में यह जीवन एक शतरंज के खेल के समान है और आपके सामने बैठा हुआ विरोधी खिलाड़ी 'समय' है। ना जानते हुए अथवा अपनी इच्छा के बगैर भी आप उसके साथ शतरंज की बाजी खेल रहे हैं और खेलनी पड़ेगी भी। वो किसी प्रकार की शिथिलता और बहानेबाजी स्वीकार या बर्दाश्त नहीं करता। अगर आप गलत चाल चलते हैं अथवा आप चाल नहीं चलते, तो आपका मोहरा पिट जाएगा और शीघ्र ही आप अपनी बाजी हार जाएंगे।

यह पुस्तक ऐसे रहस्य को उजागर करती है जिससे आप जीवन की जंग जीत सके। अगर आप इस किताब का उपयोग करते हैं तो आप निश्चय ही अपने प्रयासों के अनुरूप अपेक्षित फल पाएंगे। क्या आप यह गोपनीय रहस्य नहीं जानना चाहेंगे?

English Version by
E SIVA KUMAR

Translated into Hindi by
Dr Vineet Bahri

About the author

Name: E Sivakumar,
B. Com, FCA, DISA

Education:

- B.com degree from Sri Venkateswara University, Tirupati, Andhra Pradesh
- Passed Chartered Accountant exam
- Passed Certified Public Accountancy (CPA) exam conducted by accountancy board in USA.
-

Occupation: Serving as an auditor in Chittoor, Andhra Pradesh

Mission: To serve India by blending Indian philosophy with American practicality

Phone: 8332040632
Email: siva.nellori@gmail.com

इस पुस्तक का अंग्रेजी से सरल हिंदी रुपांतर एवं संपादन डॉ0 विनीत बाहरी मोबाइल 8800963408 ईमेल dr_vineet_bahri@yahoo.com द्वारा किया गया।

अंतर्वस्तु

अध्याय	शीर्षक	पृष्ठ
प्राक्कथन		05
	भाग 1 : भौतिक सफलता	
1.	वह लड़का जिसने एक साम्राज्य को हराया	07
2.	चिन्तन – रचनात्मक शक्ति	11
3.	इच्छा – उपलब्धियों का प्रारंभिक बिंदु	13
4.	विश्वास – जो पर्वतों को भी हिला दे	17
5.	बुद्धिमत्ता – ज्ञान का उपयोग	21
6.	कल्पना – मन की सृजनशाला	27
7.	योजना – इच्छाओं को मूर्तरूप देने की क्रिया	30
8.	लौकिक मन – सहयोग शक्ति (1+1 = > 2)	34
9.	नेतृत्व – लक्ष्य प्राप्ति हेतु जन–समुदाय का मार्गदर्शन एवं प्रेरणा	36
10	अवचेतन मन – मनुष्य के सीमित–मन एवं अनंत लौकिक मन के बीच की कड़ी	39
11.	निर्भयता – भय पर नियंत्रण	45
12.	दृढ़ता – कुछ भी असंभव नहीं	50
	भाग 2 : आध्यात्मिक सफलता	53
13.	उद्भव एवं विकास	56
14.	माया (भ्रम की देवी)	60
15.	ध्यान योग (ध्यान की राह)	67
16.	भक्ति योग (प्रेम की राह)	74
17.	कर्म योग (कर्म की राह)	78
18.	मृत्यु से अमरता तक	84
सारांश		91
उपसंहार		94
दैनिक जीवन में धर्म का पालन		95
आभार & धन्यवाद		97

प्राक्कथन

आप जीवन में क्या चाहते हैं?

नौकरी, धन, ज्ञान, सत्ता, शोहरत या खुशी ?

कोई फर्क नहीं पड़ता कि हम अमीर हैं या गरीब- हमारे पास एक ऐसी संपदा है जिसे हम सबके बीच बराबर बराबर बांटा गया है और वह है 'समय'। हम सभी के पास एक दिन में केवल 24 घंटे उपलब्ध हैं। लेकिन ऐसा क्यों लगता है कि कुछ लोग बहुत कम प्रयासों से ही धन, सत्ता, शोहरत आदि प्राप्त कर लेते हैं, जबकी कुछ लोगों को इसके लिए बहुत परेशानी झेलनी पड़ती है और बहुत से लोग तो अपने लक्ष्यों और आदर्शों तक पहुंचने में पूरी तरह असफल हो जाते हैं।

ऐसा क्यों होता है? क्यों कुछ लोग बड़ी आसानी से अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूरा कर लेते हैं, कुछ लोग उन्हें प्राप्त करने में कठिनाइयों का सामना करते हैं, तो कई लोग कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाते ?

वास्तव में उपलब्धियां प्राप्त करने का सीक्रेट तो आपके मन में है, पर ज्यादातर लोगों को यह पता ही नहीं है कि उसका उपयोग कैसे किया जाए। जब आप अपने मन की शक्ति को भलीभांति समझ कर उसका उपयोग करते हैं तो अद्‌भुत चमत्कारी प्रभाव सामने आते हैं।

सदियों से समाज के ज्ञानी-पुरुषों, शिक्षकों और लेखकों द्वारा विश्व के ज्ञान-भंडार में योगदान दिया जाता रहा है। इस पुस्तक में उनके योगदान का भी प्रयोग किया गया है, लेकिन इस पुस्तक के किसी भी अंश का उद्देश किसी धर्म, जाति, समुदाय या जाति को बढ़ावा देने या उसकी आलोचना करने का नहीं है। भाषा के सहज प्रवाह के लिए महिला एवं पुरुष दोनों के लिए 'व्यक्ति' एवं 'आप' जैसे शब्दों का प्रयोग किया है जिसमें महिला एवं पुरुष दोनों का भाव है, कृपया इसे इसी भाव में ले। यह पुस्तक महिला एवं पुरुष में कोई भेद नहीं करती।

हमारे मन पर हमारे माता-पिता, शिक्षकों, समाज, परिवेश आदि का व्यापक प्रभाव होता है, जोकि नई जानकारियों को समझने, उन्हें स्वीकार या अस्वीकार करने की धारणा को बनाता और प्रभावित करता है। हो सकता है की इस पुस्तक की कुछ अवधारणाएं आपको अविश्वसनीय या पुरानी परंपरा की लगे। उन्हें एकदम अस्वीकार न करे। अपरिचित शब्दों को धैर्यपूर्वक समझने का प्रयास करें। नई अवधारणाओं को अपने मन के साथ समन्वय बैठाने दे और मन को नए तरीके से सोचने-समझने का मौका दें। ये समय की परीक्षा में हमेशा खरी उतरी है और आश्चर्यजनक रूप से और अधिक निखर कर व्यावहारिक एवं सार्वभौमिक रूप से सामने आई है।

यह पुस्तक निम्नलिखित तीन पुस्तकों पर आधारित है :

1. गांधीजी की आत्मकथा
2. नेपोलियन हिल द्वारा लिखित 'थिंक एंड ग्रो रिच'
3. भगवद गीता

महात्मा गांधी ने अपना जीवन भगवत गीता के सिद्धांतों के आधार पर जिया था। इसलिए इन सिद्धांतों का कुछ हद तक इस पुस्तक में प्रयोग किया गया है, परन्तु यह पुस्तक ना कोई धार्मिक ग्रंथ है और ना ही गांधी जी के जीवन का इतिहास अथवा भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की पूरी तस्वीर प्रदर्शित करती है। ये पुस्तकें हमारी वेबसाइट पर Library/Books सेक्शन में उपलब्ध है।

इस पुस्तक का उद्देश्य आपके सपनों को हकीकत में बदलने, आपकी समस्याओं को हल करने तथा जीवन संग्राम में विजय प्राप्त करने में आपकी मदद करना है। इस पुस्तक में आपका जीवन-दर्शन है ! आप इस पुस्तक में '*जीवन-विज्ञान एवं जीने की कला*' का संगम पाएँगे। यदि आप इस पुस्तक को सिर्फ मनोरंजन के लिए पढ़ रहे हैं तो यह आपके मतलब की नहीं है। यदि आप इसे दैनिक जीवन में एक गाइड के रूप में पढ़ रहे हैं तो यह आपके लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगी। आपको इसके सिद्धांतों को अपने जीवन में उतारने और उन्हें रोजमर्रा के जीवन में लागू करने की जरूरत है। हो सकता है की प्रारंभ में पढ़ते समय कुछ प्रसंग समझने में कठिनाई आए, परंतु पूरी पुस्तक पढ़ने के पश्चात अंततः आप उसे समझ जाएंगे।

***

भाग 1 :   भौतिक सफलता

अध्याय 1

वह लड़का जिसने एक साम्राज्य को हराया

गांधीजी का जन्म 2 अक्टूबर 1869 को पोरबंदर, गुजरात में हुआ था। स्कूल में वे एक ढीले-ढाले निष्क्रिय सेछात्र थे। वे बहुत शर्मीले हुआ करते थे और लोगों के साथ से बचा करते थे। वह चोर, भूत, और सांपों से बहुत डरा करते थे। रात में दरवाजे के बाहर जाने की उनकी हिम्मत भी नहीं होती थी। वो अँधेरे में सोने के बारे में सोच भी नहीं सकते थे क्योंकि उन्हें लगता था कि एक ओर से भूत आ रहे हैं, दूसरी ओर से चोरों और तीसरी ओर से नागों का डर सताता था।

बाद में उन्होंने कानून की पढ़ाई की, लेकिन अपने कानूनी कैरियर में उन्होंने कुछ ख़ास नहीं किया। वे नहीं जानते थे कि किसी विशेष परिस्थिति में किस क़ानून का कैसे इस्तेमाल करना है। उनकी किताब उन्हें यह नहीं सिखा पाई कि मुवक्किल की कैसे मदद करें। कोई भी उन्हें केस देने की हिम्मत नहीं जुटा पता था। उनके सहयोगियों ने मजाक में उन्हें "ब्रीफ-लेस बैरिस्टर" कहना शुरू कर दिया ।

उनके पास कुछ और करने को तो था नहीं, इसलिए वह हर दिन कुछ अनुभव हासिल करने के लिए अदालत जाते थे। लेकिन उन्हें केस को समझने में परेशानी होती और इसी बीच केस उनके हाथ से निकल जाते थे। उनकी पहला और एकमात्र केस एक छोटे से दावे का नियमित केस था। गांधी जी के ही शब्दों में देखें कि उस केस का क्या हुआ ।

> *'स्माल कॉज कोर्ट' में इस केस से मेरे कानूनी जीवन की शुरुआत हुई। मैं प्रतिवादी की तरफ से था, इसलिए मुझे जिरह करनी थी । मैं खड़ा तो हुआ, पर पैर कांपने लगे। सिर चकराने लगा और मुझे लगा मानो अदालत घूम रही है। सवाल कुछ सूझते ही न थे। पक्की बात है जज हंसा होगा, और कोई संदेह नहीं कि वकीलों को भी मजा आया होगा। पर मेरी आँखों के सामने अँधेरा था- मैं कुछ नहीं देख पा रहा था ?*
>
> *मैं खड़ा नहीं हो पा रहा था, मै नीचे बैठ गया और मैंने एजेंट से कहा कि मुझसे ये मुकदमा नहीं चल सकेगा। आप ये केस पटेल को सौंप दीजिए और मुझे दी हुई फीस वापस ले लीजिए ।   रू. 51 देकर पटेल को वकील किया गया। उनके लिए तो यह केस बच्चों का खेल था।*
>
> *मैं अदालत से तेजी से भागता हुआ बाहर आया, मुझे मालूम नहीं मुवक्किल जीता या हारा । मैं अपने आपसे बहुत शर्मिन्दा था, मैंने निश्चय किया कि जब तक मुझमें पूरी तरह से केस लड़ने का आत्मविश्वास न आ जाए, तब तक मैं कोई मुकदमा नहीं लडूंगा।*

जीवन में सफल होने के लिए किये जा रहे कुछ ऐसे प्रयासों के बाद गांधीजी हताश हो गए। तभी उनके जीवन में एक ऐसा चमत्कारी मोड़ आया जिसे कुछ ज्ञानीजन "भाग्य" या "अवसर" मानते हैं।

उनके भाई के माध्यम से एक स्थानीय फर्म ने उनकी मदद करने के लिए दक्षिण अफ्रीका स्थित अपने कार्यालय में एक साल काम करने के अनुबंध की पेशकश की। यह एक मामूली लिपिकीय पद था, जो न केवल उनकी बेहतर शिक्षा के मुकाबले निम्न वेतन और कम प्रतिष्ठा वाला था, साथ ही उन्हें अपनी पत्नी से भी अलग होना पड़ रहा था, जिन्होंने अभी-अभी दूसरे बेटे को जन्म दिया था। उस समय यह प्रस्ताव बहुत बड़े अवसर की

तरह प्रतीत नहीं हो रहा था। लेकिन उन्होंने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। कम से कम यह एक नौकरी तो थी, एक मौका तो था कुछ अनुभव पाने का और शायद अपने भाई को कुछ पैसे भेजने का अवसर भी।

एक लंबी समुद्री यात्रा के बाद, गाँधी जी एक फ्रॉक-कोट और पगड़ी में डरबन में उतरे और उनके मुवक्किल अब्दुल्ला सेठ ने उनका स्वागत किया। प्रोविडेंस ने वहां की विशेषताएं बताते हुए उन्हें बहलाने का प्रयास किया, जिसके बारे में उन्होंने बाद में कहा *"बिना किसी विशेषता एवं आकर्षण वाले इस महाद्वीप में ही मैंने अपने को भगवान पाया"।*

हालांकि दक्षिण अफ्रीका में ब्रिटिश और डच भी थे जो कुल आबादी की तुलना में अत्यंत कम संख्या में थे, परन्तु वे स्थानीय अफ्रीकियों और भारतीय दोनों को हेय दृष्टि से देखते थे। वस्तुत: भारतीयों को मूल रूप से उनके अनुरोध पर ही 1860 में यूरोपीय बस्तियां बसाने हेतु यहाँ लाया गया था । उस समय वहां बगावानी अर्थव्यवस्था थी। पांच साल के मजदूरी के अनुबंध पर गिरमिटिया मजदूरों को मुफ्त में रहने के अधिकार के साथ निवास का लालच दे कर लाया गया था।

उनके इसी रास्ते को अन्य व्यापारियों और अन्य पेशेवर लोगों ने भी अपना लिया। वे सभी यूरोपियों द्वारा बहिष्कृत जाति के रूप में हेय दृष्टि से देखे जाते थे और उन्हें नफ़रत से "कुली" या "सामी" कह कर बुलाया जाता था, चाहे वे कितने बड़े व्यवसायी या समाज में कितने ही प्रतिष्ठित क्यों ना हो। यूरोपीय, स्थानीय अफ्रीकियों की तुलना में, भारतीयों से ज्यादा नफरत करते थे, हालाँकि भारतीय भी काले थे, लेकिन वे अधिक बुद्धिमान, मेहनती और मितव्ययी थे, इसलिए यूरोपीय भारतीयों को अपना प्रतिस्पर्धी मानते थे, चाहे कृषि का क्षेत्र हो या व्यापार का, वे उनसे घबराते थे। कई सालों बाद एक ब्रिटिश व्यक्ति ने गांधीजी के समक्ष स्वीकार किया कि 'इसमें भारतीयों का दोष नही है कि दक्षिण अफ्रीका में बसे यूरोपीय उनसे घबराते हैं, बल्कि यह डर उनके मन में व्याप्त हो गया था'। समय के साथ-साथ गांधीजी को सब समझ आ रहा था।

डरबन में एक सप्ताह के प्रवास के बाद उनके मुवक्किल ने गांधीजी के लिए प्रिटोरिया जाने व्यवस्था की, जहां एक मुकदमे के लिए उनकी उपस्थिति आवश्यक थी। दक्षिण अफ्रीका में यूरोपीय हमेशा प्रथम श्रेणी में यात्रा करते थे, जबकि भारतीयों से तृतीय श्रेणी में यात्रा करने की उम्मीद की जाती थी। लेकिन गांधी जी की फर्म ने उनके लिए प्रथम श्रेणी की एक सीट आरक्षित कर रखी थी।

ट्रेन जब रात के लगभग नौ बजे मेरित्सबर्ग पहुंची, तो एक गोरे यात्री ने ट्रेन के डिब्बे में सवार एक 'काले' आदमी मौजूदगी पर आपत्ति जताई । गांधी जी के शब्दों में जीवन में आमूल परिवर्तन वाली वो घटना इस प्रकार है :

> *ट्रेन लगभग 9 बजे मेरित्सबर्ग स्टेशन पहुंची। एक यात्री आया, उसने मुझे ऊपर से नीचे तक देखा । उन्होंने देखा कि मैं एक 'काला' आदमी था। वह परेशान हुआ। वह बाहर निकला और अपने साथ दो अधिकारियों को लेकर आया।*
>
> *मै चुप रहा तब एक अधिकारी मेरे पास आया और उसने कहा, 'इधर आओ, तुम्हें माल डिब्बे में जाना चाहिए।'*
>
> *मैंने कहा 'मेरे पास प्रथम श्रेणी का टिकट है'*
>
> *'इससे कोई फर्क नहीं पड़ता' औरों की तरह तुम भी जाओ। मैं तुमको बता दूँ कि तुम्हे माल डिब्बे में जाना ही है।'*
>
> *'मुझे इस डिब्बे में यात्रा करने की इजाज़त मिली है, और मैं इसी में जाउंगा।'*

'नहीं, यह नहीं हो सकता" उस अधिकारी ने कहा। 'तुम्हे ये डिब्बा छोड़ना होगा, वरना मुझे पुलिस को फोन करके तुम्हें बाहर फिकवाना होगा।'

'हाँ आप कर सकते हैं। मैंने अपनी इच्छा से बाहर निकलने से मना कर दिया।'

सिपाही आया, उसने मेरा हाथ पकड़ा और मुझे धक्का देकर नीचे उतारा। मेरा सामान भी उतार दिया गया। मैंने दूसरे डिब्बे में जाने से इनकार कर दिया और ट्रेन चल दी।

मैं वेटिंग रूम में बैठ गया अपना हैण्ड बैग अपने साथ रखा, और बाकी सामान को हाथ भी नहीं लगाया। रेलवे अधिकारियों ने उसे अपने पास रख लिया।

सर्दियों का मौसम था, और दक्षिण अफ्रीका के सर्दी ऊँचाई वाले क्षेत्रों में बहुत प्रचंड ठंड थी। मेरित्सबर्ग एक ऊंचाई वाला प्रदेश था, ठंड चुभ रही थी। मेरा ओवरकोट मेरा सामान में था, लेकिन सामान माँगने की हिम्मत नहीं हुई, फिर अपमान हुआ तो ? मै बैठा ठण्ड से कांपता रहा।

कमरे में रोशनी भी नहीं थी। आधी रात के करीब एक यात्री आया और जान पड़ा कि वो मुझसे बात करना चाहता था। लेकिन मैं बात करने की मनःस्थिति में नहीं था।

मैंने अपने कर्तव्य के बारे में सोचना शुरू किया। "क्या मुझे अपने अधिकारों के लिए लड़ना चाहिए या भारत लौट जाना चाहिए ? नहीं तो जो अपमान हो उन्हें सहकर प्रिटोरिया पहुँच जाना चाहिए, और मुकदमा खत्म करने के बाद भारत लौट जाना चाहिए ? मुकदमा अधूरा छोड़कर भागना तो कायरता होगी। जिस कष्ट को आज मैंने झेला है ये तो रंग-भेद की गहरी महामारी का एक लक्षण मात्र है। यदि संभव हो तो मुझे इस बीमारी को जड़ से उखाड़ने का प्रयास करना चाहिए और ऐसा करने में स्वयं जो कष्ट सहने पड़ें सहने चाहिए।

लेकिन इससे ज्यादा होना अभी बाकी था। अगली शाम गांधीजी ने ट्रेन यात्रा जारी रखी - इस बार बिना किसी रुकावट के। लेकिन इससे भी बड़ी एक बाधा चार्ल्सटाउन से जोहानिसबर्ग के बीच किराये की कोच द्वारा की जाने वाली यात्रा में इंतज़ार कर रही थी। गांधीजी को बाहर बॉक्स पर कोचवान के साथ बैठने के लिए कहा गया, जबकि कंडक्टर या 'लीडर' के रूप में बुलाए जाने वाले एक गोरे को अन्य गोरे यात्रियों के साथ अंदर बैठाया गया।

गांधीजी जी इस डर से उस अपमान को सहते रहे कि कहीं उन्हें इस कोच द्वारा यात्रा करने से वंचित ना कर दिया जाए। रास्ते में 'लीडर' धूम्रपान करना चाहता था और इसके लिए गांधी जी को फुट-बोर्ड पर गंदे बोरे से ढके बॉक्स की बनाई गई सीट पर बैठने का आदेश दिया गया। गांधी जी ने मना कर दिया।

'लीडर' गांधीजी से बड़े गुस्से में जंगली एवं घृणित तरीके से पेश आया और उन पर टूट पड़ा, उन्हें नीचे फेंकने की कोशिश करने लगा। गांधीजी पीतल की रेलिंग से मजबूती से चिपके रहे, और अपनी मिली सीट को छोड़ने से मना करते रहे और उसे मना कर जवाबी कार्रवाई के लिए उकसाते रहे। गोरे यात्रियों में से कुछ ने इस कायरतापूर्ण हमले का विरोध किया, 'लीडर', खिन्न होकर गांधीजी को वहीं छोड़ने के लिए बाध्य हो गया।

इस प्रकार गांधीजी ने अपने जीवन में पहली बार अपनी जान खतरे में डालकर 'ना' कहना सीखा। इससे पहले भी उन्होंने अपनी मां को दिए गए वचन को निभाने एवं पुण्य कमाने के लालच में उन्होंने शराब और महिलाओं को 'ना' कहना सीखा था। लेकिन यह 'ना' अत्यधिक बलवान था, जिसने उनमें छिपी दृढ़ता को उभार कर उन्हें निर्भय बनाया और दृढ़ता आधरित निडरता उनका सर्वोत्तम गुण बन गई।

जीवन में कई विफलताओं और बाधाओं का सामना करते हुए, गांधीजी ने बजाय बाहरी दुनिया में समाधान की तलाश करने के, स्वयं की खोज की एक जीवन लंबी यात्रा शुरू कर दी।

हमें भी इसी तरह अपने जीवन में बडी उपलब्धियां हासिल करने, जैसे पथ-प्रदर्शक या वैज्ञानिक, कलाकार या व्यापारी आदि बनने के प्रयास करना चाहिए। नाकि मात्र परीक्षाओं, एक अदद नौकरी खोजने में और असफल होने या कारोबारी उद्यम में विफल रहने जैसी समस्याओं या राह में आने वाली चुनौतियों के कारण निराशा की गर्त में खो जाएं । विफलता का सामना न कर पाने पर कई लोग आत्महत्या, हत्या या अन्य शार्टकट, गलत तरीकों आदि का सहारा लेते हैं।

जीवन में स्थाई रूप से ना तो हमेशा उत्थान होत्ता है ना पतन। जीवन सर्वदा ही उतार चढ़ाव, सुख और संघर्ष का एक अद्‌भुत मिश्रण है। हमें संपूर्ण यात्रा का आनन्द लेने की जरूरत है, न कि मंजिल पर पहुँचने की। अगले अध्याय सैद्धांतिक आधार विवेचना की गई है, जिनके आधार पर समस्याओं को हल किया जा सकता है और प्रभावी तरीके से अपने सपनों को हासिल किया जा सकता है।

–*–

अध्याय 2
चिन्तन – रचनात्मक शक्ति

"अगर आप सोचते हैं कि आप हार गए हैं, तो आप हार जाएंगे,
अगर आपको लगता है आपमें हिम्मत नहीं हैं, तो वाकई आप नहीं कर पाएंगे,
आप जीतना तो चाहते हैं, लेकिन आपको लगता है जीत आप नहीं सकते, यह
लगभग निश्चित है कि आप नहीं जीतेंगे।

"अगर कुछ करते आप समय यह सोचते हैं कि आप खो देंगे,
तो आप जीवन में सब कुछ खो देंगे,
सफलता की इच्छा ही सफलता का आधार है –
वास्तव में यह सब एक मानसिक स्थिति है।

"अगर आप सोचते हैं कि आपको आगे बढ़ना है,
तो आपको अपनी सोच को भी आगे बढ़ाना होगा,
सबसे पहले आपको ही सुनिश्चित करना होगा कि
आप कोई भी पुरस्कार जीत सकते हैं ।

"जीवन का युद्ध
सर्वदा बलवान या तेज आदमी ही नहीं जीतते,
बल्कि देर–सवेर वही आदमी युद्ध जीतता है
जो सोचता है कि वह जीत सकता है !"

गांधीजी एक अद्वितीय विचारक और कर्मवीर पुरुष दोनों ही थे । वास्तव में हर इंसान सोचने की शक्ति रखता है। लेकिन केवल वो जो विचार की रचनात्मक शक्ति को समझता है और उसे ठीक तरह से अपनाता है, वो ही जीवन में अपने उद्देश्य को पूरा करता है। इसी आधार पर हम एक आदर्श घर, व्यवसाय, आदर्श जीवन और आदर्श वातावरण और भी कई चीजों का निर्माण कर सकते हैं। विचार ही अंततः शब्द और कार्य बन जाते हैं। इसलिए हम अपने विचारों, शब्दों और कार्य में महारत होनी चाहिए।

कई सालों बाद जब एक अमेरिकी मिशनरी गांधीजी से मिलने उनके सेवाग्राम आश्रम में आई, उन्होंने उनसे पूछा " *आपके जीवन में सबसे रचनात्मक अनुभव क्या रहा है?"* गांधी जी ने उत्तर दिया "*ऐसे हजारों अनुभव हैं। लेकिन जब ये सवाल आप मुझसे पूछ रहे हैं, मुझे एक अपना अनुभव स्मरण हो रहा है, जिसने मेरी जिंदगी बदल डाली थी ।"* उन्होंने यहाँ मेरित्सबर्ग का जिक्र किया।

गांधीजी ने उस निराशाजनक दृश्य को याद करते हुए आगे कहा "*रचनात्मक अनुभव ऐसे ही मिलते हैं। मुझे अपने जीवन को लेकर बहुत डर लग रहा था। जब मैंने अंधेरे वेटिंग रूम में प्रवेश किया। तो वहाँ कमरे में एक गोरा आदमी था। मैं उससे डर गया। मेरा कर्तव्य क्या था, मैं अपने आप से पूछा। क्या मुझे भारत वापस जाना चाहिए, या भगवान पर विश्वास रखकर आगे बढ़ना चाहिए, और वहां जो भी मैंने झेला मेरे भाग्य में था ? मैंने रुकने और पीड़ा उठाने का फैसला किया। उसी दिन से मेरी सक्रिय अहिंसा शुरूआत हुई। "*

गांधी जी अपने जीवन–काल में स्वतंत्र भारत को देख सके और वो राष्ट्र के पिता के रूप में स्वीकार्य हुए। लेकिन उनकी ये उपलब्धियां रातो–रात एक बार में फलीभूत नहीं हुई। ये धीरे–धीरे प्रतिस्फुटित हुई, 'बराबरी के व्यवहार' का अधिकार पाने की दृढ़ इच्छा से शुरुआत हुई ।

ट्रांसवाल में भारतीयों की स्थिति नेटाल से भी बदतर थी। प्रत्येक व्यक्ति को तीन पाउंड की दर से कर का भुगतान करने के लिए मजबूर किया जाता था। हिंदू परंपराओं के तहत उनकी शादी को कानूनी मान्यता प्राप्त न थी और अमान्य घोषित थी। वे एक विशेष रूप से आबंटित स्थान घेत्तो (ghetto - अल्पसंख्यको, सामाजिक एवं आर्थिक रूप से बहिष्कृत समूह के सदस्यों के लिए निर्धारित बस्ती) को छोड़कर कही और भूमि नहीं खरीद सकते थे। उनके पास मतदान का अधिकार नहीं था; उन्हें फुटपाथ पर चलने या 9 बजे के बाद घर से बाहर निकलने की अनुमति नहीं होती थी, इसके लिए उन्हें एक विशेष अनुमति-पत्र हमेशा अपने पास रखना होता था।

गांधीजी ने हर समय घर से बाहर रहने के लिए राज्य के अटॉर्नी से एक प्राधिकृत पत्र प्राप्त किया हुआ था, एक दिन गांधीजी रोज की तरह शाम को टहल रहे थे, तभी एक गार्ड ने अचानक उन्हें बिना किसी चेतावनी के फुटपाथ से धक्का दे दिया और उनकी सड़क पर पिटाई कर दी। एक अंग्रेज, जो गांधीजी को जानता था, पास से गुजर रहा था उसने गार्ड को आक्रोश से देखा। उन्होंने गांधीजी को सलाह दी कि गार्ड के खिलाफ कानूनी कार्रवाई करें और उसने खुद गवाह बनने प्रस्ताव किया। लेकिन गांधी जी उसका सहयोग लेने से यह कह कर मना कर दिया कि उन्होंने खुद के लिए यह नियम बनाया है कि वे निजी शिकायत के लिए वे अदालत नहीं जाएंगे। परन्तु उन्हें इस बात का आश्चर्य था कि एक व्यक्ति कैसे किसी अन्य व्यक्ति को पीड़ा देकर अच्छा महसूस कर सकता है ।

मेरित्सबर्ग स्टेशन पर ट्रेन से नीचे फेंक दिए जाने के बाद, बजाय समस्याओं से दूर भागने के, गांधीजी ने अपने कर्तव्यों के बारे में सोचना शुरू किया । उन्होंने महसूस किया कि जब तक वह परिस्थितियों से भिड़ नहीं जाते, तब तक समय उनकी परीक्षा लेता रहेगा। वह समझ गए कि जिसे वो कठिनाई समझ रहे है, वो केवल रंगभेद के पूर्वाग्रह के गहरे रोग का लक्षण मात्र था। उन्होंने इस बीमारी को जड़ से उखाड फेंकने और इस प्रक्रिया में कठिनाइयों से लड़ने का संकल्प लिया।

जब ये विचार पहली बार उनके मन में कौंधा, दो कठिनाइयां उनके रास्ते में खड़ी थीं। पहली, वे पृथ्वी के सबसे शक्तिशाली फौज और सम्मानित साम्राज्य का सामना करने वाले थे। दूसरी कठिनाई यह थी कि उनके पक्ष के लोग आपस में ही जाति, धर्म, भाषा और इसी तरह की चीजों में विभाजित थे और आपस में लड़ रहे थे। आप बाद के अध्यायों में समझ सकते हैं, उन्होंने इन बाधाओं को कैसे पार किया ।

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि लोग तर्कसंगत विचारों की तुलना में, भावुक भावनाओं से अधिक प्रेरित होते है। विचार, जो किसी भी भावनाओं की अनुभूतियों के मिश्रण से एक अद्भुद चुंबकीय शक्ति बनाता है, जो अंतरिक्षीय कंपन द्वारा इसी प्रकार के विचारों को अपनी ओर आकर्षित करता है।

ऐसा कोई विचार, जो किसी विशेष प्रकार की भावना से आकृष्ट हो, उसकी तुलना एक बीज से की जा सकती है, जिसे जब उपजाऊ मिट्टी में बोया जाता है, तो वह अंकुरित होता है, बढ़ता है, और बारंबार बढ़ता ही जाता है, जबकि मूल रूप से वह एक छोटा सा बीज था, जो अपनी प्रकृति के अनगिनत लाखों बीजों में परिवर्तित हो जाता है ।

अंतरिक्ष, अनन्त बलों की कंपन शक्ति का एक महान ब्रह्मांडीय पुंज-समूह है। यह सकारात्मक व रचनात्मक और नकारात्मक व विनाशकारी दोनों प्रकार के कंपनों से निर्मित है। अंतरिक्ष, संगीत की सैकड़ों ध्वनियाँ और सैकड़ों मानवीय आवाजों को रेडियो तरंगो के माध्यम से ले कर चलता है, जो उन सभी के अस्तित्व और पहचान को बनाए रखने का साधन है। इस प्रकार यह हर समय, भय, गरीबी, बीमारी, असफलता, दुख की तरंगों के साथ साथ समृद्धि, स्वास्थ्य, सफलता और खुशी की तरंगों को भी साथ लेकर चलता है।

अंतरिक्ष के अनंत भण्डार से आने वाली तरंगे, मानव मन की कोशिकाएं को लगातार आकर्षित करती रहती हैं, जो उसके अनुकूल होती है वो मानव मन पर हावी हो जाती है। किसी भी व्यक्ति के मन की सोच, विचार, योजना, या उद्देश्य अंतरिक्ष से आने वाली तरंगों से प्रभावित और आकर्षित होता है, इससे संबंधित विचार अपनी शक्तियों से इसे और विस्तार देते हैं, और तब तक बढ़ाते रहते हैं जब तक यह उसके मस्तिष्क पर हावी नहीं हो जाता और मस्तिष्क में बैठ नहीं जाता है।

अवचेतन-मन (एक ऐसी रासायनिक प्रयोगशाला है जिसमें सभी वैचारिक आवेग मिल कर संयुक्त रूप से भौतिक वास्तविकता में रूपांतरण के लिए तैयार होते हैं) रचनात्मक और विनाशकारी वैचारिक आवेगों के बीच कोई फर्क नहीं कर पाता। हम वैचारिक आवेगों के माध्यम से इसे खुराक देते है यह उन सामग्री के साथ काम करता है। अवचेतन-मन, भय द्वारा संचालित विचार को उसी अनुसार हकीकत में परिणित करेगा, जबकि साहस या विश्वास के द्वारा संचालित कोई विचार साहस पूर्ण हकीकत में परिणित होगा ।

हालांकि सिर्फ आम विचारों में ही नहीं, अपितु प्रबल विचारों (इच्छा, विश्वास, प्रेम, आशा, उत्साह के मिश्रण से सक्रिय) में भी रचनात्मक बनने की संभावना होती है। इनमें से, इच्छा, विश्वास और प्रेम को बाद में अध्यायों में विस्तार से समझाया गया है।

-*-

अध्याय 3

इच्छा - उपलब्धियों का प्रारंभिक बिंदु

बिल गेट्स ने हर मेज पर और हर घर में कंप्यूटर होने का सपना देखा था। आज हम देखते हैं कि उनके सपने ने कई लोगों का जीवन बदल दिया है। प्राचीन काल से ही, आदमी पक्षियों की तरह उड़ने का सपना देखते थे। राइट बंधुओं ने एक मशीन को उड़ाने का सपना देखा था। अब हम पूरी दुनिया में उड़ते हुए विमानों को देख सकते हैं, जो साबित करता है कि राइट भाइयों के सपनों में दम था।

इच्छा एक शक्तिशाली भावना है जो सभी उपलब्धियों का प्रेरणास्त्रोत है। प्रत्येक वो व्यक्ति, जो किसी उद्यम में सफल होना चाहता है, उसे उस लक्ष्य को पाने की 'दृढ़ इच्छा' की आग को अपने मन में जलाए रखना होगा। आपकी इच्छा कुछ भी हो सकती है, आपकी इच्छा, परीक्षा में सफल होने और एक अच्छी नौकरी प्राप्त करने या एक सफल व्यावसायिक उद्यम शुरू करने की हो सकती है। या फिर आप एक वैज्ञानिक खोज करना चाहते हैं या कुछ बहुत महत्वपूर्ण करना चाहते हैं। या आप बस अपने जीवन की समस्याओं को हल करना चाहते हैं।

आपकी इच्छा धर्मानुसार न्यायसंगत होनी चाहिए, (अध्याय 5 में विस्तार से बताया जाएगा)। इच्छा किसी दूसरे या अन्य सभी के लाभ और किसी की या समस्त मानव जाति की सेवा के रूप में होनी चाहिए। जब 'इच्छा' प्रबल स्वार्थी अभिलाषाओं और जुनून से दूषित होती है और दूसरों के लिए कल्याणकारी न हो कर अहितकर हो जाती है, तो यह बुराई और आत्मविनाशकारी हो जाती है।

एक तरीका है जिसके द्वारा किसी उद्देश्य की इच्छा को छह निश्चित, व्यावहारिक चरणों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है, जो इस प्रकार है:

1. पहले तो यह तय करें कि आप क्या चाहते हैं।

2. यथार्थ के धरातल से यह निर्धारित करें कि आप क्या हासिल करने के बदले में, क्या खोने का इरादा रखते है (कुछ पाने के लिए कुछ न गवांना जैसी कोई वास्तविकता नहीं होती) ।

3. उसे पाने की एक निश्चित तारीख निर्धारित करें (जैसे कि 6 महीने या 31 दिसंबर तक)।

4. अपनी इच्छा को पूर्ण करने के लिए एक निश्चित योजना बनाएँ और उसे फौरन प्रारंभ कर दें, चाहे आप तैयार हों या नहीं, बस योजना की शुरुआत कर दें।

5. आप क्या हासिल करना चाहते हैं इसे स्पष्ट, संक्षिप्त अक्षरों में लिखें, निर्धारित समय-सीमा, निर्धारित करें, लिखें कि बदले में आप क्या खोने का इरादा रखते हैं, और अपनी योजना का स्पष्ट रूप से वर्णन करें, जिसके माध्यम से आपका इसे प्राप्त करने का इरादा है।

6. अपने उक्त वक्तव्य को दिन में दो बार, जोर से पढ़ें, एक बार सोने से पहले, और एक बार सुबह उठाने के बाद। जैसे-जैसे आप पढ़ते है, देखते हैं और महसूस करते है और वैसे -वैसे आप को यह लगने लगेगा, खुद में विश्वास आने लगेगा कि आप अपने उद्देश्य को अवश्य प्राप्त कर लेंगे।

अपने उद्देश्य को सचमुच पा लेने से पहले "उसे हासिल करते हुए देखना" आपको असंभव लग सकता है। यहाँ आपकी 'प्रबल इच्छा' आपकी मदद के लिए आएगी। अगर आप उसे सच्चे दिल से पाना चाहते हैं, तो आपकी इच्छा एक जूनून बन जाएगी, आपको खुद को समझाने में कोई कठिनाई नहीं होगी कि आप वो प्राप्त कर लेंगे जो आप चाहते हैं।

केवल वे ही लोग हमेशा सफल होते हैं, जो "सफलता-चेतनशील" (सक्सेस-कॉन्शस) होते हैं। "सफलता की चेतना" का अर्थ है कि व्यक्ति का मन, उस इच्छा के साथ इतनी अच्छी तरह से संतृप्त हो गया है कि उसको सर्वत्र वही दिखाई देता है। स्वयं पर संहेह की कोई गुंजाइश ही नहीं रहती।

अपने इस कदम को हास्यास्पद रूप में देखने की आवश्यकता नहीं है। इसे लागू करने के लिए विद्वान होने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन इन कदमों को सफलता से लागू करने के लिए पर्याप्त कल्पनाशील होने की आवश्यकता है, ताकि आप देख सकें और समझ सकें कि उपलब्धि को अवसर या भाग्य पर नहीं छोड़ा जा सकता। व्यक्ति को यह एहसास होना चाहिए कि वे सभी जिन्होंने महान जीत हासिल की है, अपनी जीत के पहले उन्होंने खूब सारे सपने देखे, उम्मीद बनाये रखी, और योजनाएं बनाते रहे।

आप यह भी अच्छी तरह जान लें कि आप तब तक कभी सफल नहीं हो सकते, जब तक कि आप सफलता पाने के लिए अपनी इच्छा की 'आग' को जलाए नहीं रखते, और वास्तव में ये विश्वास नहीं रखते हैं कि आप सफल होंगे।

धीरुभाई अंबानी ने अपने जीवन की शुरुआत में विदेशों में पेट्रोल टंकी पर काम किया था और बाद में उन्होंने कई लोगों को आजीविका उपलब्ध कराने वाले एक बहुत बडे व्यावसायिक साम्राज्य की स्थापना की। एक मध्यम वर्गीय परिवार में जन्मे एपीजे अब्दुल कलाम एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक और भारत के राष्ट्रपति बने। एक चाय बेचने वाले लड़के के रूप में काम करने वाले नरेंद्र मोदी, भारत के प्रधानमंत्री बन गए।

> "*दिल की सच्चाई और शुद्ध इच्छा हमेशा ही पूरी होती है*" गांधी जी के शब्दों में "*अपने अनुभव से मैंने इस नियम को अक्सर सच होते देखा है। मैंने ह्रदय से गरीबो की सेवा की है, और मैंने हमेशा अपने आपको उन गरीबों के बीच पाया, इससे मुझे उनके साथ अपने आप को पहचानने की क़ाबलियत मिली है।' "*

महान कवि जेसी बी. रिटनहॉउस ने अपनी एक कविता में सार्वभौमिक सत्य को बहुत सुंदर रूप से परिभाषित किया है, जिसका शाब्दिक अनुवाद इस प्रकार है :

"मैंने अपनी जिंदगी का एक पैसे में सौदा किया,
जिन्दगी ने कभी मुझे इससे ज्यादा नहीं दिया,
जब शाम को मैंने कमाई गिनी,
तो मैंने अपनी दीनता का रोना रोया।

"जीवन तो बस एक मालिक के सामान है,
वह वही देता है जो तुमने तय किया,
जब एक बार मजदूरी तय कर ली,
तो, वह काम तो करना ही है,

"मैंने भाड़े के सेवक के लिए काम किया,
केवल निराशा हताशा को समझने के लिए,
मैंने पाया कि मैंने कोई भी मजदूरी मांगी होती,
जीवन ने खुशी से दी होती "

यह आशावादी कविता जीवन के यथार्थ को बताते हुए हताशा के कारण को दूर करने के उपाय भी बताती है, भावार्थ यह है कि हम जीवन में अपने जिस वर्तमान स्तर पर हैं, वह हमारे अपने ही निर्णयों का परिणाम है, हम जैसे कर्म करेगें, जीवन वैसे ही फल देगा, उसके लिए पश्चाताप करने से कोई लाभ नहीं, ऐसा नहीं कि हम उसे बदल नहीं सकते, अगर हम अपने कर्मों एवं सोच में सुधार लाएं, तो यह बेहतर भी हो सकती है, जीवन को उतना अच्छा पा सकते हैं, जितना हम चाहते है!

अपनी महत्वाकांक्षाओं को प्राप्त करने की योजना में, किसी को अपने सपनों के बीच में बाधा बनने का मौका न दें। आपको अतीत की महान विभूतियों की जिजीविषा को समझाना होगा, जिनके सपनों ने पूरी सभ्यता को ऐसे मूल्य एवं ऐसी भावना प्रदान की, जो आने वाली पीढ़ियों की जीवन शक्ति के रूप में कार्य कर रही है।

थॉमस एडीसन ने एक ऐसे 'दिए' का सपना देखा, जो बिना तेल के जले, और हजारो विफलताओं के बावजूद, वे तब तक अपने सपने के साथ खड़े रहे जब तक उन्होंने इसे एक भौतिक सच्चाई के रूप में दुनिया के सामने प्रस्तुत नहीं कर दिया। व्यावहारिक सपने देखने वाले कभी हिम्मत नहीं हारते !

अगर आपको लगता है कि आप जो करने जा रहे हैं वो सही है, और आपको इसका पूरा विश्वास हैं, तो आगे बढ़ो और इसे पूरा करो ! सपने को सामने रखकर चलो, और अगर आपको कोई अस्थाई हार मिलती है तो उसकी परवाह न करे, चिंता न करें कि दुनिया क्या कहती है, क्योंकि वे यह नहीं जानते कि *"हर विफलता अपने साथ सफलता का एक बीज लेकर आती है"* ।

कई लोग जो जीवन में सफल होते है, वो शुरुआत में अक्सर असफल रहे हैं और सफल होने से पहले कई शोकाकुल संघर्ष से गुजरे होते होते हैं। जो सफल हुए हैं उनके जीवन का महत्वपूर्ण मोड़, आमतौर पर किसी संकट की घटना के बाद आता है, जिसके माध्यम से वे खुद अपने को पहचान पाते हैं।"

अब्राहम लिंकन ने चुनाव में कई हार झेली और निजी जीवन में निराशाएं सही। लेकिन अंत में वह अमेरिका के महान राष्ट्रपतियों में से एक बन गए।

चार्ल्स डिकेंस ने बर्तन पर लेबल चिपकाने से अपन जीवन शुरू किया। अपने पहले प्यार की त्रासदी ने उनकी आत्मा की गहराई झकझोर दिया, और उन्हें दुनिया के महान लेखकों में से एक बना दिया। इस त्रासदी ने पहले, डेविड कॉपरफील्ड पैदा किया, फिर जिन्होंने इनकी किताब पढ़ी, दूसरे अन्य कार्यों से इस दुनिया को और अधिक अमीर एवं बेहतर बना दिया।

हेलेन केलर जन्म के कुछ समय बाद ही बहरी, गूंगी और अंधी हो गई। उनके इस असहनीय दुर्भाग्य के बावजूद, वह अत्यधिक सम्मानित महान लेखिका, राजनीतिक कार्यकर्ता और प्राध्यापक के रूप में जानी जाती थीं। कला में स्नातक की डिग्री पाने वाली वह पहली मूक-बधिर व्यक्ति थीं।

बीथोवेन बहरेपन के बावजूद एक महान संगीतकार थे। जॉन मिल्टन अंधे थे, लेकिन एक महान कवि के रूप में जाने जाते हैं जिन्होंने 'पैराडाइस लॉस्ट' जैसी कविता लिखी। उनका नाम सदियों तक बना रहेगा, क्योंकि उन्होंने सपने देखे और उन्हें विचारों में पिरो कर अपने सपने को रूपांतरित किया।

जीवन का मार्ग अत्यंत अजीब और विविध है, जिन पर चलने वालो को कई बार खुद को पहचानने और अपनी क्षमता की खोज से पहले अपने आपको हर प्रकार की आत्म-पीड़ा से गुजरने के लिए मजबूर होना पड़ता है

अगले अध्याय की ओर बढ़ने से पहले, आप अपने मन में आशा, विश्वास, साहस और दृढ़ता का दीपक जला लें। अगर आपने उपर्युक्त सभी वर्णित सिद्धांतों का कार्यसाधक ज्ञान अपने मन में बैठा कर मानसिक रूप से अपने आप को तैयार कर लिया है, तो बाकी सब कुछ जो आपको चाहिए, आपके तैयार होते ही, आपको मिल जाएगा।

-*-

अध्याय 4

विश्वास – जो पर्वतों को भी हिला दे

अरबों सालों से अनंत ब्रह्मांड में घूम रहे अनगिनत ग्रहों और तारों के घूमने की रहस्यमय अदृश्य शक्ति के पीछे क्या कारण है? हमारे जीवन और मृत्यु की शक्ति स्रोत क्या है?

हम देखते हैं कि ब्रह्मांड अराजक नहीं है, बल्कि सुव्यवस्थित है। अति प्राचीन काल से, आदमी अलौकिक शक्तियों में विश्वास रखता है जिसके माध्यम से, और जिसके द्वारा सभी वस्तुओं का सृजन, निरंतरता और विखंडन हुआ है। हम इस महान शक्ति को सत्य या चेतना कह सकते हैं। सीधे शब्दों में हम इस शक्ति को 'भगवान' भी कह सकते हैं।

> गांधीजी के शब्दों में "*कोई अवर्णनीय रहस्यमय शक्ति है जिसमें सब कुछ व्याप्त है। मैं इसे महसूस करता हूँ हालांकि मैं इसे देख नहीं पाता। यह वो अदृश्य शक्ति है जो खुद को महसूस कराती है और सभी साक्ष्यों को खारिज कर देती है, क्योंकि ये इस प्रकार की है कि मैं इसे अपनी इंद्रियों से ही महसूस कर पाता हूँ। यह शक्ति मेरी चेतना का अतिक्रमण कर लेती है।*
>
> *लेकिन भगवान के अस्तित्व का पता लगाना एक सीमित हद तक ही संभव है । यहाँ तक कि साधारण तौर हम जानते हैं कि लोगों को यह पता नहीं है कौन संचालित कर रहा है या क्यों, और कैसे संचालित कर रहा है। और फिर भी हम इतना जानते हैं कि एक शक्ति है जो निश्चित रूप से शासन कर रही है है। पिछले साल के मेरे मैसूर दौरे में मेरी कई गरीब ग्रामीणों से मुलाकात हुई और मैंने देखा कि वे नहीं जानते कि मैसूर पर किसका शासन है। उन्होंने सिर्फ यह कहा कि कोई भगवान शासन कर रहे हैं। यदि इन गरीब लोगों का ज्ञान उनके शासक के बारे में इतना सीमित था, तो मुझे चकित होने की आवश्यकता नहीं है यदि मैं भी भगवान की उपस्थिति का एहसास नहीं कर पाता, क्योंकि मैं तो भगवान के बारे में बहुत कम जानता हूँ।*
>
> *फिर भी जैसा कि मैसूर के बारे में गरीब ग्रामीण जनता महसूस करती हैं, उसी प्रकार मैं महसूस करता हूँ कि ब्रह्मांड में अत्यंत सुव्यवस्था है, कोई अपरिवर्तनीय शासन है जो सभी द्रव्यों, सभी चीजों, जो भी मौजूद या जीवित है, पर शासन कर रहा है। यह कोई अंधा कानून नहीं है; कोई भी अंधा कानून जीवित प्राणियों पर शासन नहीं कर सकता। सर जे.सी. बोस के उस अद्‌भुत शोध को हृदय से धन्यवाद, जिससे अब यह साबित किया जा सकता है कि द्रव्यों में भी जीवन है । वो कानून जो सभी के जीवन को नियंत्रित करता है, भगवान है। कानून और कानून बनाने वाला एक हैं। मैं कानून या कानून बनाने वाले के अस्तित्व से इनकार नहीं कर सकता है, क्योंकि मैं इसे या इसके बारे में बहुत कम जनता हूँ ।*
>
> *हालांकि सांसारिक शक्ति के होने के बारे में, मेरे इनकार या अस्तित्व की अज्ञानता से मुझे कुछ भी मिलने वाला नहीं, इसलिए मैं भगवान के अस्तित्व से इनकार नहीं करूँगा और उसकी व्यवस्था ने मुझे अपने संचालन से स्वतंत्र रखा है; जबकि दिव्य शक्ति की विनम्र और मूक उपस्थिति जीवन की यात्रा को आसान बनाती है, जैसाकि सांसारिक शासन की उपस्थिति जीवन को आसान बनाती है । मैं आधे मन से यह मानता हूँ कि हालाँकि मेरे चारों ओर सब कुछ बदल रहा है, सभी कुछ ख़त्म हो रहा है, यह सभी इंगित करते हैं कि एक ऐसी अपरिवर्तनीय जीवन-शक्ति है जो इस परिवर्तन*

का संचालन करके जीवन देती है, जो है, जिसने सभी को पकड़ रखा है, वो सृजन करती है, विनाश करती है और पुनर्सृजन करती है। हमें सूचित करती है कि शक्ति या सत्य ही 'भगवान' है।

क्या यह शक्ति उदार है या अनिष्ट ? मैंने पाया है कि यह विशुद्ध रूप से हितकारी है। मैं देख सकता हूँ कि मृत्यु के बीच जीवन कायम रहता है, असत्य के बीच सत्य कायम रहता है, अंधकार के बीच रोशनी मौजूद रहती है। इसलिए मैं मानता हूँ कि भगवान ही जीवन है, सत्य है, प्रकाश है। वह प्रेम है। वे सर्वेश्वर है"।

हमने पिछले अध्याय में यह सीखा है कि विचारों को इच्छाओं की तरह भावनात्मक होना चाहिए जिससे उन्हें कार्यरूप दिया जा सके। अब, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि केवल इच्छाएं ही हैं जो विश्वास के मिश्रण से स्वयं को भौतिक रूप में परिवर्तित कर के सक्रिय हो जाती हैं।

खुद पर विश्वास रखें और भगवान पर भी विश्वास रखें ।

विश्वास की शक्ति को समझे, जैसा कि गांधीजी द्वारा उसे समझ कर प्रदर्शित किया गया था। गांधीजी अपने समय के जीवित व्यक्तियों ने सबसे अधिक शक्तिशाली थे, इस तथ्य के बावजूद कि उनके पास कोई भी पारंपरिक साधान जैसे बंदूक, किले, युद्धपोत, सैनिकों आदि नहीं थे ।

गांधी जी ने वैचारिक शक्ति से ही पृथ्वी पर सबसे शक्तिशाली सैन्य शक्ति का सफाया किया, जो किसी भी सैन्य शक्ति तथा सैन्य ताकत से कभी खत्म नहीं हो सकती थी। उन्होंने मात्र वैचारिक शक्ति के माध्यम से ही लाखों लोगों के मस्तिष्क को एक साथ सोचने और एक दिशा में काम करने की शक्ति का सृजन करके चौंकाने वाली उपलब्धि हासिल की। ईश्वर पर आस्था ही सभी क्षेत्रों में उनके कार्यों का मार्गदर्शन करती रही; ईश्वर में आस्था के बिना वे अपनी जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते थे ।

उनके शब्दों में "*मैं उनके अस्तित्व को लेकर उसी तरह आश्वस्त हूँ जैसा कि यह तथ्य कि मैं और आप इस कमरे में बैठे हैं। मैं यह भी साबित कर सकता हूँ कि हवा और पानी के बिना तो मैं रह सकता हूँ परन्तु ईश्वर के बिना नहीं। आप मेरी आँखे निकाल सकते हैं, लेकिन इससे मैं मरूँगा नहीं, आप मेरी नाक काट सकते हैं, परन्तु मै इससे मर नहीं जाऊंगा। लेकिन यदि ईश्वर से मेरा विश्वास खत्म हो गया तो मुझे मरा ही मानिये"।*

गांधीजी के लिए आस्था, किसी वजह से विरोध करने के लिए नहीं थी, वरन उस वजह का अंत करने के लिए थी, जिससे आस्था की शुरुआत का मार्ग प्रशस्त हो सके। उनके अनुसार "कुछ ऐसी चीज़े हैं जिनके होने के कारण हमें नहीं मिलते और हमें उन चीज़ों को आस्था के आधार पर स्वीकार करना पड़ता है। इसके पश्चात् आस्था के विरोध का कारण नहीं रहता, लेकिन एक प्रकार का अतिक्रमण रहता है"।

अधिकांश लोग केवल सर्वत्र असफल होने के बाद ही प्रार्थना का सहारा लेते हैं। इस प्रकार भय और संदेह से भरे मन से प्रार्थना करते हैं और उनके अवचेतन-मन में स्थापित नकारात्मक भावनाएं भगवान तक जाती हैं । वे बिना आस्था के अर्थहीन शब्दों के अनुष्ठान द्वारा प्रार्थना करते हैं, परिणाम यह होता है कि ईश्वर से उनका संवाद हो ही नहीं पता ।

विश्वास "अमृत" है जो हमारे विचारों को जीवन, शक्ति और कार्य को आवेग देता है । आस्था एक तत्व है, एक ऐसा रासायन है जो, जब प्रार्थना के साथ मिल जाता है, तो सीधे ईश्वर से संचार करा देता है । आस्था सभी चमत्कारों का आधार है और समस्त चमत्कारों को विज्ञान के नियमों द्वारा विश्लेषित नहीं किया जा सकता है ।

आस्था का विकास कैसे होता है ? आस्था 'एक मानसिक स्थिति' है जिनका प्रार्थना द्वारा बीजारोपण होता है ।

लेकिन क्या भगवान हमारी प्रार्थना सुनते हैं तथा हमारी इच्छाओं को पूर्ण करते हैं? एक बुद्धिमान व्यक्ति के लिए यह तर्कहीन और हास्यास्पद लगता है । अगर यह सत्य है तो भगवान प्रार्थना करने वालों के लिए पक्षपात करता है।

नहीं यह सत्य नहीं है। प्रार्थना की शक्ति का अवश्य ही कुछ गहरा मतलब है ।ऐसा मानना तार्किक है कि भगवान निकम्में आलसियों की नहीं सुनता । ईश्वर प्रेम है, परन्तु वह अपनी दिव्य कृपा उन्हीं को देता है जो प्रार्थना और अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए निरंतर प्रयासरत रहते हैं ।

> एक बार गांधीजी ने पूछा "*आप सब प्रार्थना क्यों करते हैं? अगर भगवान नहीं है, तो क्या कोई जानता हैं कि अब क्या होने वाला है ? क्या भगवान को उसका कर्तव्य याद दिलवाने के लिए प्रार्थना की आवश्यकता है ? नहीं, भगवान को याद नहीं दिलाना पड़ता। वो हम सब में है। उसकी आज्ञा के बिना कुछ भी नहीं हो सकता। बिना प्रार्थना के कोई भी प्रयास सफल नहीं होता – एक निश्चित मान्यता है कि मानव का बेहतर प्रयास भी प्रभावपूर्ण नहीं होता है यदि ईश्वर का आशीर्वाद उसके साथ न हो। प्रार्थना मानवीयता लेकर आती है। इसे ही आत्मशुद्धि या आत्मचिंतन कहा जाता है।*"

किसी व्यक्ति ने एक बार से गांधीजी पूछा "*महोदय, आप प्राय: भगवान की पूजा करने को कहते हैं लेकिन, कभी यह नहीं बताया कि कैसे और किसकी पूजा करें। कृपया आप इस प्रकाश डालेंगे?*"

> गांधी जी ने उत्तर दिया, "*भगवान की पूजा करना भगवान का स्तुति गान है। प्रार्थना हमारी सीमाओं और विनम्रता की स्वीकारोक्ति है । भगवान के हजारों नाम हैं, या यों कहें कि, वह अनाम है । हम किसी भी नाम से उसकी पूजा कर सकते हैं जो भी नाम हमें खुशी दे । कोई राम बुलाता है, कोई कृष्ण कोई अल्लाह बुलाता है, यहाँ कि कोई सिर्फ भगवान बुलाता है। सभी एक ही भावना से पूजा करते हैं, लेकिन जैसा कि सभी प्रकार का खाना सबको स्वीकार्य नहीं होता, उसी तरह सभी नाम भी सबको स्वीकार्य नहीं हैं। अपनी–अपनी प्रवृत्तियों के अनुसार लोग अपने भगवान का नाम चुनते हैं और वह हमारे भीतर होने के नाते, सर्वशक्तिमान है और सर्वज्ञ हमारी अंतर भावनाओं को जानता है और उसी के अनुसार प्रतिक्रिया करता है*"।
>
> *वास्तव में, पूजा या प्रार्थना, होठो के उच्चारण से नहीं की जाती, हृदय से की जाती है तथा यही कारण है कि गूंगे और हकले, अज्ञानी एवं मूर्ख द्वारा इसे समान रूप से इसे किया जा सकता है। जिनकी जबान बहुत मधुर होती है परन्तु जिनका मन विष से भरा होता है, भगवान उनकी नहीं सुनते। इसलिए जो भी भगवान की पूजा करना चाहता है उसे अपना हृदय अवश्य साफ रखना चाहिए। राम का नाम हनुमानजी के न केवल मुख पर था अपितु उन्होने इसे अपने हृदय में विराजित कर लिया था। उन्होंने हनुमानजी को असीमित शक्ति प्रदान की । उनकी ही शक्ति थी कि हनुमान जी ने पर्वत को उठा लिया और समुद्र लांघ गए।*
>
> *यह विश्वास ही है जो हमें तुफानी समुद्र से बाहर निकाल लेता है, जो पर्वत पर चढ़ा देता है और विश्वास ही है जो समंदर लंघा सकता है । विश्वास कुछ और नहीं अपितु स्वयं में भगवान की जीवित, व्यापक, जाग्रत चेतना है जिसने विश्वास को पा लिया, उसे और कुछ भी नही चाहिए । यद्यपि वह शारीरिक रूप से रोगग्रस्त हो सकता है, पर वह आत्मिक रूप से स्वस्थ होता है, भौतिक रूप से शुद्ध और आध्यात्मिक रूप से धनी होता है।*

अत: पूजा, किसी भी नाम से की जा सकती है । प्रार्थना से परिपूर्ण हृदय एक वाहन के सामान है और सेवा हृदय को प्रार्थनापूर्ण बनाती है । जो हिंदु इस युग में सच्चे हृदय से अछूतो की सेवा करते हैं, वास्तव में वो सच्ची प्रार्थना करते हैं; जो हिंदु और अन्य दूसरे जो स्वदेशी कपड़ों के लिए चरखा चलाते हैं, वे गरीबों के लिए प्रार्थना करते हैं और वास्तव में ये ही गरीबों के लिए सच्ची प्रार्थना है।"

'भक्ति योग' अध्याय में व्याख्यायित प्रेम की भावना बिल्कुल विश्वास या आस्था के समान है, और इसी कारण प्रेम किसी के विचार को भौतिक परिवर्तन के आवेग में बदलकर उन्हें नजदीक ले आता है। 'आस्था' और 'प्रेम' की भावना सभी सकारात्मक भावनाओं से अधिक शक्तिशाली होती है। जब ये दोनों मिल जाती है, तो उनका विचारों के स्पंदन की सक्रियता पर गहरा प्रभाव पड़ता है, जिसके परिणामस्वरूप यह तुरंत अवचेतन–मन तक पहुँच जाता है जहां यह अपने भौतिक रूप या वास्तविकता में परिवर्तित हो जाता है ।

–*–

अध्याय 5
बुद्धि - ज्ञान का उपयोग

प्राचीन काल से ही लोगों ने पेड़ो से फलों को गिरते देखा है। केवल न्यूटन ही सोच सका "क्यों"? और उसने गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत का अविष्कार किया। बहुत से लोग भी आश्चर्यचकित होते हैं कि क्यों बरगद जैसे बड़े पेड़ो पर छोटे फल लगते हैं, जबकि लताओं और बेल जैसे कमजोर पोधोंपर कद्दू जैसी बड़ी-बड़ी सब्जियां लगती हैं, लेकिन वे लोग जो इनके नीचे बैठते हैं यह कल्पना कर सकते हैं कि यदि ऐसा होता तो क्या परिणाम होता। अगर एक विशाल फल उनके सिर पर गिर जाता ओर वे भगवान के इस सृजन के कारण पर आश्चर्य करते।

यह कहा जा सकता है कि जिसने आग को देखा या सुना नहीं है, अबोध है। वो जिसने आग को कभी देखा नहीं, किंतु उसके गुणों के बारे पढ़ा है उसे विद्वान है। और वह जो जानता है कि आग कैसे उत्पन्न करते हैं और उसका कैसे उपयोग करते है, वे ज्ञानी हैं।

अंग्रेजी का 'एजुकेशन' शब्द लेटिन भाषा के 'एडुको' (educo) से लिया गया है जिसका अर्थ है 'स्वयं का विकास करना' अथवा 'बाहर निकालना'। शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य है कि मनुष्य अपनी कमियों का पता लगा कर, उनके सुधार का तरीका अपना कर, अपनी श्रेष्ठ प्रतिभा को बाहर लाए। परन्तु इस ज्ञान की कमी के कारण बहुत से छात्रों को डिग्री और रैंक पाने के बाद भी जीवन में संघर्ष करना पड़ता है। एक छात्र जिसने इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग की परीक्षा स्वर्ण पदक ले कर पास की हो, अगर वह एक 'फ्यूज' उड़ने जैसी छोटी समस्या का समाधान प्रस्तुत नहीं कर पाता और दूसरों की मदद करने में असफल हो जाता है, तो ऐसी शिक्षा का क्या लाभ।

अगर हम एक सफल कारोबारी बनना चाहते हैं, तो हमें पता होना चाहिए कि किस प्रकार दूसरों की समस्याओं का समाधान निकलना है या बेहतर सेवाएं या वस्तुएं प्रदान करनी हैं। ज्ञान के माध्यम से ही यह समझा जा सकता है कि उपलब्ध जानकारी का वास्तवकि स्थिति में कैसे उपयोग करना है।

गांधीजी ने कानून की पढ़ाई की थी एवं अपने पूरे जीवन में बहुत सी आध्यात्मिक किताबें भी पढ़ी। गांधी जी के भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में आने से पूर्व, बहुत से लोग ब्रिटिश के साथ लड़ाई कर रहे थे। लेकिन यह गांधी जी का ज्ञान था जिसने उन्हें भीड़ से अलग खड़ा किया। वे ब्रिटिश हुकुमत की शक्तियों और कमियों को जानते थे और अपने लोगों की भी। राजनीति के मैदान में गांधी के उभरने के पूर्व राजनीति को अभिजात वर्ग का खेल माना जाता था। मध्यम वर्ग और आम जनता राजनीति से काफी दूर थे। गांधीजी जानते थे कि वह एक साधारण जीवन जी कर ही लोगों के दिलों को छू सकते हैं और इसके लिए उन्हें खुद को जनसामान्य के बीच खुद को उपलब्ध कराना होगा।

गांधी जी ने स्वतंत्रता संघर्ष के लिए अपने शास्त्रज्ञान और आध्यात्मिक ज्ञान का भी उपयोग किया। वे समस्या की जड़ को जानते थे ,जो धर्म का सरासर उल्लंघन है और इन्ही प्रयासों के परिणामस्वरूप भारतीय सामूहिक रूप से इसे महसूस कर सके। अगर हम दो शब्द' धर्म 'और 'कर्म 'और उनका पारस्परिक सम्बन्ध समझ जाते हैं तो हम प्राचीन काल से संतो द्वारा उपदेशित सनातन धर्म) शाश्वत सत्य (को अवश्य समझ गए होते।

कुल मिला कर, वह कारण जिसके द्वारा कोई चीज़ बनती है और जिसके बिना वो चीज न होती, उसी को 'धर्म' कहते हैं। दृष्टांत के रूप में मीठा होना शहद का धर्म है। प्रकाश एवं गर्मी आग का धर्म है। इसी प्रकार, व्यक्ति का धर्म उसकी निष्कलंकित मानवता है। जब इस मानवता में सत्य, निष्ठा, प्रेम और

दयालुता अनुपस्थित रहती है और स्वार्थता, झूठ, घृणा और भ्रष्टाचार की प्रधानता होती है, तो ऐसे व्यक्ति द्वारा उसके धर्म का उल्लंघन करना कहा जाएगा। यही अधर्म, पाप है ।

सूक्ष्म स्तर पर, धर्म, ब्रह्माण्ड में एकता और सद्भाव की चीज़ों को आश्चर्यजनक क्रम में बनाए रखने का एक शाश्वत नियम है, ताकि जीवन के कार्य अराजकता के कारण अव्यवस्थित न हो। इस विचार में ही जीवन की एकता अंतर्निहित है; बड़े मनन के पश्चात ऋषियों मनीषियों द्वारा यह खोज की गई है कि ब्रह्मांड अविभाज्य है, सभी चीजें आपस में बडे गहरे स्तर पर एक दूसरे से जुडी हैं। यही एकता संपूर्ण प्रकृति को आधारभूत संतुलन प्रदान करती है, ताकि किसी भी स्थान पर, किसी भी गड़बड़ी की स्थिति में यह सर्वत्र संकेत भेज कर उसका समाधान पा सके, जैसा कि एक बुलबुले को हल्के से छुने पर पूरी सतह पर तब तक कंपन होता है जब तक वह स्वयं को संतुलित न कर ले या फट ना जाए।

पकड़े गए नाजी सैनिकों से नूर्नबर्ग में ट्रायल के दौरान यह कहा गया कि एक अवैध आदेश का पालन युद्ध–जुर्म के आरोप के विरुद्ध वैध बचाव नहीं है। सैनिक का धर्म उन लोगों की रक्षा करना है जो स्वयं की रक्षा नहीं कर सकते। वे अपने नस्लवादी अमानवीय वरिष्ठ अधिकारियों की आज्ञा का पालन करने का औचित्य देते हुए निरीह नागरिकों को हत्या को तर्कसंगत नहीं ठहरा सकते।

नैतिक दुविधाओं अथवा नैतिक विकल्पों में, हमें "पारस्परिकता नैतिकता" अथवा 'स्वर्ण नियम' का अनुपालन करने की आवश्यकता है। यह नियम कहता है कि किसी को भी सही व्यवहार पाने का अधिकार है और अतः अन्य सभी लोगों से भी यही व्यवहार सुनिश्चित करना हमारी पारस्परिक जिम्मेदारी है। हम दूसरों से वैसा ही व्यवहार करें जैसा हम अपने लिए चाहते हैं।

दुनिया में कुछ भी ऐसे ही या बिना कारण के नहीं होता है। सब कुछ ब्रह्मांड व्यवस्था के आधार पर है, अराजकता के आधार पर नहीं। सब कुछ परिभाषित सिद्धांतों के ऊपर व्यवस्थित है तथा यादृच्छिक कभी नहीं रहा। लोग यह भूल रहे हैं कि हवा को कभी अपने हाथों में पानी की बूंदों की तरह नहीं रखा जा सकता। यद्यपि हवा से ही वर्षा और बर्फ गिरते हैं, परन्तु बिना बादल या घटा इत्यादि के नहीं। यह पूर्ववर्ती कारणों के परिपक्व प्रभाव हैं। उसी तरह के परिणाम है। इनका भी पूर्ववर्ती इतिहास होता है।

यदि मां बच्चों के लिए केक बनाना चाहती है, तो इसके लिए अच्छी पाक विधि को नियमानुसार अपनाया जाना जरूरी है। वह सही अनुपात में अपेक्षित सामग्री को मिलाने एवं सही तापमान पर पकाएं बिना अच्छे केक की उम्मीद नहीं कर सकती। इसका मतलब यह नहीं है कि उसने केक का सृजन किया है; यह प्रकृति है। वह उनसे संबंधित अपेक्षित सामग्री को सही अनुपात में मिलाती है, निर्धारित प्रक्रिया अनुसार कार्य का कारण स्थापित करती है। यह कारण एक स्वादिष्ट केक के अपेक्षित परिणाम के रूप में सामने आता है।

ऐसा ही अर्थपूर्ण जीवन बनाने में होता है। कुछ सिद्धांत एवं कारणों का पालन किया जाता है; जिसके प्रभाव से परिणाम आते हैं, लेकिन बिना कारण के कभी प्रभाव नहीं आते। ये ही कारण एवं प्रभाव का नियम है "कर्म का नियम"। कारणों के बिना प्रभाव की अपेक्षा करना मानों बिना अच्छी सामग्री के अच्छा केक बनाने की अपेक्षा करना है।

अगर हम अपना हाथ आग में डालते हैं तो हमारा हाथ जल जाता है परंतु ऐसा 'भाग्य' के कारण नहीं होता और ना ही यह 'भगवान' की प्रतिहिंसा है जो हमारा हाथ जला देती है। आग में हाथ डाला है तो हाथ जलना ही था, यह एकदम प्राकृतिक है, हाथ का जलना सामान्य रूप से अटल है और यह हमारे द्वारा किए गए कर्म के कारण का प्रकृतिक प्रभाव है । इसी प्रकार इमली का बीज बोकर सेब की फसल तो नहीं काट सकते। और हम वही काटते हैं जो हम बोते हैं, हम जो बोते हैं वही हम काटेगे।

'कर्म' जिसका शाब्दिक अर्थ है क्रिया अथवा संस्कृत में 'कृत्य'। यह कारण और प्रभाव, क्रिया और प्रतिक्रिया, अनुक्रम औरपरिणाम की विधि है। हम इसे 'उत्तरदायित्व का नियम' भी कह सकते हैं, हम सर्वदा ही अपनी हर गतिविधि, प्रत्येक क्षण, अपने सभी कृत्यों, अपने प्रत्येक शब्द एवं यहां तक कि अपने हर विचार के माध्यम से कारण की स्थापना कर रहे हैं। प्रत्येक कारण के लिए गति तय की गई है, यह समरूप और अन्योन्याश्रय प्रभाव है जो पुनः वापस आता है। ब्रह्मांड का यह वो तरीका है जो सदभाव, संतुलन और साम्यावस्था बनाए रखता है।

'कारण एवं प्रभाव के नियम' या 'कर्म' का उद्देश्य मानव को धर्मानुसार जीने देना है, दूसरों के मूल्यों पर अपने स्वार्थ हित को आगे बढ़ाना नहीं है, बल्कि संपूर्ण ब्रह्मांड के कल्याण के लिए योगदान प्रदान करना है ।

कर्म एवं पुनर्जन्म एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। हम किसी एक नहीं चुन सकते। यह स्वाभाविक है कि हमारे द्वारा अपने जीवनकाल में किये गए कर्मों के प्रत्येक कारण के प्रभाव के लिए केवल एक ही जीवन काल पर्याप्त नहीं है। ऐसा भी हो सकता है कि हमारे जीवन के कुछ पहलुओं और कुछ परिस्थितियों की उत्पत्ति का मूल इस जीवन में ना हो कर शायद पिछले जीवन में हो। भौतिक जन्म स्वयं में एक कार्मिक प्रभाव है, क्योंकि हमारे जन्म लेने के मुख्य कारणों में से एक कारण हमारे पूर्व कर्मों का फल है।

कुछ लोग सुंदरता, ऐश्वर्य, अच्छे स्वास्थ्य, बुद्धिमत्ता के साथ, अमीर देशों में जन्म लेते हैं, जबकि कुछ अन्य लोग कुरूपता, गरीबी, खराब स्वास्थ, अज्ञानता के साथ, अकाल से तबाह तथा नागरिक युद्ध वाले देशों में पैदा होते हैं। हमारे मन में यहां प्रश्न आ सकता है कि भगवान की रचना में इतनी ज्यादा असमानता भेदभाव क्यों है? वह तो भगवान हैं, ऐसा क्यों किया? वास्तव में कारण तो यह है कि लोग अपने अच्छे या बुरे कर्मों की वजह से विभिन्न परिस्थितियों और वातावरण में बार-बार जन्म लेते हैं ।

इस अर्थ में जीवन एक ही स्कूल की तरह है जहाँ कोई भी पढ़ कर स्नातक डिग्री पास कर सकता है या ज्ञान की उपेक्षा कर पीछे रह सकता है। हालांकि जब तक कर्म का कर्ज बना रहेगा, व्यक्ति उसे चुकाने के लिए पुनः आता रहेगा।

प्रत्येक प्रभाव के लिए एक कारण होना चाहिए और प्रत्येक कारण का कुछ न कुछ प्रभाव होगा, उदाहरण के लिए अगर कोई व्यक्ति अपराध करता है तो यह उसके अज्ञान का प्रभाव है और यही प्रभाव उसकी सजा का कारण बनता है।

कर्म के निम्नलिखित तीन भाग हैं:

1. संचित कर्म- यह हमारे अतीत में किए गए सभी कर्मों का कार्मिक खाता या संग्रह है जिनका फल देने का अभी तक वक्त नहीं आया है।
2. प्रारब्ध कर्म - यह उन्ही संचित कर्मों का एक विशिष्ट भाग है जिसका सामना, अनुभव और भुगतान वर्तमान जीवन में करना है। यदि सफलतापूर्वक इन फलों को भुगतान कर दिया जाता है तो कर्म के उस भाग का निपटान या सफाया हो जाता है ।
3. आगामी (क्रियान्वयन तथा वर्तमान के नाम से जाना जाता है) कर्म - यह नवीन कर्म है जो हम यहां एवं अभी सृजित कर रहे हैं, जो हम जी रहे हैं यह भविष्य में हमारे प्रारब्ध कर्मों के रूप में स्वयं को हमारे संचित कर्मों में जुडेगे एवं भविष्य में प्रकट होंगे ।

अन्य दृष्टिकोण से देखने पर, इसकी तीन संभावित व्याख्याएं मिलती हैं कि चीजे क्यों घटित होती हैं, किस प्रकार होती हैं, अथवा वैसी क्यों होती हैं।

1. ब्रह्माण्ड की सभी चीजें अचानक अथवा किसी घटना के कारण तथा बिना किसी वास्तविक कारण एवं उद्देश्य अथवा इसके पीछे किसी कारण से होती है या

2. जो भी है या सब कुछ ऊपर वाले की इच्छा से होता है; भगवान को एक छवि के रूप में बनाया गया और मानव की तरह है...अथवा

3. ब्रह्माण्ड एवं इसमें व्याप्त सब कुछ अचूक, अमोघ, निष्पक्ष और अवैयक्तिक अपरिवर्तनीय कानूनों द्वारा नियंत्रित किया जाता है;

हम नीचे दिए गए ध्वज की मदद से उत्तर की व्याख्या कर सकते हैं, कि जो वो चीजें वैसी क्यों हैं जैसी दिखती है :

	सत्य, ब्रह्मांड में सार्वभौमिक कानून शासित चेतना, समस्त गतिविधियों और सद्भाव की व्यवस्था सुनिश्चित करने के लिए
	धर्म-चक्र अर्थात अतीत, वर्तमान और भविष्य में किये गए या किये जाने वाले कर्मों से जीवन का निर्धारण
	जीवन में अव्यवस्थित घटनाएं या भगवान द्वारा पूर्व निर्धारित जीवन या हमारी इच्छानुसार अनुसार उन्मुक्त जीवन और भगवान की कोई भूमिका नहीं, भौतिकवादी जीवन, जिसकी जरूरत है, लेकिन सभी कुछ नहीं

अगर हम केवल नीचे के हरे रंग पर ध्यान केन्द्रित करें तो यह भाव प्रकट होता है कि सब कुछ अव्यवस्थित ढंग से अथवा हमारी इच्छानुसार अनुसार उन्मुक्त रूप से घटित होता है भगवान की कोई भूमिका नहीं। दूसरी ओर हमें यह विश्वास भी हो सकता है कि सब कुछ भगवान द्वारा निर्धारित है तथा हमें कोई भी प्रयास करने की आवश्यकता नहीं है।

अगर हम ऊपर धर्म चक्र पर ध्यान दें, तो हम समझ सकते हैं कि हमारा जीवन अतीत, वर्तमान और भविष्य के कर्मों का समन्वय है तथा जिस परिवार में हम पैदा हुए, हमारी रहन-सहन की परिस्थितियां, हमारे संचित कर्मों पर आधारित होती है, जो अतीत के अच्छे कर्मों का फल है। यद्यपि वर्तमान में हमें अच्छे एवं बुरे कर्मों के बीच चुनाव करने की पूरी स्वतंत्रता है, जो हमारे भविष्य के आगामी कर्मों को निर्धारित करता है। हम अतीत के कर्मों को बदल नहीं सकते परंतु वर्तमान में इनका चुनाव कर सकते हैं तथा अच्छा भविष्य बना सकते हैं। अतः यह स्वतंत्रता हमें पुनर्जन्म से बचाने तथा मोक्ष प्राप्त करने के लिए बुरे कर्मों से दूर रहने तथा अच्छे कर्म करने के लिए प्रोत्साहित करने में सक्षम बनाती है। 'चक्र' धर्म के निरंतर अभ्यास का प्रतीक है और परिणाम स्वरुप 'कर्म' ही है जो हमारी मृत्यु और पुनर्जन्म को निर्धारित करते हैं।

अगर हम ऊपर केसरिया रंग पर ध्यान केंद्रित करें तो हम समझ सकते हैं कि सत्य एवं चेतना ही सर्वोपरि हैं। हम इस शक्ति को अपना बना सकते हैं लेकिन इससे ज्यादा ऊपर अथवा इसके पार नहीं जा सकते हैं। ऐसा पहले भी जोर देकर कहा गया है कि इच्छा की नियत अच्छी होनी चाहिए, और दूसरों के कल्याण का अहित करने वाली नहीं होनी चाहिए। ऐसा इसलिए क्योंकि बुरा अस्थाई रुप से जीतता है, परंतु अंततः स्थाई रूप से धर्म की जीत होती है। हमारे राष्ट्रगान हमें यह निहित है और इस सत्य को सलाम करता है। "भारत भाग्य विधाता" भारत के भाग्य का विधाता।

व्यक्तिगत कर्म के साथ ही, पारिवारिक कर्म सामूहिक कर्म, ग्रहीय कर्म और इसी प्रकार के अन्य कर्म जुड़े है। हम यहाँ कारण दे सकते हैं कि नस्ली भेदभाव के माध्यम से गांधी जी को ट्रेन से बाहर फेंक दिया गया, जो भारत के संचित कर्म का एक भाग था एवं या उनकी स्वेच्छा थी एवं यह आगम कर्म था, जो एक भाग्य था कि किस तरह गांधीजी ने इस दुर्घटना पर इस प्रकार की प्रतिक्रिया की।

यद्यपि कर्म का सिद्धांत मानव जीवन के उतार चढ़ाव की तार्किक रूप से व्याख्या कर सकता है, परन्तु दूसरी ओर एक भारी गलतफहमी का कारण भी बनता है। कुछ लोग यह तर्क दे सकते हैं कि दलितों को बुरे कर्मों के परिणाम भुगतने देने चाहिए और हमें इसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए लेकिन ऐसी सोच हमारे सद्गुणों जैसे प्रेम, करुणा, और निह्स्वर्थाता के नाश का कारण बन जाएगी। इसके बजाय हमारे यह प्रयास होने चाहिए कि हम जरुरतमंदों की मदद करें, ताकि उनको अच्छे कर्म करने अथवा उनके अतीत के बुरे कर्मों से उबरने में उनकी मदद करने का वातावरण बन सके।

संस्कृत का एक प्राचीन कथ्य हैं "अहिंसा परमो धर्मा" अर्थात सर्वोच्च धर्म 'अहिंसा', सभी जीवों के लिए दयाभाव प्रेमभाव है, किसी भी प्रकार की हिंसा चाहे वो विचारों में हो, शब्दों में हो या कर्मों द्वारा हो, धर्म का उल्लंघन है, क्योंकि ऋषियों-ज्ञानियों की खोज के अनुसार ब्रह्मांड में अद्भुत एकता है। किसी मानव द्वारा दूसरे मानव के प्रति अस्पृश्यता हिंसा का ही एक रुप है।

गांधीजी जानते थे कि अस्पृश्यता को खत्म किए बिना स्वतंता का कोई अर्थ नहीं हो सकता, अत: उन्होंने लोगों को धर्म के अनुसार जीने का मार्ग दिखाया। उन्होंने जन साधारण से अपील कर नई शुरू की कि बहिष्कृत समुदायों के लोगों को मंदिरों, स्कूलों, गांव में प्रवेश की अनुमति देनी चाहिए तथा उनसे असमानता का व्यवहार नहीं करना चाहिए। उनसे समानता का व्यवहार करना चाहिए। उन्होंने अपील की कि उन्हें गांव के कुएं से पानी पीने देना चाहिए तथा तथा कथित 'उच्च जातियों' के लोगों को उनके साथ बैठकर खाना चाहिए। उन्होंने घोषणा की कि अस्पृश्यता एक महापाप है, इसका समाज से सफाया किया जाना चाहिए। उन्होंने जाति, धर्म, भाषा और अन्य भेदों को छोड़ कर एक छत के नीचे सभी लोगों को लाने के गंभीर प्रयास किए।

गांधीजी ब्रिटिश साम्राज्य की आर्थिक और राजनैतिक शक्तियों के पीछे का कारण भी जानते थे। उन्होंने ब्रिटिश शासन को कमजोर करने के लिए अपनी जंग की शुरुआत ब्रिटेन में बनी वस्तुओं का बहिष्कार करने तथा ब्रिटिश प्रशासन के साथ भारतीयों द्वारा असहयोग करने से प्रारम्भ की।

ज्ञान तब तक प्रभावी नहीं होता, जब तक परिभाषित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कर्म को व्यावहारिक योजना, बुद्धिमत्तापूर्ण निर्देशन के माध्यम से प्रभावी रूप से कार्यान्वित ना किया जाए। यह सोच कर कि "ज्ञान ही शक्ति है," लाखो लोग डिग्री प्राप्त करने को ही 'ज्ञान' समझ लेते हैं, पर यह समझ की कमी ही है कि उस 'ज्ञान' से जीवन में सफलता कैसे हासिल की जाए, इससे अनभिज्ञ रहते है। शक्ति मात्र 'ज्ञान' के 'संचय' में नहीं, वरन उसके उपयोग में है।

यह जरूरी नहीं है कि शिक्षित व्यक्ति वही होता है जिसके पास व्यापक ज्ञान है। ज्ञान अर्जित कर के उसे अपने मस्तिष्क में सीमित कर लेने से भी कोई व्यक्ति शिक्षित नहीं हो जाता। शिक्षित व्यक्ति वो है जिसके पास यह ज्ञान है कि उसे अपना लक्ष्य कैसे प्राप्त करना है, यदि इसमें अन्य लोगों का सहयोग लेना आवश्यक है तो वह सहयोग लेता है (जैसाकि 'अलौकिक मन' अध्याय में वर्णित है) ।

पिछले पैराग्राफ से उन महत्वाकांक्षी व्यक्तियों को अवश्य आशा और प्रोत्साहन मिला होगा, जिनके मन में कुछ हासिल करने की तमन्ना है, पर उन्होंने वह अपेक्षित शिक्षा प्राप्त नहीं की है जिससे उन्हें वो आवश्यकता ज्ञान मिल सके, जिसकी उन्हें जरुरत है । कुछ व्यक्ति जीवन भर हीन भावना से ग्रसित रहते हैं क्योंकि उन्होंने उच्च "शिक्षा" नहीं प्राप्त की होती। जो व्यक्ति "लौकिक मन" के उन व्यक्तियों के समूह को संगठित और निर्देशित

कर सकता है, जिन्होंने जीवन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अपेछित ज्ञान अर्जित किया हुआ है, तो वह व्यक्ति उस समूह के किसी भी व्यक्ति के बराबर ज्ञानी है। याद रहे, अगर आप हीन भावना से ग्रसित हैं तो इसका मतलब है आप की शिक्षा सीमित है।

सबसे पहले, आप अपने उद्देश्य का निर्धारण करते हुए यह निर्णय लें कि आपको किस प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता है। आपके जीवन के प्रमुख लक्ष्य और उद्देश्य ही बृहद सीमा तक यह निर्धारित करेंगे कि आपको कितने एवं किस प्रकार के ज्ञान की जरूरत है। इस प्रश्न के समाधान होने के बाद आपका अगला कदम ज्ञान के विश्वसनीय स्रोतों से संबंधित सही सूचना एकत्र करना है। इनमें महत्वपूर्ण तथ्य इस प्रकार हैं :

क) . अपना खुद का अनुभव और शिक्षा

ख) . अर्जित सूचनाएं (पुस्तकालय में किताबों और इंटरनेट के माध्यम से प्राप्त, जिनमें सभ्यता द्वारा संचित ज्ञान भी शामिल हो सकता है)

ग) . दूसरों (लौकिक मन वाली टीम) के सहयोग के माध्यम से उपलब्ध ज्ञान और अनुभव। आठवें अध्याय में इस विषय पर गहराई से चर्चा की गई है ।

ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात, उसका उपयोग परिभाषित उद्देश्य के लिए व्यावहारिक योजनाओं के माध्यम से सुव्यवस्थित ढंग से किया जाना चाहिए। ज्ञान का मूल्य तब तक नहीं है जब तक इसका प्रयोग करके उससे कुछ बहुमूल्य परिणाम प्राप्त ना हो जाए। ज्ञान स्वयं लागू नहीं होता। इसके लिए एक व्यक्ति के रूप में हम अनुप्रयोग अवश्य कर सकते हैं और यह अनुप्रयोग जीवन उद्देश्यों हेतु उत्पन्न विचारों में निषेचित होते हैं।

ज्यादातर लोगों द्वारा 'समय' और 'विचारों' को लक्ष्यहीन प्रयासों में नष्ट कर दिया जाता है, यदि किसी विशिष्ट उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए इनका उचित दिशा में उपयोग किया जाए तो इसके चमत्कारी परिणाम सामने आएँगे। इसको प्राप्त करने के लिए, यह आवश्यक है कि आप अन्य सभी विचारों से अपने ध्यान हटाते हुए अपने मानसिक बल को विशिष्ट विचारों पर केंद्रित करें और वहीं पर ध्यान केन्द्रित रखे।

सफल व्यक्ति, चाहे किसी भी व्यवसाय के क्यों न हों, अपने मुख्य उद्देश्य, कारोबार और व्यवसाय से संबंधित ज्ञान प्राप्त करने से स्वयं को कभी नहीं रोकते। समान्यतः वे लोग जो सफल नहीं है, ऐसा विश्वास रखने की गलती करते हैं कि स्कूल की शिक्षा ख़त्म होते ही ज्ञान अर्जित करने की अवधि भी खत्म हो गई है। वास्तव में, स्कूल जाना यह सीखने का प्रथम चरण है कि किस प्रकार निरंतर व्यवहारिक ज्ञान प्राप्त किया जाए।

जो व्यक्ति केवल इसलिए पढना छोड़ देता है कि स्कूल खत्म हो गया है, उसका जीवन आशाहीनता में बर्बाद हो जाता है, चाहे वह किसी भी प्रकार की आजीविका क्षेत्र में क्यों ना कार्य करता हो। सफलता का मार्ग ज्ञान प्राप्ति की निरंतरता तथा उसके उचित अनुप्रयोग मन है ।

बीते हुए कल की चिंता करते हुए हमें अतीत में नहीं रहना चाहिए। हम उन्हें बदल नहीं सकते, हमें यह सीखना है और हमें परिणामों को स्वीकार करते हुए उसके लिए तैयार रहना चाहिए।

भविष्य में जो हो सकता है, के बारे में भी हमें चिंता नहीं करनी चाहिए, अगर कोई अच्छी चीज होनी है तो वह एक सुखद आश्चर्य के रूप में सामने आएगी, यदि भविष्य में कुछ बुरी चीजे होनी है तो उसकी चिंता करके अपने वर्तमान को महादुख देने की पीड़ा देने से बचना चाहिए।

भविष्य वर्तमान पर निर्भर करता है यदि हम वर्तमान में सुधार करें तो हमारा बेहतर भविष्य हो सकता है। जीवन में कैसे सदगुण होने चाहिए ताकि हम अपने वर्तमान जीवन को सुधार सकें। बाद के अध्यायों से हम यह सीख सकते हैं ।

–*–

अध्याय 6
कल्पना – मन की सृजनशाला

"कल्पना, ज्ञान से कहीं अधिक शक्तिशाली है, क्योंकि हम सभी जानते हैं कि ज्ञान सभी के लिए सीमित है पर कल्पना की कोई सीमा नहीं है, वो पूरी दुनिया को अंतर्निहित करती है तथा सभी को कभी न कभी इस ज्ञान को जानना या समझना होगा।"

कल्पना मन का क्षेत्र है, जहां व्यक्ति वो चीज़े देख सकता है जो एक दुनिया में अब तक मौजूद नहीं हैं, परन्तु एक दिन अवश्य होंगी। जैसे, बिल गेट्स ने विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम की कल्पना की थी। वे स्प्रेडशीट, वर्डपैड, नोटपैड इत्यादि फीचर्स को पहले ही अनुमान लगा सकते थे।

कल्पना को फंतासी दुनिया या दिवास्वप्न के साथ भ्रमित नहीं होना चाहिए, जैसा कि कई लोग इसमें लिप्त रहते हैं। दिवास्वपन समय बर्बाद करने जैसा है, जबकि कल्पना क्रिया द्वारा अनुपालित होने वाले विचारों के संगठन का एक रूप है ।

सामान्य रूप से लेखकों, कलाकारों और संगीतकारों में महान कल्पनाशीलता होती है। लेखक अपने दिमाग में चरित्र, स्थान, पृष्ठभूमि और पटकथा को सृजित करता है। एक संगीतकार को कई संगीतवाद्य यंत्रों को मिलाकर अपने दिमाग में महान संगीत का सृजन करना होता है ।

मनुष्य हर कल्पना की जा सकने वाली चीज को सृजित या हासिल कर सकता है। कल्पना मस्तिष्क की कार्यशाला है जहां सभी योजनाएं मनुष्यों द्वारा बनाई जाती हैं। विचार ''इच्छा'' को आवेग देता है, जो मन की कल्पना की आंतरिक शक्ति की सहायता से, इसके आकार, रूप, और क्रियान्वयन की प्रक्रिया निष्पादित करता है ।

अपनी कल्पना की आंतरिक शक्ति की सहायता से मनुष्य अविष्कार करता है और प्रकृति के बलों का उपयोग करता है । जानवरों, मछलियों और पक्षियों की तुलना में कही अधिक मानव द्वारा जमीन, पानी और हवा पर सम्राज्य कायम किया जा चुका है, यहाँ तक कि उन्हें दौड़ने, तैरने और उड़ने में भी पीछे छोड़ दिया है। लक़डियों को आपस में रगड़ कर आदिमानव ने आग को जन्म दिया, पहिये का अविष्कार, वाहन, टेलीफोन, इंटरनेट, एटीएम आदि विचारों और कल्पनाओं के ही उदाहरण है, जिन्होंने दुनिया को बदलकर रख दी ।

कल्पना दो रूपों में कार्य करती है; संयोगात्मक अथवा संश्लेषित कल्पना (हम आगे इसे संयोगात्मक कहेंगे) और रचनात्मक कल्पना।

1. **संयोगात्मक कल्पना:** इस अतिरिक्त शक्ति के माध्यम से, आप पुरानी अवधारणाओं, विचारों, या योजनाओं को नए संयोगों में परिवर्तित कर सकते हैं। इस शक्ति का विकास अनुभव, शिक्षा और समीक्षा के समन्वय, जिनके साथ यह सिचिंत है, से होता है । सामान्य व्यक्तियों द्वारा ज्यादातर इसी आंतरिक शक्ति का उपयोग किया जाता है ।

2. **रचनात्मक कल्पना:** रचनात्मक कल्पना की आंतरिक शक्ति का उपयोग ज्यादातर लोग अपनी पूरी जिंदगी के दौरान कभी नहीं कर पाते, और यदि किसी व्यक्ति द्वारा इसका प्रयोग किया भी जाता है तो आमतौर यह पर मात्र संयोगवश होता है। महान नेता, लेखक, संगीतकार, और कवि

इसलिए महान बनते हैं, क्योंकि उन्हें अपने "अंतर्मन की आवाज" पर भरोसा करने की आदत है, जो रचनात्मक कल्पनाशीलता की आंतरिक शक्ति के माध्यम से अंतर्मन से बोलती है।

जब कोई विचार अथवा उत्तर किसी के मन में आते हैं तो वे निम्नलिखित किसी एक या अधिक स्त्रोतों से आते हैं : -

1. अवचेतन-मन, जिसमें हर विषय से सम्बंधित भावनाएं या विचार आवेग मानव की पांच इंद्रियों के माध्यम से मस्तिष्क में संग्रहित होते रहते हैं।

2. किसी अन्य व्यक्ति के चेतन-मन के माध्यम से अथवा अवचेतन-मन के माध्यम से निकला कोई विचार अथवा किसी अवधारणा के चित्र का उसके मस्तिष्क में सृजन।

3. प्रेरणा

उदाहरण के लिए बेंजीन कच्चे तेल का एक प्राकृतिक घटक है। बेंजीन का प्रायोगिक सूत्र बहुत बाद में पता चला, कि यह प्रत्येक कार्बन परमाणु के लिए केवल एक हाइड्रोजन के साथ उच्चतम पॉल्यून सेचुरेडेट संरचना है, जिसकी व्याख्या करना चुनौतीपूर्ण है। बहुत सालों बाद इसे एक जर्मन केमिस्ट, फ्रेडच अगस्त केकुले द्वारा व्याखित किया गया। एक बार केकुले ने कहा था कि उन्होंने कुण्डली मारकर बैठने वाले सांप की कल्पना के बाद बेंजीन अणुओं के गोल आकार की खोज की थी।

गांधी जी के जीवन में भी ऐसे बहुत से उदाहरण है जहां से गांधी जी को प्रेरणा मिली। जनवरी 1930 में गांधी जी इसी उहापोह में थे कि स्वतंत्रता संघर्ष में आगे क्या करना है। उन्होंने कई रातें बिना सोए गुजार दी और बेचैन रहे। फरवरी के मध्य उनका ये मानसिक संघर्ष खत्म हुआ और उनके दिमाग में एक विचार आया कि अगली लड़ाई नमक सत्याग्रह के माध्यम से की जाएगी।

नमक समुद्र तट के पास आसानी से बनाया जा सकता था और रोजमर्रा की जिंदगी में गरीब से गरीब लोग भी नमक का उपयोग करते हैं। ब्रिटिश सरकार नमक बनाने और बेचने पर कर लगाती थी। गांधी जी ने सोचा कि लोगों द्वारा ऐसे करों को देने से मना करना ब्रिटिश सरकार के प्रति उनके विरोध को प्रदर्शित कर सकेगा। उन्होंने लाइन में खड़े लोगों की भीड़ को नमक बनाते, बेचते और खरीदते हुए देखने की कल्पना की। अगर सरकार ने उनके स्वयं सेवकों को गिरफ्तार किया और सजा दी तो सत्याग्रह मजबूत हो जाएगा। जैसा कि गांधीजी ने कल्पना की थी, "नमक सत्याग्रह" सफल हुआ।

एक बार गांधीजी ने कहा था, *"मेरा यह दावा कि मैं भगवान को सुनता हूँ, यह कोई नया दावा नहीं है। दुर्भाग्य से कोई ऐसा तरीका भी नहीं है कि मै परिणाम मिलने के अलावा किसी और तरीके से अपने दावे को साबित कर सकूं। भगवान, भगवान नहीं रह जाएगा, अगर वो खुद बनाए गए जीव को यह अनुमति दे दे कि वे 'उसको' किसी वस्तु की तरह साबित करे। परन्तु 'वो' (भगवान) उनमें विश्वास करने वाले लोगों को अथक इच्छाशक्ति प्रदान करता है जिससे वे जीवन की विभिन्न अग्नि परीक्षाओं से सफलता पूर्वक गुजर सकें। मैं आधी से अधिक शताब्दी से अधिक इस कठोर गुरु का अपनी इच्छा से गुलाम रहा हूं। समय बीतने के साथ-साथ उनकी आवाज और ज्यादा स्पष्ट सुनाई देने लगती है। मेरे बुरे दिनों में भी उन्होंने मेरा कहीं त्याग नहीं किया। उन्होंने प्राय: मुझसे भी मेरी रक्षा की और स्वतंत्रता की खोज के प्रयासों में भी मेरा साथ नहीं छोड़ा। उनके प्रति अपार समर्पण ही मेरे लिए अपार आनंद की प्राप्ति है।"*

गांधी जी के असहयोग आन्दोलन, विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार, भारत छोड़ो आंदोलन भी इसी प्रेरणा या कल्पनाशीलता से सृजित हुआ है। ब्रिटिश सरकार सूती एवं अन्य कच्चे माल भारत से ब्रिटेन भेजा करती थी। ब्रिटिश सरकार ऐसे तरीके अपनाती थी कि भारतीय निर्माताओं को किसी भी तरह से अपनी फैक्ट्री के लिए अथवा अत्याधिक मेहनती कारोबार के लिए मशीनों का आयात करना असंभव हो जाए। ऐसी व्यवस्था ने

भारतीय उद्योगों, रोजगार और क्रय शक्ति को पूरी तरह से बर्बाद कर दिया। गांधी जी ने ब्रिटिशों के शोषण के विरुद्ध ब्रिटिश कपड़ों का बहिष्कार करने और भारतीय निर्माताओं एवं खादी को बढ़ावा देने की परिकल्पना की ।

निष्क्रियता के कारण कल्पना की आत्मशक्ति कमज़ोर हो सकती है। इसे प्रयोग के माध्यम से पुनर्जीवित तथा चेतनशील बनाया जा सकता है। आइए, अब संयोगात्मक कल्पना के विकास पर अपना ध्यान केन्द्रित करें, क्योंकि यही वो अंतर्शक्ति है जिसका इच्छाओं को उपलब्धि में परिवर्तित करने की प्रक्रिया में सबसे अधिक उपयोग होता है।

अगले अध्याय में, हम यह सीखेंगे कि योजना के माध्यम से ज्ञान और कल्पना को अनुयोजन में कैसे परिवर्तित करते है अर्थात उसको कैसे अमल में लाते हैं।

–*–

अध्याय 7

योजना – इच्छाओं को मूर्तरूप देने की क्रिया

"गांधी जी ने कहा था हम वर्तमान में जो करते हैं उसी पर भविष्य निर्भर करता है"। योजना, लक्ष्य प्राप्ति के लिए एक रास्ता बनाने में हमारी मदद करता है। वर्तमान परिस्थितियों की समीक्षा और स्थितिनुसार अगले हफ्ते अथवा महीने या सालों में किये जाने वाले सुधारों की जरूरत की पहचान के साथ ही यह प्रक्रिया शुरु हो जाती है।

योजना बनाकर ही कोई व्यक्ति समय, पैसे, मानवशक्ति एवं अन्य स्रोतों का इष्टतम उपयोग कर सकता है। योजनाबद्ध कार्य निष्पादन, सफलता का मूल-मन्त्र है।

भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान गांधीजी द्वारा बनाई गई योजनाओं को यहां उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत किया गया है।

1. सरकारी कार्यालयों में कार्यों एवं गतिविधियों को रोका जाना चाहिए।
2. लोगों को करों एवं उपकरों की अदायगी नहीं करनी चाहिए। यदि सरकार संपत्तियों को जब्त करने का आदेश देती है तो लोगों को ऐसे आदेशों का विरोध करना चाहिए।
3. सरकारी कर्मचारियों को सरकारी आदेशों को लागू नहीं करना चाहिए और उन्हें अपने पदों से त्याग-पत्र (इस्तीफा) दे देना चाहिए।
4. छात्रों को स्कूलों एवं कॉलेजों का बहिष्कार करना चाहिए तथा जब तक स्वतंत्रता नहीं मिल जाती पुन: स्कूल नहीं जाना चाहिए।
5. वे जो हिंसा और दूसरे धर्मों से नफरत करने में विश्वास करते हैं उन्हें आंदोलन से दूर रखना चाहिए।

स्वतंत्रता संघर्ष में लोगों को निर्देश देने के लिए गांधी जी ने ऐसी बहुत सी योजनाएं बनाई। इसी तरह, हमें अपनी इच्छाओं को पूरा कराने या समस्याओं का समाधान करने और उनका कार्यान्वयन करने के लिए उचित योजनाएं बनानी चाहिए।

सफल होने के लिए, आपके पास त्रुटिरहित योजनाएं होनी चाहिए। आपके पास अनुभव, शिक्षा और दूसरों की कल्पनाशीलता का लाभ उठाने की योग्यता होनी चाहिए।

किसी भी व्यक्ति के पास अपने लक्ष्यों को पाने के लिए पर्याप्त ज्ञान और शक्ति नहीं होती उसे अन्य व्यक्तियों के सहयोग एवं सहायता की आवश्यकता पड़ती है। कुछ हासिल करने के लिए आप जो भी योजना बनाते हैं उसको सफल बनाने के लिए किये जाने वाले प्रयासों में आपकी और अपकी टीम के प्रत्येक सदस्य की सहभागिता होनी चाहिए। आपको अपनी योजना चाहे वो पूर्णत: हो या अंशत:, स्वयं ही बनानी चाहिए, परन्तु यह अवश्य सुनिश्चित करें कि उन योजनाओं का लौकिक मन की टीम द्वारा समीक्षा एवं अनुमोदन किया जाता है।

अगर पहली योजना, जो आपने अपनाई है, सफल नहीं होती है, तो उसकी जगह नई योजना बनाएं। अगर ये नई योजना भी असफल हो जाती है तो अगली नई योजना बनाएं और योजनाएं बनाते जाएं जब तक आप अपनी योजना में सफल नहीं हो जाएं। यह वही बिंदु है जहाँ ज्यादातर व्यक्तियों को असफलता मिलती, क्योंकि असफल योजनाओं के स्थान पर नई योजनाएं बनाने के लिए उनमें दृढ़ता की कमी आ जाती है।

अस्थायी हार का केवल एक ही मतलब है, कि आपकी योजनाओं में कोई कमी है। लाखों व्यक्ति अपने जीवन में दु:खी रहते हैं, क्योंकि उनमें योजनाएं बनाने की कमी होती है, जिसके कारण वो वह सब प्राप्त नहीं कर सके जो वो प्राप्त करना चाहते थे ।

कोई भी व्यक्ति तब तक असफल नहीं होता, जब तक वह स्वयं मानसिक रूप से हार नहीं मान लेता। मन के हारे हर है, मन के जीते जीत !

हम कई ऐसे व्यक्तियों को देखते हैं जिन्होंने महान सफलताएं हासिल की हैं, परन्तु हम अक्सर उनकी विजय-गाथा ही जानते हैं, सफलता से पहले की उनकी अस्थायी असफलताओं को अनदेखा कर देते हैं।

जब असफलताएं मिलें तो इसे संकेत की तरह स्वीकार करें कि आपकी योजना अच्छी नहीं बनी थी, उन योजनाओं को फिर से बनाएं और उन्हें अपने लक्ष्य की दिशा में एक बार पुन: मोड़ दें। अगर आप अपने लक्ष्य तक पहुँचने से पहले इसे छोड़ देते हैं, तो आप कामचोर हैं। एक कामचोर कभी विजेता नहीं बनता और विजेता कभी कामचोर नहीं होता।

योजनाओं का चयन करने में निर्णय लेना और उनको लागू करना एक महत्वपूर्ण पक्ष है। यह कई विकल्पों में से सर्वश्रेष्ठ कार्रवाई का चयन करने की एक प्रक्रिया है। अत: अपने विकल्पों पर विचार करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए :

क) किसी प्रयास को करने या न करने का परिणाम।

ख) दीर्घकालिक प्रभाव : एक कार्य हो सकता लघु अवधि का लाभ प्रदान करे, लेकिन दीर्घ अवधि के लिए हानिकारक हो सकता है।

ग) अपने दिल की सुने।

गांधीजी का अहिंसा संघर्ष पूरे राष्ट्र में शांतिपूर्ण ढंग से चल रहा था, परन्तु चौरी-चौरा नामक कस्बे में यह हिंसा में बदल गया। गुस्साई भीड़ ने एक पुलिस स्टेशन जला दिया तथा जो पुलिस कांस्टेबल की मृत्यु का कारण बना। इसके बाद गांधी जी ने अंहिसा संर्घष के लिए अभी भारतीयों के न तैयार होने का हवाला देते हुए आंदोलन वापिस ले लिया। विरोध का सामना करने के बावजूद वे अपने निर्णय पर अटल रहे।

उन्हें विश्वास था कि ऐसे आंदोलन अस्थायी सफलता दे सकते हैं, लेकिन दीर्घावधि में इसके गंभीर परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। उनका यह भी मानना था के लिए गए निर्णय पर लोगों का विश्वास ही बहुमत का आधार है। अत: निर्णय लेने के बाद इसका पालन करना बहुत महत्वपूर्ण है ।

काम टालना एक कमजोरी है, जिससे हर व्यक्ति उबर सकता है। हम उन पुरुषों और महिलाओं का विश्लेषण करें जिन्होंने अपनी असफलता के अनुभव में इस तथ्य का खुलासा किया कि निर्णय लेने का अक्षमता उनके असफल होने के कारणों की सूची में सबसे प्रमुख थी।

सफल व्यक्तियों के विश्लेषण से पता चलता है कि उन सभी व्यक्तियों में **त्वरित निर्णय** लेने और आवश्यकतानुसार उन्हें **धीरे धीरे बदलने की भी क्षमता** थी ।

असफल हुए व्यक्तियों के विश्लेषण पर यह पाया गया कि सफल व्यक्तियों की तुलना में उनमें यह गुण ठीक उलट था, उनके निर्णय लेने की **धीमी गति** थी, परंतु लिए गये उन निर्णयों को **तेजी से** और **बार-बार बदलने** की आदत ने उन्हें असफलता की राह दिखाई।

असफल हुए लोगों में अधिकतर वह लोग हैं जो दूसरों की राय से आसानी से प्रभावित हो जाते हैं। वे अपने पड़ोसियों और समाचार पत्रों को, उनकी ओर से सोचने की स्वतंत्रता दे देते हैं कि वे ही उनकी ओर से निर्णय लें । इस दुनिया में सलाह से सस्ती और इससे अधिक मात्रा में उपलब्ध कोई अन्य चीज नहीं है, हर व्यक्ति सलाह देने के लिए तैयार बैठा हुआ है, उसके पास सलाहों की कोई कमी नहीं है। यह अलग बात है कि उसने अपने जीवन में उनका कभी कोई उपयोग नहीं किया, पर आपके लिए उपलब्ध है। अगर आप इस प्रकार से प्रभावित होकर निर्णय लेते हैं तो आप भूल जाइए किसी भी क्षेत्र में आपके प्रयास सफल होंगे।

यह लोगों की विशेषता है, जिनके पास अल्प ज्ञान है; अपना प्रभाव बनाने के लिए वो छद्म ज्ञानी होने का दावा करते हैं। सामान्यत: ऐसे लोग बोलते बहुत हैं और सुनते कम हैं। अगर आप त्वरित निर्णय लेने की आदत डालना चाहते हैं तो अपनी आँखे और कान खोले रखें और अपना मुँह बंद रखें। अगर आप सुनने से ज्यादा बोलते हैं, तो आप न सिर्फ उपयोगी ज्ञान संग्रह करने के बहुत से अवसरों से वंचित हो जाते हैं, अपितु आप दूसरों को अपने ऊपर हावी होने का मौका भी देते हैं ।

यहाँ तक कि करीबी दोस्त और रिश्तेदार (यहाँ इनकी आलोचना करना उद्देश्य नही है) अक्सर मजाक उड़ाने के उद्देश्य से गलत सलाह देकर सही 'राय' बनाने की प्रक्रिया को नष्ट कर देते हैं, यह सब वे उपहास उड़ाने के लिए करते हैं। इसके परिणाम स्वरुप हज़ारों पुरूष और महिलाएं अपनी पूरी जिंदगी हीन भावना के बोझ को ढोते रहते हैं, क्योंकि कुछ लोग ने अपने परामर्श और उपहास के माध्यम से इनकी 'राय' को प्रभावित करके, इन अबोध एवं निष्कपट व्यक्तियों के आत्मविश्वास को खत्म कर दिया।

दो लोग एक जैसे नहीं होते, जो आपको संभव लगता है, हो सकता है दूसरों को असंभव दिखता हो । केवल राइट बंधुओं ने विश्वास किया कि मानव एयरक्राफ्ट की सहायता से उड़ सकता है, जबकि "बुद्धिजीवी लोगों" ने उनका मज़ाक उड़ाया था ।

जब भी आप मार्गदर्शी सिद्धांतों का अनुपालन करना शुरू करते हैं तो केवल खुद को या अपने दल को ही अपना सलाहकार बनाएं; अपनी टीम के सदस्यों को अलावा किसी को भी विश्वास में न लें, अपनी टीम के चयन में बहुत सावधानी बरतें और केवल उन्हें ही चुने जो सकारात्मक विचार तथा आपकी आकांक्षाओं और आदर्शों के साथ सद्भाव रखने वाले हों ।

अपने सलाहकार द्वारा दी गई सूचना के आधार पर अपना निर्णय लें। अगर आपको निर्णय लेने में सक्षम होने के लिए दूसरे लोगों से तथ्यों या सूचना की आवश्यकता होती है तो अपना उद्देश्य को प्रकट किए बिना चुपचाप ऐसे तथ्य और सूचनाओं को प्राप्त करें ।

लिए गए निर्णय का मूल्य इस पर निर्भर करता है कि उसके निष्पादन के लिए कितने साहस की आवश्यकता है। दुनिया के सभी महत्वपूर्ण निर्णय, जिनके अंतर्गत महान सभ्यताओं की आधारशिला रखी गई, लेते समय भारी जोखिमों उठाए गए, जिनमें जीवन का जोखिम तक व्याप्त था ।

जो व्यक्ति त्वरित और दृढ़ निर्णय लेते हैं वे जानते हैं कि वे क्या चाहते हैं और सामान्यत: वे उसे प्राप्त कर लेते हैं। आमतौर पर दुनिया उस व्यक्ति को सम्मान देती है जिसके शब्द और कार्य यह दर्शाते है कि वह जानता है वह किस दिशा में जा रहा है ।

विफलता और गलत निर्णय लेने का डर एक आदत है जो आमतौर पर युवाकाल से शुरू होती है यह आदत आयु बढने के साथ साथ स्थाई हो जाती है। अत: जितना जल्दी हो सके इस दुर्गुण पर विजय पा लेनी चाहिए ।

अपने लक्ष्यों की प्राप्ति में, "आराम" करने की न सोचें क्योंकि यह आपको नहीं मिलेगा। यह आपको केवल सनातन नियमों का अनुपालन करते समय ही मिलेगा। इसे महान कारणों, जैसे कि राष्ट्र के लिए आजादी

लाना के लिए उपयोग किया जा सकता है न कि सिर्फ अपने जीवन को बेहतर बनाने के लिए। समय के अलावा किसी का भी मूल्य नहीं है तथा उसे समझने और लागू करने के प्रयासों की आवश्यकता है ।

–*–

अध्याय 8

लौकिक मन – सहयोग शक्ति (1+1 = > 2)

हम पिछले अध्याय में 'योजना' बनाने के बारे में सीखा है। योजनाएं तब तक बेकार हैं जब तक उनमें कार्य में परिवर्तित करने हेतु पर्याप्त शक्ति न हो । कुछ पाने के लिए शक्ति अनिवार्य है।

जिस विधि द्वारा गांधी जी ने अपनी अद्‌भुत शक्ति प्राप्त की थी उनकी व्याख्या कुछ ही शब्दों में की जा सकती है। उन्होंने संद्भावना की नियत से एक निश्चित उद्देश्य के लिए लाखों लोगों के मन को प्रेरित करके, एक शरीर और एक मन से, कार्य करने हेतु यह असीम शक्ति अर्जित की। गांधी जी ने वो कार्य पूरा किया जिसे बहुत से लोग चमत्कार समझते थे कि यह किसी अन्य मनुष्य द्वारा नहीं किया जा सकता।

ट्रेन से बाहर फेंक जाने और स्वयं दक्षिण अफ्रीका में अपने देशवासियों की दुर्दशा को देखने के बाद गांधी जी का पहला कदम प्रिटोरिया पहुँच जाने के बाद अपने मुवक्किल के ऐजेंट से अनिवार्य रूप से मिलना तथा भरतीय समुदाय की मीटिंग बुलाना था। मीटिंग में उनके भाषण को उनके जीवन का पहला सार्वजनिक भाषण कहा जा सकता है। इस बार न उनकी जबान लड़खड़ायी न ही वे कांपे और न ही शर्म से वो नीचे बैठे। जाने कहां से उनके भीतर एक साहसी उबाल आया, एक सतत् उबाल जिसने भविष्य में उनको कभी असफल नहीं होने दिया ।

उन वर्षों के दौरान जब गांधी जी दक्षिण अफ्रीका में थे उन्होंने बहुत से भारतीयों, अफ्रीकियों और ब्रिटिश नागरिकों से संपर्क बनाया था, जिन्होंने नस्लवाद की लड़ाई के उनके प्रयास में उनकी सहायता की। नेटाल इंडियन कांग्रेस के माध्यम से उन्होंने नेटाल में रह रहे भारतीयों के अधिकारों के लिए लड़ाई लड़ी। उन्होंने विचारों के मुक्त आदान प्रदान के लिए नियमित रूप से बैठकों का आयोजन किया। बोअर युद्ध में उनकी सहभागिता ने बहुत से ब्रिटिश मित्रों से भी जुड़ने का उनको मौका दिया। विभिन्न धर्मों के लोगों के साथ उनकी मित्रता ने उन्हें अपने धर्म को भी अच्छी तरह से समझने का अवर दिया ।

सन 1915 में भारत वापस लौटने के बाद

'लौकिक गांधी जी ने स्वतंत्रता सेनानियों जैसे गोखले, मदन मोहन मालवीय के साथ परिचय बनाया एवं भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के अपने प्रयासों को जारी रखा। उनकी मदद से उन्होंने चंपारण और खेड़ा में नील आंदोलन जैसे कई आंदोलनों किये। कई महान बुद्धिजीवियों के सहयोग एवं विभिन्न समाचार पत्रों और प्रकाशनों जैसे इंडियन ओपिनियन, यंग इंडिया एवं नवजीवन के माध्यम से उन्हें जनता तक वह अपनी पहुंच बनाने में मदद मिली ।मन' समय गुजरने के लिए कुछ लोगों की महज निष्क्रिय सभा नहीं है। लौकिक मन को "एक निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए, दो या अधिक लोगों के मध्य, सद्भावना को बढ़ावा देने के लिए किये जा रहे प्रयासों में समन्वय बैठाने के रूप में" परिभाषित किया जा सकता है। लौकिक मन के अनुसार दो या अधिक एक जैसा सोचने वालों की समन्वित ऊर्जा का सिद्धांत उनकी व्यक्तिगत उर्जाओं के कुल योग कई गुना ज्यादा होता है ।

लौकिक मन के समूह की बैठक घर, कारोबार की जगह या सहमति से किसी भी खुले स्थान में की जा सकती है, जहाँ शांति और एकांत वातावरण उपलब्ध हो। आमतौर पर सप्ताह में एक बार मिलना पर्याप्त है। वास्तव में, इसका कोई सख्त नियम नहीं हैं और मीटिंग को सुबह या शाम के टहलने के दौरान या तकनीकी साधनों अर्थात मोबाइल फोन या इंटरनेट के माध्यम से भी की जा सकती है ।

कोई एक सदस्य नेतृत्वकर्ता की तरह कार्य करता है और कार्यसूची बना कर मीटिंग करता है, जो इच्छानुसार उद्देश्य आधारित हो सकती हैं। बैठक में भाग लेने वाले सदस्यों के साथ प्रगति रिपोर्ट, प्राप्त लक्ष्यों, अनुभवों, भविष्य की योजनाओं इत्यादि पर चर्चा करके उन्हें प्रोत्साहित कर उत्साहजनक का वातावरण बनाया जा सकता है।

हर मनुष्य के दिमाग में विचारों की तरंगों को प्रदान करने और ग्रहण दोनों करने का केंद्र होता है। अंतरिक्ष के माध्यम से, रेडियो प्रसारण द्वारा नियोजित करने के सिद्धांत के समान ही, हर मनुष्य के मस्तिक में विचार की तरंगों को पकड़ने की क्षमता होती है जो दूसरों के मस्तिक से छोड़ी जा रही होती है।

पिछले पैराग्राफ में प्रेरणास्त्रोतों के विवरण पर व्यक्तव्य का संबंध वैसा ही है जैसा 'कल्पना' विषय से सम्बंधित अध्याय में उल्लिखित है। 'कल्पना' ही मस्तिष्क की तरंगों को ग्रहण करने की मशीन है, जो दूसरों के मस्तिक से निकले विचारों को ग्रहण करती है।

जब इन्हें उच्च दर से 'संदीप्त या उत्तेजित' किया जाता है तो मन, विचारों की तरंगों के लिए अत्यंत ग्रहणशील हो जाता है, जो अंतरिक्ष से बाहरी स्त्रोतों के माध्यम से उस तक पहुंच जाती हैं। उतेजना की यह 'संदीप्त या उत्तेजित' प्रक्रिया या तो सकारात्मक भावनाओं या नकारात्मक भावनाओं के माध्यम से स्थान लेती है।

एक बेहद उच्च दर की तरंगे ही, केवल वे तरंगे है जो एक दिमाग से दूसरे दिमाग में अंतरिक्ष के माध्यम से ग्रहण की जाती हैं या प्रसारित होती हैं। विचार ऊर्जा है जो तरंगों की बेहद उच्च दरों पर यात्रा करता है। वो विचार जिनमें कोई संशोधन हुआ है या किसी अन्य भावना से 'संदीप्त या उत्तेजित' किया गया है, उनकी तरंगों की गति दर सामान्य विचार की तुलना में कही अधिक होती है तथा यह ही ऐसा विचार है जो मानव मस्तिष्क की प्रसारण मशीनरी के माध्यम से एक दिमाग से दूसरे मानव दिमाग तक गुजरता है।

अत:, आप देखेंगे कि प्रसारण सिद्धांत एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से आप अपनी भावनाओं को विचारों के साथ मिलाते हैं एवं अपने अवचेतन के पास भेज देते हैं। अवचेतन-मन दिमाग का ''प्रेषण केंद्र'' है जिसके माध्यम से विचारों की तरंगे प्रसारित होती हैं।

चाहे कोई व्यक्ति विद्युत शक्ति पर विश्वास करता हो या ना करता हो, वह अपनी शक्ति स्वयं उत्पन्न करती है। इसी प्रकार, विश्व के महानतम बल अमूर्त हैं। इन्हें ज्ञानेंद्रियों या मन के माध्यम से ग्रहण नहीं किया जा सकता। अब यह स्वीकार करने के पर्याप्त आधार है कि कोई ऐसी शक्ति हो जो हमारी समझ से परे है। उनका लौकिक मन के माध्यम से उपयोग किया जा सकता है। किसी व्यक्ति की सर्वोत्तम क्षमताओं एवं गुणों को जागृत करके इस विश्व को रहने के लिए एक बेहतरीन स्थान बनाने का विचार एक अवधारणा के रूप में सामने आया था और जोकि एक किताब तथा एक समाज के रूप में आपके समक्ष है। यह भी लौकिक मन के सिद्धांत के माध्यम से संभव हुआ है।

लौकिक मन सिद्धांत की दो विशेषताएं होती है; जिनमें एक की प्रकृति आर्थिक तथा अन्य की आध्यात्मिक होती हैं।

आर्थिक लाभ किसी भी व्यक्ति द्वारा सृजित किया जा सकता है, इसके लिए वह उन व्यक्तियों के समूह से परामर्श एवं सहयोग लेता है जिनको वह उनके द्वारा निवेश किए गए समय के लिए क्षतिपूर्ति करता है। इस प्रकार का सहयोगात्मक गठबंधन किसी बड़े सफल कारोबार का आधार है।

लौकिक मन सिद्धांत का आध्यात्मिक चरण बहुत अधिक अमूर्त और समझने में मुश्किल है क्योंकि यह उन आध्यात्मिक शक्तियों के संदर्भ में है, जिससे मानव अच्छी तरह से परिचित नहीं हैं और वे उसके साथ अच्छी

तरह से तारतम्य नहीं बिठा पाते। आप इस वक्तव्य से बेहतर अनुमान लगा सकते हैं '' जब दो दिमाग साथ आते हैं, तो एक अदृश्य, अमूर्त बल प्राप्त होता है जो किसी तीसरे दिमाग के बल को उत्पन्न करता है।''

लौकिक मन का समूह मानव को ज्ञान प्राप्ति की राह, अनुभव, समय और अन्य सहभागियों के मौद्रिक संसाधनों के स्रोतो को प्राप्त करने में सक्षम बनाता है। ईश्वर सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी और सर्वज्ञ है। जब दो या अधिक लोग सद्भावना से जुड़ते हैं और निश्चित उद्देश्य के लिए कार्य करते हैं तो वे स्वत: इस स्थिति में आ जाते हैं जब उन्हें भगवान के महान सार्वभौमिक असीम भण्डार से सीधे शक्ति प्राप्त होनी शुरू हो जाती है। यह शक्तियों के सभी स्रोतों में महानतम स्रोत है। यह वह स्रोत है जिससे शक्ति पा कर हर व्यक्ति (चाहे वह इस तथ्य को जाने या ना जाने) महान बन जाता है।

–*–

अध्याय 9

नेतृत्व - लक्ष्य प्राप्ति हेतु जन–समुदाय का मार्गदर्शन एवं प्रेरणा

'सामूहिक लक्ष्य' को प्राप्त करने के लिए लोगों के समूह को प्रेरित तथा संगठित करना ही नेतृत्व है। नेतृत्वकर्ता वह व्यक्ति है जो आगे बढ़ने का रास्ता जानता है और बाधाओं और खतरों से बचाते हुए अपने अनुयायियों का नेतृत्व करता है।

मोटे तौर पर दुनिया में दो प्रकार के लोग होते हैं – नेतृत्वकर्ता और अनुयायी। आपको शुरूआत में ही तय करना होगा कि आपको अपने लिए चुने हुए क्षेत्र में नेतृत्वकर्ता बनना है या अनुयायी बनकर रहना है। यह चयन आपकी जिंदगी में बृहद बदलाव करेगा।

अनुयायी होना कोई अपमान की बात नहीं है। दूसरी ओर, अनुयायी बने रहना कोई खास इज्जत की बात भी नहीं है। परन्तु अधिकांश महान नेताओं ने अनुयायी बनकर शुरूआत की थी। वे महान नेता बन पाए क्योंकि वे बुद्धिमान अनुयायी थे। एक बुद्धिमान अनुयायी के बहुत फायदे हैं, उन्हें अपने नेता से सीखने का काफी अवसर मिलते हैं।

नेतृत्व के दो रूप हैं।

1. दूसरों की सहमति से और दूसरों की भलाई के लिए नेतृत्व करना।

2. बिना दूसरों की सहमति के, स्वयं के कल्याण के लिए जबरदस्ती नेतृत्व करना।

जबरदस्ती के नेतृत्व को लोग अस्थायी रूप से आगे तो ले जाएंगे, लेकिन वे पूरे दिल से काम नहीं करेंगे। इतिहास ऐसे सबूतों से भरा पड़ा है कि जबरदस्ती के नेताओं के नेतृत्व को लोगों ने सहन नहीं किया। हिटलर जैसे तानाशाहों का पतन और गुमनाम हो जाना अर्थपूर्ण है। इसका मतलब है कि लोग अनिश्चित काल के लिए इस जबरदस्ती के नेतृत्व को नहीं मानेंगे। हमें कारोबार और धर्म जैसे अन्य क्षेत्रों में भी इस प्रकार के बहुत लोग मिलेंगे जिन्हें जनसमुदाय ने अपदस्थ कर दिया।

समर्थन प्राप्त करके और अनुयायियों के कल्याण के लिए किये जाने वाला नेतृत्व ऐसा है जो स्थिर हो सकता है। नेतृत्व का यही गुण और रूप नेतृत्व के कम गुणों को भी स्वीकार कर लेता है। जो व्यक्ति अपने नेतृत्व को यह आधार बनाता है, वो जीवन के किसी भी पल में नेता बनने के लिए प्रचुर अवसर ढूंढ लेता है।

नेतृत्व की सफलता हेतु आवश्यक प्रमुख गुण हैं :

1. **साहस:** कुछ लोग समस्याओं के प्रति बिना गंभीरता से या अंधीगति से दौड़ने की गलतफहमी को गुण समझते हैं। 'साहस' स्वयं के ज्ञान पर और उसके कार्यक्षेत्र पर आधारित होता है, कोई भी अनुयायी ऐसे व्यक्ति का नेतृत्व पसंद नहीं करेगा जिसमें आत्मविश्वास की कमी हो और उसे अपने कार्यक्षेत्र में कार्य करने की समझ की कमी हो। गांधी जी ने कहा था ''मेरी अंतरात्मा ने मुझे कभी यह नहीं कहा, कभी यह नहीं बताया कि मुझे पूरी दुनिया के खिलाफ खड़ा होना है और हो सकता है कि आप का कोई साथ न दे और आप एकदम अकेले हों। आप को लोगों के चेहरे में दनिया देखनी होगी, हालांकि, दुनिया आपको क्रोध की निगाहों से देखेगी। डरें नहीं। 'छोटी-छोटी बातें' जो अपने हृदय में बसती हैं उन पर विश्वास रखें। वो कहती है कि मित्रों, पत्नी और सभी का त्याग करना, इस बात का सबूत है कि वास्तव में आप ने जीवन जिया है तथा इसी के लिए आपको मरना होगा।
2. **निष्पक्षता और न्याय की भावना:** व्यक्ति, जो केवल एक पक्ष की बहस को सुनता है और पक्षपात करता है, उसे एकदिन सभी अस्वीकार कर देंगे।
3. **निर्णय लेने की क्षमता:** एक व्यक्ति जो अपने निर्णय लेने में हिचकिचाता है, यह दिखाता है कि वह स्वयं के बारे में सुनिश्चित नहीं है। वह सफलतापूर्वक दूसरों का नेतृत्व नहीं कर सकता।
4. **योजना बनाना:** जो नेतृत्वकर्ता योजना नहीं बना सकता एवं अनुमान से कदम उठाता है, वो बिना दिशा-उड़ान योजना के उड़ने वाले विमान के सामान है। एक विमान कई बार, कई दिशाओं में एवं खराब मौसम से बचने वाली अन्य आवश्यक योग्यताओं का अभ्यास करता है। साथ ही उसके पास यह योजना होती है कि विमान कहां उतारना है और जमीन पर वहां के ट्रैफिक नियंत्रकों से कैसे मदद प्राप्त करनी है।
5. **विनम्रता:** सफल नेतृत्वकर्ता स्थिति की मांग के अनुसार हमेशा वो सभी प्रकार के काम करने को तैयार रहते हैं, जो वे किसी अन्य को करने को कह सकते हो।
6. **एकनिष्ठता:** सफल नेतृत्वकर्ता जो कुछ करता है वह अपने पूरे हृदय से करता है और उसमें उसकी सौ प्रतिशत सहभागिता दिखती है। वो अपने अनुयायियों से अधिक कार्य करने की इच्छा दर्शाता है। एक व्यक्ति जो खुद तो केवल कुछ घण्टे के लिए कार्य करता है, लेकिन अपने अनुयायियों से ज्यादा घण्टे कार्य करने के लिए अपेक्षा करता है, कभी सफल नहीं हो सकता।
7. **सच्चाई:** जो व्यक्ति अपने से ऊपर या नीचे के पद के लोगों के प्रति वफादार नहीं रहता, वो अपने अनुयायियों का विश्वास और सहयोग नहीं प्राप्त कर सकता।
8. **सहानुभूति एवं समझ:** नेतृत्वकर्ता को अनुयायियों की समस्याओं और कमजोरियों के प्रति सहानुभूति और समझ होनी चाहिए। उसे अपनी शक्तियों और सीमाओं की जानकारी के साथ-साथ उन्हें कौन सा कार्य दिया जाना है, यह भी जानना चाहिए।
9. **उत्तरदायित्व:** उसे इस बात का ज्ञान होता है कि ज्यादा शक्ति, ज्यादा उत्तरदायित्व लेकर आती है। वह अपनी खुद की जिम्मदारयों से भागने की कोशिश नहीं करता है। एक सफल नेता अपने अनुयायियों की गलतियों और कमियों को भी अपनी ही जिम्मेदारी मानता है। अगर उसका कोई अनुयायी गलती करता है और उसे अक्षम साबित किया जाता है तो नेतृत्वकर्ता खुद को असफल मानता है।
10. **सहयोग:** सफल नेता समन्वयात्मक प्रयासों के सिद्धांतों को अपनाता है और ऐसा करने के लिए अपने अनुयायियों को प्रेरित करता है और इसके लिए उन्हें सक्षम बनाता है।

नेतृत्व करने में असफल होने के प्रमुख कारण:

1. **'परस्पर-सम्मान के स्वर्ण नियम' की अवहेलना** - यह सिद्धांत कहता है कि हमें दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसा हम अपने लिए अपेक्षा रखते हैं।
2. **अनुयायियों से प्रतिस्पर्धा का भय** - एक नेतृत्वकर्ता जो इस बात से डरता है कि उसका कोई अनुयायी उसके पद को छीन सकता है, यथार्थ रूप से यह दर्शाता है कि वह आश्वस्त है कि उसका यह भय आज नहीं तो कल सच होगा। योग्य नेता अनुयायियों को प्रशिक्षित करता है और उन्हें उचित कार्य देता है। केवल इसी मार्ग से एक नेता स्वयं को कई गुणा बड़ा बना लेता है और कई स्थानों के लिए स्वयं को तैयार कर लेता है, एक बार में कई चीजों पर ध्यान देता है।
3. **स्वार्थपरता –** एक नेतृत्वकर्ता, जो अपने अनुयायियों के किए हुए कार्य का सारा श्रेय स्वयं ले लेता है, लोग निश्चित रूप से उससे असंतुष्ट हो जाते हैं। एक सच्चा नेतृत्वकर्ता सम्मान के पीछे नहीं भागता। वह अपने अनुयायियों को श्रेय देता है, क्योंकि वह जानता है कि ज्यादातर लोग सम्मान और संतुष्टि के लिए कार्य करते हैं न केवल मौद्रिक लाभ के लिए।
4. **असंयमशीलता** - अनुयायी ऐसे किसी असंयमी नेता का सम्मान नहीं करते, जिसे अपनी भावनाओं पर नियंत्रण नहीं होता। इसके अतिरिक्त किसी भी रूप में असंयमी होना इसमें संलिप्त समस्त लोगों की प्राणशक्ति और धैर्य का नाश कर देता है। एक सफल नेतृत्वकर्ता अपने अनुयायियों की कमजोरियों और समस्याओं को समझता है तथा परस्पर सलाह से उनमें सुधार करता है।
5. **पद या प्रधिकार पाने की लालसा** - किसी भी सक्षम नेता को अपने अनुयायियों से आदर पाने के लिए किसी पद की आवश्यकता नहीं है। जो व्यक्ति सामान्यत: अपने पद नाम से आगे बढ़ते हैं, उसके पास अन्य गुण नहीं होते। सच्चे नेतृत्वकर्ता के घर या ऑफिस के दरवाजे हमेशा उनके लिए खुले होते हैं जो आना चाहतें है; चाहे वो मदद के लिए आए या लड़ने, तथा कार्यस्थल औपचारिकताओं और भव्यताओं से मुक्त होता है।

नेतृत्व करने में असफल रहने के ये कुछ मुख्य कारण हैं, इसमें से की गई कोई भी गलती असफलता लाने के लिए पर्याप्त है, यदि आपको नेतृत्व करने की ख्वाहिश है तो ध्यानपूर्वक इस सूची का अध्ययन करें तथा सुनिश्चित करें कि आप इन गलतियों को नही करते।

-*-

अध्याय 10
अवचेतन मन
मनुष्य के सीमित-मन और अनंत लौकिक मन के बीच की कड़ी

ब्रह्मांड में ऊर्जा एवं तत्व निहित है, जो एक चीज़ को किसी दूसरी चीज में रूपांतरित कर सकतेन हैं। हम पांच तत्वों से मिलकर बने हैं - पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश/अंतरिक्ष। विचार ऊर्जा के रूप में होते है और इसलिए हम विचार-ऊर्जा और मस्तिष्क की विनिमयशीलता शब्द का उपयोग कर सकते हैं। हम इसे इस तर्क से समझ सकते हैं कि किस प्रकार विचारों की रचनात्मक शक्ति से विमान एवं कंप्यूटर जैसी कुछ चीजें बनी तथा युद्ध और स्वतंत्रता जैसे घटनाएं घटी। हम तत्वों के रूपांतरण, जैसे कि ईंधन और भोजन का ऊर्जा में रूपांतरण होने के बारे में जानते हैं। अब हम यह सीख रहे हैं कि विचार-ऊर्जा को उन चीजों में कैसे बदला जाए जैसा हम चाहते है।

मस्तिष्क के कार्य निम्नलिखित दो भागों द्वारा संचालित होते हैं।

1. "चेतन-मन": जब आप कहते- सुनते- देखते-सूंघते- छूते- चखते हैं, तो आपका चेतन-मन क्रयाशील है, जो यह कहता है कि वह पांच भौतिक इंद्रियों का शासक है। चेतन-मन, पांच इंद्रियों के माध्यम से बाह्य जीवन की वस्तुओं से संपर्क कर, उन्हें समझ कर और संचालन करता है। यह मन का वह भाग है जिसके कारण आप हैं। यह सही और गलत के बीच भेद स्पस्ट करता है। अत: यह स्वतंत्र इच्छा प्रयोग की जिम्मेदारी वहन करता है।

पांच तंमात्राएं

तंमात्राएं एक मार्ग है जिसके माध्यम से हमारे द्वारा भौतिक जगत को महसूस किया जाता है। 'तन' का अर्थ है सुंदर और 'मात्रा' का अर्थ है तत्व। पांच तत्व, पांच इंद्रियों के कार्यों को प्रदर्शित करते हैं। पाँच तंमात्राएं एवं इनकी प्रतिनिधि इंद्रिया सुनने (कान), छूने (त्वचा की समझा से), देखने (आँख) चखने (जीभ) तथा सूंघने (नाक) का कार्य करती है।

'तन' का अन्य अर्थ माता है, और 'मात्रा' का अर्थ है तत्व अर्थात 'तत्व की माता' । इस प्रकार तंमात्राएं प्रकृति रूपी लौकिक माता के गर्भ में है। प्रत्येक तत्व प्राथमिक रूप से किसी एक तंमात्रा से संबंधित है, परन्तु जैसी व्याख्या की गई है, यह दूसरों के किसी भाग से भी निहित हो सकता है।

क). व्योम / अंतरिक्ष से शब्द (ध्वनि) तंमात्रा-कान बाहर आता है;

ख) वायु से शब्द (ध्वनि) और स्पर्श (छूना) तंमात्रा कान एवं त्वचा बाहर आता है;

ग) अग्नि से शब्द (ध्वनि, स्पर्श /छूना) और रूप (देखना) तंमात्रा कान, त्वचा एवं आंख बाहर आता है;

घ) जल से त्वचा आंख और रस (चखना) बाहर आता है;

ङ) पृथ्वी से शब्द (ध्वनि), स्पर्श (छूना), रूप (देखना) और रस (चखना) तथा गंध सूंघना - कान, त्वचा, आंख, जीभ तथा नाक।

2. "अवचेतन-मन": अवचेतन-मन तर्क या स्वेच्छा की प्रक्रिया में संलग्न नहीं है। यह हमारे हृदय के समान ही ना कभी सोता है और ना ही आराम करता है। इसके निम्नलिखित कार्य हैं;

क) भौतिक पक्ष में, नियमित व महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं जैसे सांस लेना, अपने जीवन की रक्षा करना, संतान के माध्यम से जीवन के पुर्नसृजन की इच्छा, संतान की देखभाल इत्यादि सम्पन्न होती हैं।

ख) मानसिक पक्ष में, यह स्मृतियों, आदतों और भावनाओं का भण्डारगृह है।

ग) आध्यात्मिक पक्ष में, यह आदर्शों, महत्वाकांक्षाओं, इच्छाओं, आदि का स्रोत है।

चूंकि चेतन-मन बाह्य दुनिया के साथ संपर्क रखने के लिए उत्तरदायी है, इसलिए इसे अवचेतन-मन का रक्षक माना जाता है। अत: अवचेतन-मन अपने "द्वार-रक्षक" अर्थात चेतन-मन पर यह विश्वास करता है, कि बाह्य दुनिया के कुप्रभावों और प्रदार्थों से वह इसकी रक्षा करेगा।

जब आप जाग रहे होते हैं तो चेतन-मन अर्थात 'रक्षक' हर समय आपना काम करता रहता है । जब किसी परिस्थिति में यह 'रक्षक' कार्य नहीं पाता या इसका कार्य अवरूद्ध हो जाता है तो अवचेतन-मन असुरक्षित हो जाता है और तब सभी स्रोतों से विचार आने प्रारंभ हो जाते हैं। इस ज्ञान को तकनीक के साथ समन्वय करके; जैसे अनिद्रा की स्थिति पैदा करके या अतिरिक्त सूचनाओं की आपूर्ति करके मस्तिष्क को विचारविहीन या नियंत्रित करके किया जाता है, जिसे कब्जे में आए शत्रु सैनिकों, धर्मानुयायियों इत्यादि पर प्रयोग किया जाता है।

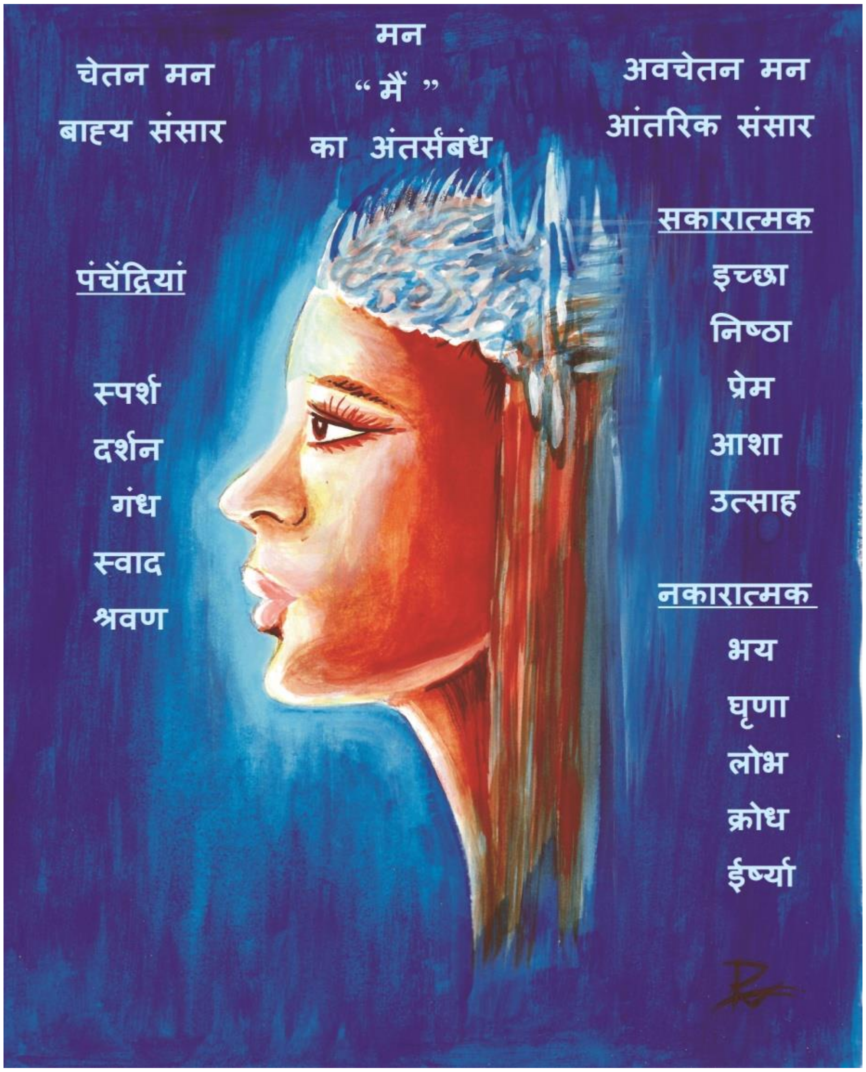

अपने चेतन–मन को हर समय सचेत रखना तथा बिना बाह्य बलों द्वारा नियंत्रित हुए अपना विवेक इस्तेमाल करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। शराब और नशीली दवाओं के गंभीर प्रभाव से, चेतन–मन अपना नियंत्रण खो देने के कारण अवचेतन–मन असुरक्षित हो जाता है ।

पागलपन भरी उत्तेजना या अतिक्रोध के दौरान या लापरवाह भीड़ के आवेग या अनर्गल जुनून की कोई भी स्थिति बहुत खतरनाक हो जाती है। तब अवचेतन–मन आस–पास के लोगों और परिस्थितियों से उत्पन्न भय, घृणा, लालच, और अन्य नकारात्मक शक्तियों के प्रभाव में आने लगता है। प्रशिक्षित चेतन–मन अपनी सतर्क सुरक्षात्मक कार्रवाई द्वारा इन सब से पूरी तरह से बचा सकता है।

चेतन–मन आपकी सभी मानसिक शक्तियों का सामान्य प्रभारी है। यह पूर्व योजना बना सकता है, और अपनी योजना के अनुरूप कार्य संपन्न कर सकता है अथवा यह आवेगों से प्रभावित निरीह प्राणी तरह घटनाओं की दया पर निर्भर होकर जीवन की बाढ़ में लकड़ी के टुकड़े के समान बह कर समाप्त भी हो सकता है ।

जिसका सेना का जनरल कभी आगे बढ़ने की योजना नहीं बनाता, जिसे अपनी क्षमता एवं अपने लोगों पर भी विश्वास नहीं होता, और वह सारा समय शत्रु से कैसे जीता जाए की योजना बनाने के बजाए शत्रु के डर की चिंता में ही समय गवां देता है, आप ऐसी किसी सेना से कोई ज्यादा अपेक्षा नहीं रख सकते, चाहे उसके

सैनिक कितने भी अच्छे क्यों न हों। इसी प्रकार आप अवचेतन-मन से भी अच्छे परिणामों की अपेक्षा नहीं कर सकते, जब आपका चेतन-मन भय और चिंता से भरा हों; या जब वे नहीं जानता कि उसे क्या चाहिए।

चेतन-मन का सबसे महत्वपूर्ण दायित्व आपकी इच्छानुसार चीजों पर, आपके विचारों को केंद्रित करना है तथा भय या नकारात्मक विचार प्रदान करने वाली सभी सलाह के लिए अपने दरवाजे बंद कर देना है। अगर एक बार आप कुछ करने की क्षमता को प्राप्त कर लेते हैं तो आपके लिए कुछ भी असंभव नहीं होगा।

कल्पना कीजिए कि हमारी दो दुनिया हैं :-

1. बाहरी दुनिया - जिसे हम आंख, कान, नाक, त्वचा और जीभ के पांच ज्ञानेन्द्रियों से अनुभव करते हैं। हम चेतन-मन के माध्यम से इस दुनिया के साथ सम्पर्क करते हैं।

2. हमारे अंदर की निहित दुनिया - भावनाओं जैसे प्यार, क्रोध, घृणा, महत्वकांक्षा, लालच, ईर्ष्या की एक दुनिया। हम अवचेतन-मन के माध्यम से इस दुनिया के साथ संपर्क करते हैं। यह भी अवचेतन-मन के माध्यम से होता है कि हम लौकिक मन के साथ जुड़े रहते हैं।

बाह्य दुनिया हमारी अंदर की दुनिया का एक प्रतिबिंब है। सब कुछ जो आप बाह्य दुनिया में ढूंढ़ते है वो आंतरिक दुनिया में सृजित विचारों द्वारा ही बनाया गया है। विमान की एक इच्छा से ही अविष्कार किया गया है कि मनुष्यों को पक्षियों की तरह उड़ने में सक्षम होना चाहिए। नए राष्ट्रों का जन्म या युद्धों का होना कुछ ही लोगों के विचारों द्वारा संचालित हैं।

अत: प्रत्येक विचार एक कारण है तथा प्रत्येक स्थिति (जैसे विमान या युद्ध) एक प्रभाव; इस कारण यह बहुत आवश्यक है कि आप अपने विचारों पर नियंत्रण रखें ताकि इसे इच्छित परिस्थितियों में सामने लाया जाए।

विचार 'ऊर्जा' है और ज्ञान का अनुप्रयोग 'शक्ति' है। विचार को ज्ञान के साथ संयुक्त करने एवं परिभाषित उद्देश्य पर उसे केंद्रित करने से वो शक्ति बन जाता है। यह वह शक्ति है जो उन व्यक्तियों द्वारा उपयोग की जाती है जो गरीब, पीड़ित और शोषित बने रहने के गुण में विश्वास नहीं करते।

उपर्युक्त दोनों दुनिया को समझना और उनमें समन्वय करना, जीवन का सबसे बड़ा रहस्य है। इन जटिल प्रक्रियाओं पर विजय प्राप्त करने से ही आप आपने जीवन और अपने आस-पास की परिस्थितियों को पूर्ण रूप से बदल सकते हैं। आपकी सफलता, आपकी खोज की क्षमता तथा ऊर्जा, शक्ति और बल के प्रयोग के सही अनुपात पर निर्भर करती है।

ज्यादातर लोग बाह्य दुनिया पर ध्यान केंद्रित करते हैं; कुछ लोगों को ही आंतरिक दुनिया मिलती है। ज्यादातर व्यक्ति प्रभावों को सुलझाकर प्रभावों को बदलने की कोशिश करते हैं। वे यह देखने में असफल हो जाते हैं कि वह एक समस्या को दूसरी समस्या में बदल रहे हैं। प्रभाव खत्म करने के लिए, हमें कारण खत्म करना होगा एवं यह कारण हमें आंतरिक दुनिया में ही प्राप्त होता है।

जब तक हम यह नहीं जानते हैं कि शस्त्रों को नियंत्रित कैसे किया जाता है तब तक हम शस्त्रों का प्रभावपूर्ण उपयोग नहीं कर सकते। इसी प्रकार, हम तब तक बल का प्रभावपूर्ण उपयोग नहीं कर सकते जब तक हमें इसकी मौजूदगी और अनुप्रयोग की जानकारी न हो। हमारा भाग्य, हमारे विचारों और स्वतंत्र इच्छा के प्रयोग से पूर्णत: हमारे नियंत्रण में है।

चेतन-मन पर नियंत्रण रहने से वफादारी तथा प्रेम जैसी सकारात्मक भावनाओं के विकास में अवचेतन-मन को मदद मिलती है और उसे श्रेष्ठता की ओर ले जाता है, जैसा कि गांधी जी ने प्रदर्शित किया था। चेतन-मन पर

नियंत्रण में कमी होने से अवचेतन-मन घृणा, क्रोध, लोभ और बदले जैसी भावनाओं से प्रभावित हो कर विनाश की ओर ले जाता है जैसे कि अडोल्फ हिटलर ने प्रदर्शित किया।

किसी के मन से निकले विचार अवचेतन-मन में गहराई से छाप छोड़ जाते हैं, जहां वे चुंबक की तरह काम करते हुए समान प्रकृति के विचारों- चाहे वे सकारात्मक या नकारात्मक हों, को अपनी ओर आकर्षित करते है। यहां हम इस सच समझ सकते हैं कि क्यों आपराधिक विचारों वाले मस्तिष्क अन्य आपराधिक मन वाले व्यक्तियों का साथ पाने के लिए आकर्षित होते हैं और वे जेल से बाहर आने के बाद और अधिक खतरनाक अपराधी बन जाते हैं।

यह सर्वविदित तथ्य है कि 'भावनाएं' या 'अनुभूतियां' ज्यादातर लोगों पर शासन करती हैं। अवचेतन-मन को याथार्थवादी विचारों की तुलना में भावनापूर्ण विचार ज्यादा प्रभावित करते हैं। भावनाओं की तुलना एक पाव रोटी में खमीर से की जा सकती है, क्योंकि खमीर के सामान ही भावनाएं कार्य तत्व को संगठित करती है, जो विचारों के आवेश को निष्क्रिय से सक्रिय स्थिति में परिवर्तित कर देती है।

आप अपने अवचेतन-मन की "आंतरिक आवाज" को प्रभावित एवं उस पर नियंत्रण करने के लिए स्वयं को तैयार कर रहे हैं; जिससे आप अपनी उस आकांक्षा को किसी दूसरे को हस्तांतरित कर सकें, जिसे आप भौतिक रूप में परिवर्तित करने की इच्छा रखते थे। अत: यह आवश्यक है कि आप इस 'आंतरिक आवाज़' से सम्पर्क करने के लिए अपनाई जाने वाली विधि को समझें। आपको इसकी भाषा बोलनी चाहिए, नहीं तो यह आप की बात नहीं सुनेगा। यह केवल हृदय की बात सुनता है, क्योंकि यह भावनाओं या अनुभूतियों की भाषा को बहुत अच्छी तरह समझता है। अत: आइये, हम यहां प्रमुख सकारात्मक भावनाओं और प्रमुख नकारात्मक भावनाओं की व्याख्या करें ताकि जब आप अपने अवचेतन-मन को निर्देश दे रहें हो तब आप सकारात्मक भावनाओं को अपना सकें तथा नकारात्मक भावनाओं से बच सकें।

प्रमुख सकारात्मक भावनाएं

- इच्छा
- विश्वास
- प्यार
- आशा
- उत्साह

यद्यपि और भी कई सकारात्मक भावनाएं हैं, लेकिन ये सबसे शक्तिशाली हैं, और रचनात्मक प्रयास में सामान्य रूप से सबसे ज्यादा इसका उपयोग किया जाता है। यदि आप इन भावनाओं (इन्हें केवल माहिर होने पर ही उपयोग किया जा सकता है) में पारंगत हो जाते हैं तो अन्य दूसरी सकारात्मक भावनाएं आपके नियंत्रण में होगी, जब आपको उनकी आवश्यकता होगी।

प्रमुख नकारात्मक भावनाएं

- भय
- घृणा
- लालच
- क्रोध
- ईर्ष्या

सकारात्मक और नकारात्मक भावनाएं मन पर एक समय एकसाथ अधिकार नहीं कर सकती है। दोनों में से कोई एक ही हावी हो सकती है। यह सुनिश्चित करना आपकी जिम्मेदारी है कि सकारात्मक भावनाओं को संगठित करके अपने मन को प्रभावित करें।

यहाँ आपको आदत के नियम की सहायता लेनी होगी। सकारात्मक भावनाओं को लागू करने और उनको प्रयोग की आदत विकासित करनी होगी। अंततः ये आपके मन पर पूर्ण रूप से हावी हो जाऐंगी, जिससे नकारात्मकता आपके मन में प्रवेश नहीं कर सकती। 'भयमुक्त' शीर्षक वाले अध्याय में भय की नकारात्मक भावनाओं की विस्तृत व्याख्या की गई है।

अवचेतन-मन मानव के सीमित-मन और ईश्वर के अनंत ज्ञान के बीच सेतु का कम करता है। यह एक मध्यस्थ है जिसके माध्यम से कोई भी व्यक्ति अनंत ज्ञान के बल को प्राप्त कर सकता है। केवल प्रक्रिया द्वारा ही विचारों के आवेग को संशोधित कर उन्हें भौतिक स्वरूप में बदला जा सकता है। यही अकेला ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा हमारी प्रार्थनाएं उन सक्षम स्रोतो में प्रेषित की जा सकती है, जो प्रार्थनाओं का जवाब देने के लिए सक्षम है।

आपके द्वारा अवचेतन-मन के अस्तित्व एवं आपकी इच्छाओं को भौतिक रूप में परिवर्तित करने हेतु इस माध्यम को वास्तविकता के रूप में स्वीकार कर लिए जाने के पश्चात् आपको 'इच्छा' अध्याय में दिए गए निर्देश का पूरा महत्व समझ आ जाएगा, आपको यह भी समझ आ जाएगा कि आपको बार-बार अपनी इच्छाएं स्पष्ट करने और इन्हें लिखने के लिए क्यों कहा गया है। आपको यह भी समझ आ जाएगा कि निर्देशों के पालन में दृढ़ता की क्यों आवश्यकता है।

अगर आप यह पहली बार में नहीं कर पाते हैं तो हतोत्साहित मत होइए। याद रखिए इस अवचेतन-मन को केवल 'विश्वास' शीर्षक के अध्याय में दिए गए निर्देशों के अनुसार आदत विकसित करके ही निर्देशित किया जा सकता है। उक्त अध्याय में दिए गए निर्देशों के 'विश्वास' पर पूर्ण नियंत्रण में समय लग सकता है। अतः धैर्य और सततता बनाएं रखें।

इस पुस्तक के कुछ अध्यायों में बहुत से अच्छे व्यक्तव्यों को आपके अवचेतन-मन के लाभ के लिए पुनः दोहराया जा रहा है। याद रखें, आपका अवचेतन-मन निरंतर कार्य करता रहता है, चाहे आप कोई प्रयास कर रहों या नहीं। अगर आप अपने अवचेतन-मन में सकारात्मक विचारों को स्थापित करने में असफल रहते हैं, तो यह आपकी लापरवाही का लाभ उठाते हुए उसमें नकारात्मक सोच को स्थापित कर देगा।

वर्तमान के लिए, यह पर्याप्त है यदि आप यह याद रख पाते हैं कि आप सभी प्रकार के उन विचार आवेगों के बीच आपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं जो आपके जाने बिना आपके अवचेतन-मन में पहुंच रहे हैं। कुछ आवेग नकारात्मक होते हैं, कुछ सकारात्मक। अतः आपको नकारात्मक आवेगों के प्रवाह के प्रवेश को रोकने का प्रयास करना है, तथा स्वैच्छिक प्रयासों से इच्छा के सकारात्मक आवेगों द्वारा आपको अपने अवचेतन-मन को प्रभावित करना है

जब इसे प्राप्त कर लेंगे, तो आपको अपने अवचेतन-मन के दरवाजे को खोलने की चाबी मिल जाएगी। इसके अलावा आप उस दरवाजे को पूर्ण रूप से नियंत्रित भी कर पांएगे ताकि आपके अवचेतन-मन को कोई भी अनैच्छिक विचार प्रवेश न कर सके।

–*–

अध्याय 11

निर्भयता – भय पर नियंत्रण

ज्यादातर लोगों से, यदि पूछा जाए कि वे उन्हें सबसे ज्यादा डर किससे लगता है, जवाब मिलेगा "मैं किसी चीज़ से नहीं डरता।" लेकिन कुछ लोगों को महसूस होता है कि उन्हें किसी न किसी प्रकार के भय ने नियंत्रित कर रखा है । ज्यादातर भय के आक्रमण की शुरूआत बचपन में ही प्रारम्भ हो जाती है। इसलिए सूक्ष्मता एवं गहराई से मन में बैठे हुए डर को फोबिया कहते हैं, जिसके बोझ तले सारा जीवन निकल जाता है, और उसकी उपस्थिति का पता नहीं चलता। इस भय की उत्पत्ति का सच स्वीकार करने के लिए पर्याप्त साहस आवश्यकता होती है और इस सम्बन्ध में सुधारात्मक कदम उठाने के लिए तो और अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है।

स्वामी विवेकानंद ने कहा था "वीर भोग्या वंसुधरा" अर्थात 'हीरो ही जीवन भोगते हैं', यह अमोघ सत्य है। नायक बनें। सर्वदा कहें 'मुझे किसी का कोई डर नहीं है'। इसे सबको बताइए कि आपको कोई डर नहीं है। मृत्यु, पाप, नरक, अधर्म और कठिन जीवन, किसी का भय नहीं। इस संसार में समस्त नकारात्मक विचार और सिद्धांत भय की इस शैतानी आत्मा से ही उत्पन्न होते हैं।

भय कुछ और नहीं एक 'भ्रम' है अत: इसे नियंत्रित किया जा सकता है। चिकित्सक सामान्य लोगों की तुलना में रोगों से कम डरते हैं। इसका कारण है कि चिकित्सक जानते हैं कि रोग का कैसा पता चलता है और उसका कैसे इलाज किया जा सकता है । आप भी अपने भय का पता लगा सकते हैं और उसका कारण जानकर उसे नियंत्रित कर सकते हैं।

भय के तीन प्रमुख रूप हैं जो इस प्रकार हैं :-

1. मृत्यु का भय
2. असफल होने का भय
3. गरीबी का भय

1. मृत्यु का भय:

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा- न्यन्यानि संयाति नवानि देही ।

अर्थात

जिस प्रकार मनुष्य पुराने वस्त्रों का त्याग कर नए वस्त्र धारण करता है उसी प्रकार आत्मा पुराने शरीर को त्यागकर नए शरीर को धारण कर लेती है। (श्रीमद्भगवद्गीता 2-22)

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक:
न चैनं क्लेदयन्त्यापो प शोषयति मारूत:

अर्थात

आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकता, आग इसे जला नहीं सकती, जल इसे गला नहीं सकता और वायु इसे सुखा नहीं सकती। (श्रीमद्भगवद्गीता -2-23)

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एवं च ।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः ।।

अर्थात

आत्मा नित्य, सर्वव्यापी अचल स्थिर रहने वाली और सनातन है। (श्रीमद्भगवद्गीता 2-24)

अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते।
तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि॥
अर्थात

यह आत्मा इंद्रियों, मन की पहुँच से बाहर है तथा यह न जन्म लेती है, न बढ़ती है और न मरती है। यह जानकर तुम्हें चिंता नहीं करनी चाहिए! (श्रीमद्भगवद्गीता 2-25)

लगभग हर व्यक्ति को मृत्यु से भय लगता है - मरने एवं अनजाने लोक में स्वयं को खो देने से। अत: यह भय उसे समस्याओं और संकटों से भाग जाने का दबाव डालता है। एक बुद्धिमान व्यक्ति इन भ्रम के चुंगल में कभी नहीं आता कि वह सिर्फ शरीर और मन है। वह जानता है कि उसकी मूलभूत पहचान उसकी अविनाशी आत्मा है।

यहां यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि श्रीमद्भगवद्गीता धर्म के नाम किसी दूसरे की हत्या की वकालत नहीं करती। यह धर्मपूर्ण जीवन जीने तथा धर्म की खोज के लिए अपने जीवन को त्याग करने की अपील करती है।

मनुष्य को बुढ़ापे और बुरे स्वस्थ के कारण भी मृत्यु का भय लगता है। मृत्यु के भय पर विजय पाने की रामबाण दवा है, अन्य लोगों के उपयोगी सहयोग से सफलता की प्राप्ति का जुनून। एक व्यस्त व्यक्ति के पास मृत्यु के बारे में सोचने का समय नहीं होता। वह जीवन को बहुत रोमांचक पाता है और उसे मौत की चिंता ही नहीं होती।

वास्तव में मृत्यु, जीवन का सबसे महत्वपूर्ण प्रेरणास्रोत है। यह हमें जीवन और समय के मूल्य को समझाकर प्रेरणा देती है एवं जीवन के प्रत्येक पल को श्रेष्ठ बनाने के लिए हमें उत्साहित करती है।

2. **असफलता का भय:** मनुष्य असफलता, अलोचना और अपमान से डरता है। अत: यह डर उसे निष्क्रिय बनाता है, या अनुचित साधनों का सहारा लेने के लिए बाध्य करता है, लेकिन प्रत्येक असफलता, सफलता का एक बीज बोती है। असफलता के डर को दूर करने के लिए, मनुष्य को सफलता और विफलता दोनों के लिए तटस्थता का भाव विकसित करने के प्रयास करने चाहिए। इसका मतलब यह नहीं है मनुष्य रोबोट (यंत्र) की तरह जीए। इसके लिए उसे विपरीत भावनाओं को अपने नियंत्रण में रखना होगा, बजाए इसके कि विपरीत भावनाएं उसे काबूकर लें।

एक छात्र जिसने परीक्षा पास की है वो अति आत्मविश्वासी हो सकता है, आगे की पढ़ाई की उपेक्षा करता है, वो भविष्य की परीक्षा में असफल हो सकता है। वहीं दूसरी ओर, असफलता से हताश एक छात्र आत्महत्या या स्कूल छोड़ने का पीड़ादायक निर्णय ले सकता है।
इसी तरह एक नेता चुनाव में सफलता पा कर उत्साहित हो कर अति अभिमानी और अपनी पार्टी के कार्यकर्ताओं और जनता से विमुख हो सकता है। इसके विपरीत अस्थायी हार से हताश उममीदवार हमेशा के लिए राजनीति को छोड़ सकता है या सिद्धांतों और विवेक से समझौता करके सत्ताधारी पार्टी में शामिल हो सकता है। व्यक्ति जो अपनी सफलता या असफलता के प्रभाव में नहीं आता है, महानतम सफलता की ओर अग्रसर हो जाता है।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ।।
अर्थात

स्वधर्म निहित कर्म करना ही तुम्हारे अधिकार क्षेत्र में है परंतु उस कर्म का फल तुम्हारे अधिकार क्षेत्र से बाहर है, अतः तुम स्वयं को न तो कर्म के फल का कारण मानो और ना ही कभी कर्म करने से विमुख हो, कर्म के परिणाम ईश्वर के अधिकार क्षेत्र में है उन्हीं को निर्णय लेने दो । (श्रीमद्भगवद्गीता 2-47)

योगस्थः कुरु कर्माणि संग त्यक्त्वा धनंजय ।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।।

अर्थात

'मैं', 'मुझे', 'मेरे' की स्वार्थपूर्ण भावना से बाहर निकलें और अपना कार्य करते रहें, चाहे आपको सफलता मिले या नहीं। मन की इस समता को योग कहा जाता है। (श्रीमद्भगवद्गीता 2-48)

गांधीजी ने उपर्युक्त श्लोक की व्याख्या इस प्रकार की है :

" *कर्तव्य का पालन करते हुए फल की इच्छा अथवा पुरस्कार की लालसा का त्याग"।*

परन्तु फल की इच्छा अथवा पुरस्कार की लालसा का त्याग का अर्थ कर्म के परिणाम के प्रति उदासीनता नहीं है। प्रत्येक कर्म के संबंध में व्यक्ति को उसके साधनों, उसके लिए अपेक्षित क्षमता और आने वाले परिणामों का अवश्य पता होना चाहिए। जब कोई इसका ध्यान रख कर, पूर्णत: सुसज्जित होकर, परिणाम की चिंता किये बिना, अपने कार्य को पूर्ण करने में तल्लीन रहता है, तो इस स्थिति में ही यह कहा जाता है कि उसने कर्तव्य का पालन करते हुए फल की इच्छा अथवा लालसा का त्याग कर दिया है।

अनासक्ति से मेरा तात्पर्य यह है कि आपको यह चिंता नहीं करनी चाहिए कि आपके द्वारा किये गए प्रयासों के वांछित परिणाम आयेंगे या नहीं। अगर आपने साधनों का उचित प्रयोग किया है तो फल को भगवान पर छोड़ दो, क्योकि परिणाम तो अंत में आते हैं। जो व्यक्ति अपने कार्य के परिणाम के प्रति चिंतित रहता है, वो अपने लक्ष्यों को नहीं देख पाता; वह केवल अपने विरोधियों और रुकावटों को देखता है। इन परिस्थितियों में वह कठिनाइयों का सामना करने में अपने को अयोग्य पाता है; वह पलायनवादी हो जाता है या हताशा और निराशा से बाहर आने के लिए हिंसा का सहारा लेता है ।

दूसरी ओर जो व्यक्ति परिणाम के प्रति अनासक्त रहता है और बिना किसी फायदे या शक्तियों या यश हासिल करने के विचारों को ना सोचते हुए अपने सर्वश्रेष्ठ प्रयास करता है और जब कठिनाइयां आती है तो उनसे विचलित नहीं होता है, उसे प्रत्येक परीक्षा की घड़ी में अपना मार्ग स्पष्ट दिखाई देता है क्योंकि उसकी आंखे हमेशा लक्ष्य पर ही होती हैं।"

कानूनी कैरियर को आगे बढ़ाते हुए गांधी जी के पास का उपयोग करने के लिए कोई रचनात्मक ज्ञान-संग्रह नहीं था। यह तब होता है जब कोई व्यक्ति दूसरों के लिए जीना शुरू करता है तब वह अपने अंदर लगभग अनियत्रित शक्ति पाता है। जब गांधी जी अपनी आयु के साठवें दशक में थे तो वह अपने बीसवें दशक की तुलना में कई गुना अधिक शक्ति से कार्य करते थे, क्योंकि उन्होंने यह सीख लिया था कि सफलता और असफलता के बारे में चिंता करना व्यर्थ है वह अपनी सारी शक्ति बिना किसी चिंता या थकान के बोझ महसूस किए बिना एकाग्रता से कार्य करने पर लगा देते हैं और वह अपने दिमाग में यह बोझ नहीं रखते थे कि क्या होगा।

एक पत्रकार ने एक दिन उन से पूछा, " गांधी जी आप पिछले लगभग 15 वर्षों से प्रतिदिन कम से कम पंद्रह घंटे काम करते आ रहे हैं। क्या आपको नहीं लगता कि अब ये समय है कि आप छुट्टी ले लें? 'क्यों' गांधी जी ने पूछा "मैं तो हमेशा ही छुट्टी पर रहता हूँ।"

3. **गरीबी का भय:** गरीबी जैसी पीड़ा और अपमान मनुष्य को कोई नहीं दे सकता। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि मनुष्य गरीबी से डरता है और गरीबी से बचने के लिए किसी भी प्रकार से धन संचयन का प्रयास करता है ।

धन स्वयं में कोई बुराई नहीं है, मनुष्य को अपनी जिंदगी चलाने, भोजन, कपड़ों और छत के लिए धन अर्जन करना पड़ता है। धन का लालच और वासना ही बुराई की जड़ है ।

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥ अर्थात
बुद्धिमान व्यक्ति अपेक्षाओं के दबाव से मुक्त रहते हैं तथा मन और शरीर के साथ अपनी समस्त इंद्रियों पर मजबूती से अपना नियंत्रण बनाए रखते हैं और कार्य करते समय किन्ही भी परिस्थितियों में पाप कर्म नहीं करते। (श्रीमद्भगवद्गीता 4: -21)

गांधीजी के इस श्लोक की अपने विचार के अनुसार निम्नानुसार व्याख्या की है :

"कोई व्यक्ति किस प्रकार 'अपरिग्रह' (गैर अधिपत्यतता) का अभ्यास करे? क्या मुझको उन सब का त्याग करना था जो मेरे पास था और भगवान का ध्यान करना था?

इसका सीधा उत्तर है: मैं तब तक उसका ध्यान नहीं कर पाया जब तक मैंने उन सब का त्याग नहीं किया जो मेरे पास थी। अंग्रेजी कानून की पढ़ाई से मुझे बहुत सहायता मिली। मैंने भगवद्गीता की शिक्षा 'गैर-अधिपत्यतता' को समझा, जो हमें यह सिखाती है कि हमें एक ट्रस्टी की तरह कार्य करना चाहिए, जो सभी संपत्तियों पर नियंत्रण तो रखता है, परन्तु स्वयं के लिए नही, वो उन सबको अपना नहीं मानता ।

अपने बारे में बिल्कुल भी चिंता न करें, सारी चिंताएं भगवान पर छोड़ दें - यह सभी धर्मों में आज्ञा के रूप में पाया जाता है। इससे किसी को डराने की आवश्यकता नहीं है। जो स्वयं को शुद्ध अंत: करण के साथ सेवा हेतु समर्पित करता है, वह आने वाले दिनों में यह समझ जाएगा कि इस दिशा में बेहतर ढंग से सेवा की आवश्यकता है तथा उसकी आस्था और अधिक बढती जाएगी।

जिस चीज की किसी व्यक्ति को जरूरत नहीं है उसे नहीं मिलनी चाहिए और ना ही उसे अपने पास रखनी चाहिए। अनावश्यक खाद्य पदार्थों कपड़े या फर्नीचर का संचय करना इस सिद्धांत का उल्लंघन है। दृष्टांत स्वरूप, किसी व्यक्ति को अपने पास कुर्सी नहीं रखनी चाहिए, अगर वह उसके बिना रह सकता है। इस सिद्धांत को अपनाते हुए, कोई भी व्यक्ति अपने जीवन को सरलीकृत रूप से प्रगतिशील बना सकता है"।

यहाँ पर ध्यान रखने वाली महत्वपूर्ण बात यह है कि गरीबी में डूबे रहना या बिना धन अर्जन के बेकार समय गुजारना कोई रोमांचक बात नहीं है। यह आस्था महत्वपूर्ण है कि भगवान ही उन व्यक्तियों के आवश्यकताओं का ध्यान रखता है जो मानवीयता की सेवा के रूप में भगवान की सेवा में समर्पित है। यहां यह बात भी ध्यान देने वाली है कि सिर्फ धन अर्जन के लिए गलत साधनों का सहारा लेने से बचना चाहिए।

जब गांधी जी आश्रम की मरम्मत कर रहे थे तो अप्रत्याशित रूप से कई गुमनाम दान-दाताओं चुपचाप गुप्त-दान दिया। स्वतंत्रता संग्राम के लिए जब स्वयंसेवक धन एकत्र कर रहे थे तो बहुत सी महिलाओं और बच्चों ने भी अपनी शक्ति के अनुसार, जो वो दे सकते थे, दान दिया ।

भयमुक्तता एक मानसिक स्थिति है जो एक बार में प्राप्त करनी मुश्किल है। हमें पूरे विश्वास के साथ कार्य करने की आवश्यकता है, चाहे हमारा मन कितना भी भय से भरा क्यों न हो। इसके पश्चात, धीरे धीरे भय आपके अधीन हो जाएगा और हमारी जिंदगी पर से उसका नियंत्रण कम होता जाएगा।

–*–

अध्याय 12

दृढ़ता - कुछ भी असंभव नहीं

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः ।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥

अर्थात

जिस व्यक्ति का अपना मन उसके नियंत्रण में है, वह स्वयं का सहयोगी बन जाता है। जिस व्यक्ति का अपना मन उसके नियंत्रण में नहीं है, वह स्वयं का शत्रु बन जाता है। (श्रीमद्भगवद्गीता - 6-6)

गांधी जी ने कहा था "*मुझे इस बात पर कतई संदेह नहीं है कि कोई भी स्त्री या पुरूष वो सब प्राप्त कर सकता है जो मेरे पास है, यदि वे मेरी तरह ही प्रयास और मेरी तरह आशा एवं विश्वास उत्पन्न करे"।*

लेकिन जिन आदतों की जड़े गहरी हो चुकी है उनको उखाड़ने के लिए अतिरिक्त परिश्रम करने की आवश्यकता होगी; खासतौर पर जब हम स्वयं जानते हों कि उनका कारण यही हैं। जिस व्यक्ति ने अपने मन को जीत लिया है उसका मन उसका श्रेष्ठ मित्र होता है । जो व्यक्ति ऐसा करने में असफल हो जाता है, उसका मन उसका सबसे बड़ा शत्रु होगा ।

असफलता का सब से बड़ा सामान्य कारण अस्थायी असफलता की गिरफ्त में आने के बाद प्रयास छोड़ देना है। ज्यादातर लोग कभी ना कभी ऐसी गलती करने के दोषी हो जाते हैं । एक आम मनुष्य की सबसे बड़ी कमजोरियों में से एक सामान्यत: 'असंभव' शब्द से अपनापन महसूस करना है। वो ऐसे सभी नियम जानते हैं जो काम नहीं करेंगे। वो उन सभी चीज़ो को जानते हैं जो नहीं की जा सकती हैं ।

गांधी जी भी अपनी निजी जिंदगी एवं स्वतंत्रता संग्राम में, अपने प्रयोगों के दौरान बहुत बार असफल हुए थे। ब्रह्मचर्य पर उनका प्रयोग मिथ्याबोध और आलोचना का कारण बना। 'खिलाफत आंदोलन' के लिए उनका सहयोग दो धर्मों के बीच सहयोग की कुछ खास आशा नहीं जगा सका। उनका अहिंसक आंदोलन चौरी-चौरा जैसे कुछ स्थानों पर हिंसक हो गया और इस बात का हवाला देते हुए कि लोग ऐसे अभियानों के लिए तैयार नहीं हैं, अभियान को स्थगित करना पड़ा। आदर्श राज्य के रूप में रामराज्य (अर्थात् उत्कृष्ट दिव्य राज्य, न कि पौराणिक राम का शासन) की परिकल्पना के विचार का समाज के विभिन्न वर्गों से घोर विरोध हुआ। किंतु वे अपनी गलतियों से सीखते रहे और उन्होंने कभी स्वतंत्रता संग्राम को नहीं छोड़ा ।

मनुष्य की एक और कमजोरी, अपनी विचारधाराओं और मानकों के आधार पर सभी चीज़ो और सभी लोगों का मूल्यांकन करना है। उनकी ये वैचारिक आदत अज्ञान, दु:ख, अंधविश्वास इत्यादि में इतनी अधिक डूबी होती है कि जो बात वे समझ नहीं पाते, वे उन पर विश्वास करने से इंकार कर देते हैं। उनका मूर्खतापूर्वक विश्वास होता है कि उनकी अपनी सीमाएं ही सभी की सीमाओं को मापने का पैमाना है ।

एक इतिहासकार, जो बाद में गांधी जी का सहायक बन गया, कभी स्वीकार नहीं कर पाया कि अहिंसक लड़ाई से स्वतंत्रता पाई जा सकती है। उन्होंने कहा "गांधी जी, आप गीता के बारे में भले ही सब कुछ जानते हों, पर इतिहास के बारे में आप कुछ नहीं जानते। कोई भी राष्ट्र बिना युद्ध यानी हिंसा के स्वयं को कभी स्वतंत्र नहीं करा पाया है"।

गांधी जी मुस्कराए उन्हें विन्रमतापूर्वक समझाया "पहली बात आपको इतिहास के बारे में यह समझाना होगा, क्योंकि अतीत में ऐसा कुछ नहीं हुआ है इसका मतलब यह नहीं है कि भविष्य में ऐसा नहीं हो सकता"। गांधी जी के जीवन की कुछ ऐतिहासिक घटनाएं निम्नलिखित हैं :

1. 1888-1891 - लंदन से बैरिस्टर की कानूनी डिग्री प्राप्त करना।

2. 1893 - दक्षिण अफ्रीका गए और भारतीय आप्रवासियों के नस्लीय उत्पीड़न के विरूद्ध अभियान शुरू।

3. 1915 - भारत वापिस लौटे।

4. 1919 - अमृतसर, जनरल डायर द्वारा किये गए अनगिनत शांतिपूर्ण प्रदर्शनकारियों के नरसंहार के विरुद्ध गांधी जी के असहयोग आंदोलन का शुभारंभ।

5. 1922 - राजद्रोह के आरोप में छह साल की कैद की सजा।

6. 1930 - ब्रिटिश सरकार द्वारा लगाए गए नमक-कर के कानून को तोडने के लिए दांडी में हजारों लोगों के नमक-मार्च का नेतृत्व।

7. 1931 - भारतीय स्वशासन की मांग के लिए, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में लंदन सम्मेलन में भाग लेना।

8. 1942 - भारत छोड़ो आंदोलन।

9. 15 अगस्त, 1947 - विभाजन और सांप्रदायिक हिंसा के बीच भारत को आजादी।

10. 30 जनवरी 1948 - दैनिक प्रार्थना खत्म करने और आगंतुकों से मिलते समय गांधी जी की हत्या।

सफलता उन्हें मिलती है जो सफलता के प्रति जागरूक होते हैं। असफलताएं उनके पास आती हैं जिन्होंने खुद असफलता को अपने पास आने की अनुमति दे रखी है। चाहे आप जागे हो या चाहे सो रहे हों, आपका अवचेतन-मन निरंतर कार्य करता रहता है। अनियमित रूप से अथवा कभी-कभी कार्य करने का नियम आपके लिए उपयोगी सिद्ध नहीं होगा। अत: आपको सभी नियमों का तब तक पालन करना है जब तक उनको लागू करना आपकी नियमित आदत न बन जाए।

दृढ़ता की कमी के लक्षण:

1. व्यक्ति क्या चाहता है इस तथ्य की पहचान में विफलता और स्पष्ट रूप से उसका परिभाषित न होना।

2. किसी कारण या बिना कारण (बहानेबाजी) काम टालने की प्रवृत्ति।

3. आवश्यक ज्ञान प्राप्त करने में रुचि की कमी।

4. सारे शॉर्ट-कट ढूँढना, बिना कुछ दिए बदले में सब कुछ पाने की कोशिश करना (जुआ, लॉटरी, चोरी आदि)।

5. आलोचना का डर, योजना बनाने और उसको कार्यान्वित करने में असफल होने पर, लोग क्या सोचेंगे और क्या कहेंगे।

बहुत से लोग मानते हैं कि सफलता तो भाग्य का परिणाम है। इस मान्यता में थोड़ी सच्चाई हो भी सकती है। लेकिन पूर्ण रूप से भाग्य पर निर्भर हो जाना, हमेशा निराशा की ओर ले जाता है, क्योंकि वे यह समझने में असफल हो जाते हैं कि 'भाग्य' एक ऐसा बिंदु है जहां 'अवसर' और उसके लिए की गयी 'तैयारी' आपस में मिलती है ।

हतोत्साहित मत हों ! दृढ़ता मन की एक स्थिति है, अतः इसे उत्पन्न किया जा सकता है। इसके चार सरल चरण है जो दृढ़ता की आदत को बढ़ाते हैं। इन्हें बहुत बुद्धिमता की नहीं अपितु थोड़े से समय अथवा प्रयास की आवश्यकता होती है ।

ये आवश्यक चरण निम्नानुसार हैं: -

1. एक या एक से अधिक व्यक्तियों के साथ एक अनुकूल गठबंधन बनाना, जो आपको कार्यों के माध्यम से प्रोत्साहित करेंगे ।

2. एक तीव्र ज्वलंत इच्छा की पूर्ति के लिए एक परिभाषित एवं लिखित उद्देश्य ।

3. निरंतर कार्ययोजना की विधिवत परिभाषित योजना।

4. सभी नकारात्मक प्रभावों, चाहे वे स्वयं द्वारा बनाए गए हों अथवा दूसरे द्वारा, के विरूद्ध मन के दरवाजे मजबूती से बंद रखना।

गांधी जी ने कहा था कि पहले वो तुम्हारी उपेक्षा करते हैं, फिर आपका उपहास उड़ाते हैं, फिर आपसे लड़ते हैं और आप जीत जाते हैं ।

-*-

भाग 2

आध्यात्मिक सफलता

एक विश्वासी बालक यह जानना चाहता था कि *जीवन का उद्देश्य क्या है ?* वह बहुत दिनों तक बहुत से स्थानों पर भटकता रहा और अन्तत:, ऊँची पहाड़ी के शिखर पर स्थित एक सुंदर सराय में पहुँचता है। उसे बताया गया था कि ये ऐसी जगह है जहां एक विद्वान आदमी रहता है, जो उसके प्रश्नों का उत्तर दे सकता है ।

सराय के मुख्य कमरे में प्रवेश करने पर, एक सफेद दाढ़ी वाले बुजुर्ग व्यक्ति के बजाय, बालक ने राजसी कपड़े गहने और शस्त्र धारण किए हुए एक महाप्रतापी व्यक्ति को देखा । कमरे में गतिविधियों का तांता लगा हुआ था, मिलने वाले आ–जा रहे थे, किनारे बच्चे खेल रहे थे, एक छोटा सा ऑर्केस्ट्रा हल्का–हल्का संगीत बजा रहा था और कदाचित अत्याधिक स्वादिष्ट भोजन की थाली मेज पर ढकी हुई थी। वह विद्वान व्यक्ति आगंतुकों से बात रहा था, भोजन परोस रहा था तथा बच्चों के साथ खेल रहा था। बालक को अपनी बारी आने से पहले कुछ समय तक इंतजार करना पढ़ा।

उस विद्वान व्यक्ति ने लड़के के प्रश्न को बड़े ध्यान से सुना, लेकिन उत्तर देने कि बजाए उसने यह कह कर उसे टाल दिया कि उनके पास अभी इसका उत्तर देने के लिए समय नहीं है। उन्होंने उस बालक को सुझाव दिया कि वह तब तक महल में घूमें और तीन घण्टे बाद वापिस आ जाए। साथ ही उस विद्वान व्यक्ति ने कहा "मैं तुम्हें कुछ करने के लिए कहना चाहता हूँ" और उसने उस बालक को एक दीपक थमा दिया और कहा "जब घूमने जाना तो दीपक लेते जाना और बिना बुझे वापस ले लाना"।

बालक ने दीपक पर आंख जमाए हुए बहुत सारे कमरों से गुजरते हुए महल बहुत सी सीढ़ियों से चढ़ना उतरना शुरू किया। तीन घण्टे के बाद, वह उस कमरे में वापस लौट आया जहां वह विद्वान आदमी बैठा था ।

विद्वान व्यक्ति ने पूछा "अच्छा, क्या तुमने मेरे कमरे में रखी खूबसूरत मूर्ति को देखा ? क्या तुमने ध्यान दिया कि मेरे पुस्तकालय में कितनी किताबें हैं ? क्या तुमने बगीचे में उन विदेशी पौधों ओर जानवरों को देखा जो मैंने पूरी दुनिया से एकत्रित की हैं"?

लड़का बहुत शर्मिंदा हुआ और उसने कबूल किया कि उसने किसी भी चीज पर ध्यान नहीं दिया। उसका ध्यान केवल इस बात पर था कि कहीं दिया बुझ न जाए ।

विद्वान व्यक्ति ने कहा 'वापिस जाओ और मेरे महल के सभी आश्चर्यजनक चीज़ों को देखों, तुम्हारी मेजबानी करना मेरे लिए सम्मान की बात होगी, अगर तुमने इसकी सजावट और रचनात्मकता का अनुभव किया "।

बालक ने दीपक उठाया और पुन: महल को घूमने निकल पड़ा, इस बार उसने फर्श, छत और दीवारों पर कलाकृतियों, बगीचे और फव्वारे, सुंदर सेविकाओं, सेवकों एवं और लोगों को भी देखा।

मुख्य कमरे में लौट कर, बालक ने उन चीजों पर आश्चर्य व्यक्त करते हुए उस विद्वान व्यक्ति की अभिरूचियों की प्रशंसा की । विद्वान व्यक्ति ने पूछा "लेकिन इस दीपक की लौ कहां है जिसे मैंने तुम्हे सौंपा था"? बालक ने दीपक की ओर देखा कि लौ बुझ गई है ।

''विद्वान व्यक्ति ने कहा वास्तव में, जीवन का उद्देश्य रचनात्मकता के सभी आश्चर्यों का आनंद उठाना है और दीपक को कभी बुझने नहीं देना है"।

सीधे शब्दों में कहें तो जीवन के उद्देश्यों को हम निम्नलिखित चार भागों में विभाजित कर सकते हैं:

1. धर्म (न्यायसंगत जीवन की व्याख्या बुद्धिमत्ता शीर्षक अध्याय में की गई है)

2. अर्थ (जीवन-निर्वाह के लिए धन अर्जन करना)

3. काम (धर्मसंगत इच्छाओं को पूर्ण करना)

4. मोक्ष (मुक्ति प्राप्त करना)

लेकिन इन चार भागों का कोई चरणबद्ध क्रम नहीं है और न ही सशक्त उपखण्ड या कठोर विभक्ति की गई है। ये प्राय: किसी भी क्रम में एक दूसरे के पीछे चलते रहते हैं। उदाहरण स्वरूप, हमें बिना धर्म का उल्लंघन किए धन अर्जन या इच्छाओं की पूर्ति करने की आवश्यकता है। हमें मुक्ति प्राप्त होने के बाद भी धर्म को आगे बढ़ाना है, धन अर्जन करना है और इच्छाओं की पूर्ति करनी है ।

शिक्षा ग्रहण के समय, व्यक्ति को धर्म के बारे में अवश्य जानना अपेक्षित है कि उसे जीवन भर धर्म का पालन करना होगा। उदाहरण के लिए किसी को परीक्षा में नकल या रोजगार पाने के लिए रिश्वत अथवा प्रभाव का सहारा आदि नहीं लेना चाहिए। हर व्यक्ति को हृदय से एवं समर्पण के साथ और बिना रिश्वत स्वीकार किए अपना कार्य करना होगा । इस प्रकार व्यक्ति को धर्म के अनुसार जीना होगा और स्वयं को, परिवार को और समाज को स्थिर रखने के लिए धन अर्जन करना होगा। महत्वपूर्ण कार्यो पर ध्यान न देने अथवा धार्मिक कर्तव्यों का पालन न करना भी धर्म का उल्लघन है। उसे संतति उत्पन्न करने और साथ ही साथ भक्ति के पथ पर आगे बढ़ने जैसी उसकी धार्मिक इच्छाओं को भी पूर्ण करना होगा । मुक्ति कोई ऐसी स्थिति नहीं है जो मृत्यु के बाद ही हो । हमें इसे यहां, इस जीवन के रहते हुए प्राप्त करना चाहिए । यथार्थ में, हम भगवान से कभी अलग नहीं हैं, परन्तु यह अहंकार का कार्य है जो हमारे शरीर एवं मन को दृष्टिहीन बनाता है और हमें अलग रूप में दिखाता है ।

इस पुस्तक के पहले भाग में भौतिक जीवन अथवा आर्थिक कल्याण की सफलता के लिए अनिवार्य सिद्धांतों की व्याख्या की गई है । ऐसा इसलिए आवश्यक है क्योंकि किसी भी व्यक्ति के लिए उच्च लक्ष्यों के बारे में सोचना मुश्किल होगा, यदि वो अपने जीवन यापन के संघर्ष में उलझा हो । लेकिन आध्यात्मिकता के आधार के बिना, भौतिक लाभ प्राप्त करना रिक्तता, असंतोष और उदासी का कारण बनता है । व्यक्ति का जीवन तभी प्रभावी बन पाता है, जब वह आध्यात्मिक आधार पर भौतिकवादी लक्ष्यों हेतु कार्य करता है।

लेकिन हममें से ज्यादातर लोग को इस बात का आश्चर्य हो सकता है कि धर्म का पालन के लिए सही समय क्या होगा ।

बचपन अज्ञानता और खेल-कूद में गुजर जाता है, किशोरावस्था कामसुख को संतुष्ट करने और पैसे के पीछे भागने में गुजर जाती है । वृद्धावस्था बच्चों की चिंता, अतीत के पछतावे, बीमार स्वास्थ्य और इसी तरह की चीजों में गुजर जाती है। बहुत से लोग मानते है कि जीवन के अंतिम दौर के लिए आध्यात्मिक चीज़ों को स्थगित कर सकते हैं और पहले उन्हें भौतिक चीज़ो पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। इस दृष्टिकोण के साथ तीन समस्याएं हैं।

1. हम निश्चित रूप से यह नहीं जानते कि वह कितने दिन जीवित रहेंगे और कौन सा पल हमारा आखरी पल होगा ।

2. लंबे समय के लिए भौतिकता में लिप्त रहने वाले व्यक्ति के लिए, आत्ममिकता में रूपांतरण बहुत कठिन होता है, क्योंकि गहराई से अंकित हो चुकी प्रवृत्तियों को तोड़ना मुश्किल होता है ।

3. वृद्धावस्था में मन और शरीर बहुत कमज़ोर हो जाते हैं और किसी भी नई विधा को अपनाने के लिए अनुकूल नहीं होते हैं।

अत: आध्यात्मिकता को अपनाने को सही समय अभी ही है!

–*–

अध्याय 13

उद्भव एवं विकास

हमारा जीवन, हमारे क्रमागत विकास के अतीत की पश्विक प्रवृत्ति द्वारा पीछे की ओर खींचने और हमारे भाग्य में निर्धारित वास्तविक मूल तक पहुँचने हेतु आगे बढने के बीच खीच-तान का समन्वय है ।

जब गांधीजी लंदन से अपना छात्रकाल, जिसने उन्हें पूर्णत: सभ्य और अपने "वैधानिक अधिकारों" के प्रति सचेत बना दिया था, पूरा करके वापस आए तो सबसे पहला व्यक्तित्व जिसे उन्होंने प्रभावित करने का प्रयास किया, वह उनकी पत्नी थी।

कस्तूरबाई एक दृढ़ इच्छाशक्ति वाली महिला थी । जब गांधीजी ने कस्तूरबाई पर अपना अधिकार जताना शुरू किया, तो स्वाभाविक रूप से उन्होंने भी ऐसा ही करना शुरू कर दिया । इस प्रकार प्राय: उनकी परस्पर असहमति उग्र रूप ले लेती थी और जो कस्तूरबाई के आंसू के रूप में बाहर निकलती थी, जिससे गांधी जी और खीज जाते थे ।

एक बार इसी हताशा में, वह उन पर चिल्लाए: "मैं अपने घर में ऐसी बकवास बर्दाश्त नहीं करूंगा ?"

कस्तूरबाई ने मंद स्वर में कहा, "तो अपना घर अपने पास रखिए और मुझे जाने दीजिए "

गांधी जी ने गुस्से में उनकी बांह पकड़ी और रोती हुई कस्तूरबाई को दरवाजे तक घसीट कर ले गए।

"वह चिल्लाई, क्या आपको तनिक भी शर्म नहीं आती? मैं कहाँ जा सकती हूँ? इस देश में कोई परिवार नहीं है जो मुझे सहारा देगा। क्योंकि मैं तुम्हारी पत्नी हूँ, तो तुम्हें लगता है कि मुझे आपके इस दुर्व्यवहार को सहना होगा ? भगवान के लिए ऐसा व्यवहार मत कीजिए और दरवाजा बंद कर दीजिए । इस तरह का कोई तमाशा मत खड़ा करिए ”।

उस समय वह सोचते थे कि पति के रूप में अपने विचारों को अपनी पत्नी पर थोपना उनका अधिकार था। हालांकि उनके बीच की ये तकरार जारी रही, लेकिन जैसे-जैसे समय बीतता गया, उन्हें यह एहसास होना शुरू हुआ कि उनके विश्वास का अशिष्ट रूप किस प्रकार कस्तूबाई की पीड़ा का कारण बना है। अंतत: उन्होंने माना कि खुद को सही ठहराने के बजाए उन्हें अपने ‘कर्तव्यों’ को पूरा करना चाहिए।

इसके बाद से उनहोंने, अपने नए आदर्शों और मूल्यों को कस्तूरबाई पर मानने का दबाव बनाने के बजाए, उन्होंने अपने ही उदाहरण देकर उन पर विजय प्राप्त करने की कोशिश शुरू कर दी। यह एक लंबी और पीड़ादायक प्रक्रिया थी और गांधीजी को अक्सर अपनी पसंद और नापसंद को नजरअंदाज करना पड़ता था और उन्हें चीजों को अपने नजरिये से देखने के बजाए कस्तूबाई के नजरिये से देखना पड़ता। परन्तु धीरे-धीरे उन्हें यह महसूस होना शुरू हो गया कि उनके बीच में कोई टकराव नहीं है सिवाए इसके कि वो चीजों को कस्तूरबाई पर थोपा करते थे और कस्तूरबाई ने हमेशा प्यार से उन्हें जीतने का प्रयास किया ।

कस्तूरबाई ने बजाए प्रतिरोध और उत्तेजना द्वारा परिस्थिति को और खराब करने के, गांधी जी के गुस्से एवं गलतियों को अनदेखा करते हुए, उनको निरंतर सहयोग प्रदान किया और ख़राब होते हुए अपने दांपत्य जीवन में से क्रोध एवं परस्पर तकरार को जड़ से समाप्त करने का रास्ता ढूंढ निकाला। उनमें जो अच्छा था उन्होंने (कस्तूरबाई ने) सिर्फ उस पर नजर बनाए रखी एवं चुपचाप उन्हें सम्मान के अनुरूप आचरण करने के लिए प्रोत्साहित करती रही।

गांधी जी के जीवनभर के अनुभवों में से सुधारवादी अविष्कारों में से एक मौलिक अविष्कार यह था कि दूसरों को बदलने से पहले स्वयं को बदलना होगा ।

धीरे-धीरे गांधी जी ने यह देखा कि कस्तूरबाई दैनिक जीवन में वही करने लगी थी जिनका वे स्वयं सैद्धांतिक आदर्शों के रूप में वे अनुसरण कर रहे हैं। गांधी जी ने कस्तूरबाई से धैर्य सीखा और बदले में उन्हें अपने जोशीले उत्साह के लिए उन्हें प्रेरित किया । वे दोनों एक दूसरे के शिक्षक बन गए थे।

यह प्रक्रिया एक बहुत लम्बे समय तक कठिन अनुशासन की मांग करती है, जिसके बारे में कहा जाता है कि इसमें इतने धैर्य की आवश्यकता है, जितने प्याले से सागर को खाली करने के प्रयास में। लेकिन हर बार वे दोनों अपने बीच की बाधाओं से बाहर निकल आए, उन्होंने जाना कि न केवल वे एक दूसरे के प्रति और ज्यादा प्रेम महसूस कर रहें हैं, अपितु वे दूसरे सभी लोगों के लिए भी अधिक प्रेम और धैर्य महसूस कर रहें हैं। तब तक गांधी जी ने अपने विरोधियों पर भी इस प्रेम को महसूस करना सीख लिया था, कस्तूरबाई भी जेल में थी और उनके नेतृत्व में अन्य महिलाएं एकत्र होने लगी।

अब जब आपने इस पुस्तक की अवधारणाओं को व्यवहार में लाना शुरू कर दिया होगा तो आपने अपने आसपास के लोगों के साथ होने वाली बातचीत में अपने बदलाव को महसूस करना शुरू कर दिया होगा। आपको यह एहसास होगा कि आपके जीवन में कुछ महत्वपूर्ण लोग, चाहे वो घर के हो या बाहर के, दोनों जगह के लोग, आपके इस बदलाव को पसन्द नहीं कर रहें हैं - चाहे आपका पूर्व के व्यवहार उनके लिए पूरी तरह मुसीबते क्यों ना करता रहा हो !

इसका कारण है कि आपके आसपास के लोग आपसे एक खास तरह से बातचीत करने के आदी हो चुके होते हैं। जब बातचीत के परिचित व्यवहार में कोई परिवर्तन होता है, तो आमतौर पर उससे भिन्न स्थितियों में अलग-अलग सीमा तक परेशानी होती है। यहाँ तक कि जब आपको इसका पता चलता है, तब यह बदलाव आपको अत्यंत व्याकुल कर सकता है और अपनी प्रगति को बाधित कर सकता है। ज़रा सोचें... जब आप अपने विकास की खुशी में अपने प्रशंसको द्वारा जश्न की तैयारी अपेक्षा कर रहे हों, और अचानक आप स्वयं को लड़ाके दस्ते के बीच पाएं। एक दूसरा कारण आपके शुभचिंतकों द्वारा आपकी सुरक्षा की कामना करना है, क्यूंकि उन्हें अनजानी दुनिया में आपके प्रवेश और अनिश्चितता से डर लगता है।

इस पुस्तक के सिद्धांतों का प्रयोग करने के बाद आप अपने में होने वाले परिवर्तन के कुछ लक्षणों को महसूस कर सकते हैं; जैसे

- अचानक अध्यात्मिक ज्ञान के प्रति जिज्ञासा बढ़ना
- समय की उपेक्षा और मानसिक रूप से अनुपस्थिति रहना
- अत्याधिक उदार और प्रेमभाव वाला बनना
- पिछली नियमों और सीमाओं की अस्वीकृति

- आश्चर्य एवं आनंद महसूस करने में बच्चों जैसा भाव और इसी प्रकार और भी बहुत कुछ।

लक्षण महत्वपूर्ण नहीं हैं और उसका अनुसरण भी नहीं किया जाना चाहिए। आपके पुराने से नए दृष्टिकोण में रूपांतरित होने में ये सभी चीजें सामान्यत: होती है और ये लक्षण संकेतक के रूप में कार्य करते हैं ।

यह याद रखना जरूरी है कि आपके अनुभव की परिपक्वता को समझने के लिए दूसरे लोगों में भी आपके समान परिपक्वता स्तर होना चहिये। अत: आप अपनी खोज या आपने विश्वास को बलपूर्वक दूसरों को समझाने या प्रभावित करने के बजाय, आप अपने मित्रों और परिवार सदस्यों के साथ इस पुस्तक को साझा करने पर विचार कर सकते हैं। जीने के लिए बेहतर दुनिया बनाने में, आप दूसरों की मदद करके खुद अपनी भी मदद करेंगे ।

ऋषि-मुनियों का कथन है कि सभी जीवों में से मनुष्य योनी में जन्म लेना एक बहुत ही दुर्लभ अवसर है। कई विशिष्ट गुणों के द्वारा मानव को अन्य जीवों से अलग प्रतिष्ठित किया जाता है, इनमें से मुख्य है सोचना एवं तर्क करना और अच्छे एवं बुरे के बीच चयन के लिए विवेकपूर्ण शाक्तियां। अन्य सभी जीव अपनी प्रकृतिक प्रवृत्ति द्वारा संचालित होते हैं और वैसे ही जीते हैं जैसी प्रकृति की इच्छा होती है। उनके पास अच्छा बुरे व्यवहार के लिए दण्ड की अवधारणा नहीं होती है ।

हम मनुष्यों के पास अच्छे या बुरे के बीच चयन करने के लिए विवेकाधीन शक्ति है, और कुछ प्रणालियां जैसे जेल की सज़ा और बुरे मनुष्यों के सुधार की व्यवस्था का विकास भी किया है । हमारे पास अच्छे कर्म के फल के रूप में स्वर्ग और बुरे कर्म के लिए दण्ड के रूप में नर्क की अवधारणा भी है। हमारी तार्किक शक्ति हमें आश्चर्यचकित होने पर मजबूर करती है कि एक बाद एक हमारे जन्म लेने का उद्देश्य क्या है ? अन्य दूसरे जीवों की तरह क्या हम भी सिर्फ खाने, सोने, खुशियों का आनंद लेने और मरने के लिए आए हैं ? या कोई महत्वपूर्ण लक्ष्य है जो हमारे इस जीवन को महत्वपूर्ण बनाता है ?

हममें से ज्यादातर लोग पांच ज्ञानेन्द्रियों की व्यवहारिक दुनिया में अपना जीवन बिता देते हैं । लेकिन इसके परे क्या है, यदि इसके परे कुछ हैं, तो शायद हमें इसका अंदाजा नहीं है। हममें से ज्यादातर लोग जहां हैं वहीं खुश रहते हैं । हम किसी अज्ञात दुनिया को तलाशनें में थोड़ा भयभीत हो सकते हैं। हमें दुनिया को क्यों छोड़ देना चाहिए, क्या हम जानते हैं, हमें पूछना चाहिए ।

हमेशा की तरह कुछ लोग ऐसे भी हैं जो चारदीवारी में अपनी जिंदगी बिता कर संतुष्ट नहीं होते हैं। उन्हें अज्ञात दुनिया के प्रति जिज्ञासा उन्हें अत्यंत बेचैन करती रहती है । वो देखना चाहते हैं कि वहां क्या है - जैसा किसी ने माउंट एवरेस्ट के लिए कहा है " ये कितना उंचा है यह जानने के लिए मुझे इस पर चढ़ना होगा"।

यह हर प्रकार के रोमांच के आनंद का सत्य है, विशेषरूप से उनके लिए जो पहाड़ो, जंगलों और सागरों की नहीं अपितु आत्मचेतना की खोज कर रहे होते हैं। जहां हम एक ही स्थान पर स्थिर रहते हैं, वहीं ये खोजी व्यक्ति चुपचाप इनके पीछे के रहस्यों को जानने के लिए निकल पड़ते हैं।

जबतक हम उन्हें कुछ बताए वे अदृश्य हो जाते हैं। हम बिल्कुल भी नहीं सोच सकते कि वो कहां चले गये। लेकिन जब कभी वे उन मित्रों की तरह वापिस आते हैं, जिन्होंने रहस्यमयी द्वीपों में जाने का साहस किया है और वे शानदार तस्वीरों के साथ, अपने साधारण अनुभवों के परे की दुनिया के

बारे में पर्यटन संदेश देते हैं, हमें आने और दर्शन करने का आह्वान करते हैं "इन्हें देखिए, क्या यह अद्भुत नहीं है ? मेरी इच्छा है आप इसे देखने के लिए वहां होते"।

भगवद्गीता हमारे ज्ञान के लिए ऋषियों द्वारा दिया गया ऐसा प्रचीन लेख है जो हमारी इंद्रियों के दैनिक अनुभवों से अधिक जीवन से कहीं ज्यादा है। यह जीवन के नक्शे के साथ हमारा मार्गदर्शन करती है, हमें आनंद और संकटों का सामना करने के विभिन्न दृष्टिकोण प्रदान करती है, और हमें बताती है कि क्या साथ रखना है और क्या पीछे छोड़ देना है ।

कालजयी महाकाव्य महाभारत के अनुसार, दुष्ट दुर्योधन और उसके भाई कौरवों ने अपने चचेरे भाई पांडवों के राज्य को हड़प लिया था । जब विवाद को सुलझाने की समस्त शांति वार्ताएं विफल हो गई, तब युद्ध के लिए दोनों पक्षों ने बडी–बड़ी सेनाएं तैयार की, जिसे महाभारत के युद्ध के नाम से जाना जाता है ।

पांडव भाइयों में से एक, अर्जुन हताश हो गया और यह कह कर अपने शस्त्र त्याग दिये कि वह अपने ही चचरे भाइयों के विरूद्ध युद्ध नहीं कर सकता और उसके राज्य का हिस्सा भी उन्हें दे दिया जाए। उनके जीवन पर्यन्त मित्र और गैर–योद्धा सारथी एवं मार्गदर्शक कृष्ण ने उन्हें भगवद्गीता का ज्ञान दिया और उन्हें धर्मयुद्ध के लिए प्रेरित किया। संस्कृत में भगवद्गीता का अर्थ है 'ईश्वर का गीत' । इसे ब्रह्म विद्या उपनिषद या ' परम विज्ञान' कहना उचित है क्योंकि यह आंतरिक एवं बाह्य विश्व के समन्वय की व्याख्या करती है ।

महाभारत के युद्ध को प्रत्येक मानव में अच्छाई और बुराई की ताकतों के बीच सर्वकालिक युद्ध के प्रतीक स्वरूप देखा जा सकता है । इस प्रकार देखा जाए, तो भगवद्गीता अर्जुन और कृष्ण के मध्य कोई बाह्य संवाद नहीं है । यह चेतना की गहराईयों में उतरने वाली जीवन और हमारे स्वयं के बारे में प्रश्नों से भरे मन के मध्य आंतरिक दिव्य संवाद है।

जब हम भगवान कृष्ण के उपदेशों को मन में सोचते हैं तब ऐसा लगता है कि वे एक नश्वर मनुष्य के रूप में अथवा भगवान के रूप में नहीं बोल रहे हैं। वह अर्जुन की उच्च दिव्यात्मकता, सत्य, चेतना के रूप में बोल रहे हैं; जबकि अर्जुन की निम्नतर चेतना अहंकार है।

उदाहरणस्वरूप जब कृष्ण कहते हैं कि केवल मेरी पूजा करो, मुझे प्रेम करो और मेरे प्रति कर्म करो, वह भगवान के रूप में अर्जुन से स्वयं की पूजा करने के निर्देश नहीं दे रहे हैं । उनका मतलब है कि हमें सत्य, चेतना और केवल आत्मदिव्यता की सुननी चाहिए, न कि अपने अंहकार की। हमें अपने अहंकार को पोषण देने के स्थान पर मानवजाति (ब्रह्माण्ड में स्वयं को एकरूप मानना) से प्रेम और उसकी सेवा करनी चाहिए। जब कृष्ण कहते हैं कि – "सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज" अर्थात् "सभी धर्मों का त्याग करके मेरी शरण में आ जाओ" तो इसका अर्थ है कि सत्य और चेतना से बड़ा कोई नियम या भगवान या धर्म या राष्ट्रवाद या अन्य कोई भी आश्रय स्थल नहीं है। जहां कहीं भी – 'मैं', 'मुझे', 'मेरा' जैसे शब्द आए हैं उनकी सत्य और चेतना के रूप में व्याख्या की जानी चाहिए ।

भगवद्गीता को अच्छी तरह समझने के लिए यह तथ्य याद रखना चाहिए कि यह संवाद भगवान् द्वारा किसी मानव से संस्कृत भाषा में नहीं किया गया है, बल्कि यह इन्द्रियों और विचार की सीमाओं से परे अर्जुन की आतंरिक चेतना में हृदय से हृदय का संवाद था।

–*–

अध्याय 14
माया (भ्रम की देवी)

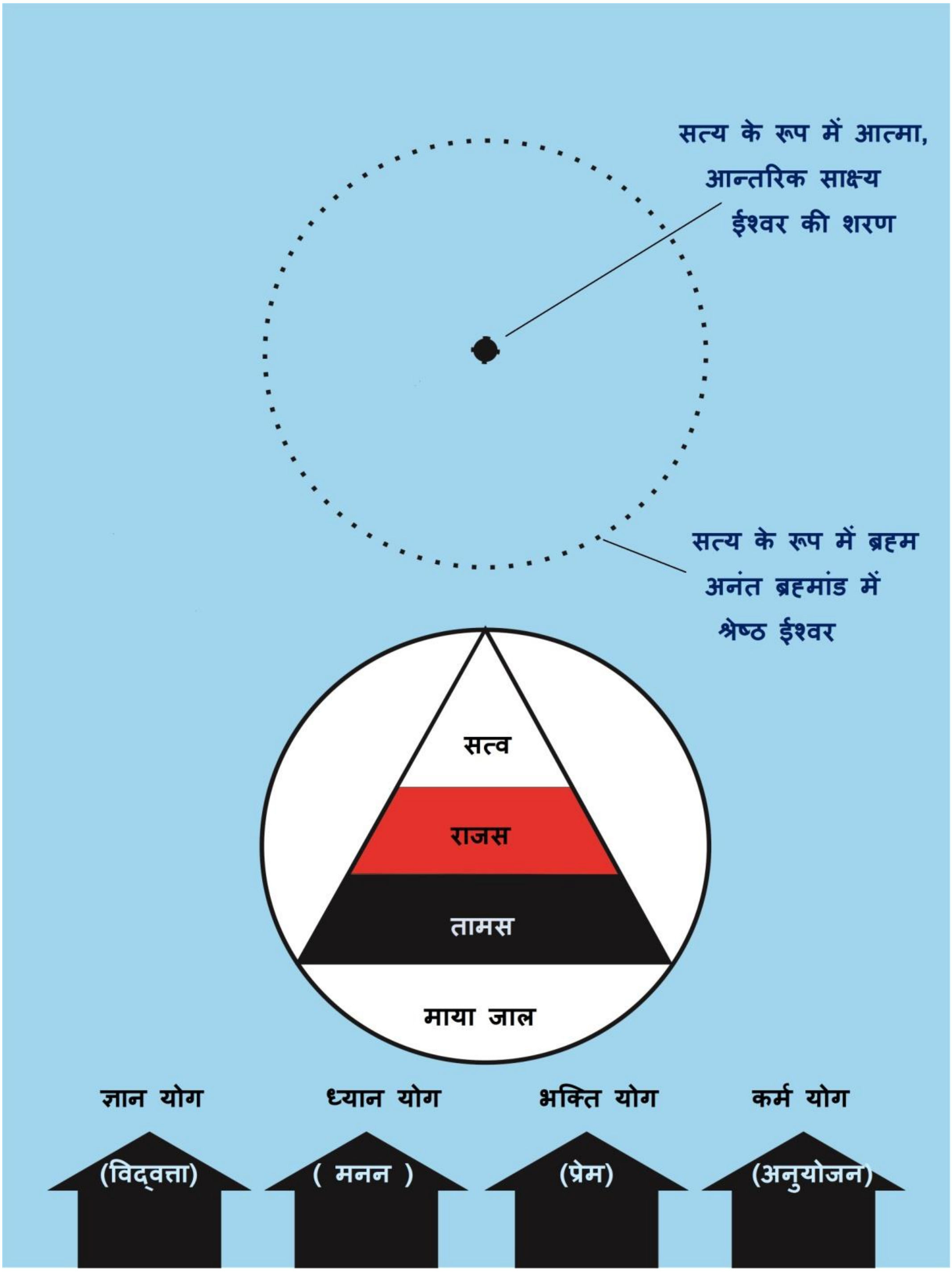

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदम् पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥
अर्थात

इस अनंत ब्रम्हांड के सृजनकर्ता, इस सृष्टि को पूर्णता प्रदान करने वाले, इस प्रकृति को पूर्णता प्रदान करने , इस ब्रम्हांड एवं उसकी हर वस्तु को पूर्णता प्रदान करने वाले प्रजापति संपूर्णता के प्रतिरूप है उसकी सृष्टि की किसी भी संपूर्णता से पूर्णता निकालने के पश्चात भी वह सृष्टि संपूर्ण रहती है ।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

ओम ,इसके विपरीत शून्यता अपूर्णता का प्रतिरूप है ,शून्य चाहे आगे हो या पीछे, शून्य से शून्य का योग शून्य ही आता है, यानी परिणाम शून्य ही होगा ,चाहे शून्य से शून्य हटा दिया जाए, तो भी वो केवल शून्य ही रहता है ।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

एक बार गांधी जी ने कहा था *"इन तीस सालों में मैंने जो प्राप्त करने के लिए प्रयास किये है, वो है मुक्ति प्राप्ति के लिए भगवान से साक्षात्कार का प्रयास एवं आत्मज्ञान। मेरा मानना है कि इसे प्राप्त करने के लिए बड़े से बड़ा त्याग भी कुछ नहीं है। मेरी समस्त गतिविधियां चाहे आप उसे सामाजिक, राजनीतिक, मानवीय या नैतिक कहिए, 'उसी' पर आकर समाप्त होती हैं "।*

हमें जीवन की परीक्षा को उत्तीर्ण करने के लिए चार लक्ष्य (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) दिए गए हैं। प्रश्न यह है कि यदि लक्ष्यों की पूर्णतया स्पष्ट व्याख्या की गई है तो फिर इसे प्राप्त करना हमारे लिए मुश्किल क्यों हैं ?

ऋषियों–मुनियों ने इसकी व्याख्या इस प्रकार की है कि सृजन या सृष्टि भगवान की माया है। वे अपनी माया (भ्रम की देवी) से स्वयं से पृथक ब्रह्माण्ड को सृजित करता है। चूंकि ईश्वर सर्वव्यापी है, ऐसा कोई भी स्थान नहीं है जहां एक सृजनकर्ता के रूप में ईश्वर उपस्थित न हो। वह सृजक है और सृजन भी है ।

ब्रह्मांड में सभी वस्तुओं एवं जीवों को भ्रम कहा जाता है, क्योंकि ये परिवर्तनीय, अनित्य और मिथ्या है, जबकि सत्य एक मात्र वास्तविकता है। उदाहरणस्वरूप जीवन, सिनेमा का सफेद पर्दा है और उस पर जो चलचित्र चलाए जाते हैं, वे मिथ्या है। इसका मतलब यह नहीं है कि हमें तत्व और भौतिक तथ्यों को नकारना या उनका बहिष्कार करना है। इसका केवल यह मतलब है कि ये मात्र सत्य के और ले जाने वाले साधन हैं ।

ईश्वर, सत्य एवं चेतनशीलता के साथ हमारे संबंधों की व्याख्या के लिए ऋषियों ने दो शब्दों का प्रयोग किया है – 'आत्मा' एवं 'ब्रह्म' ।

ऋषियों ने प्रगाढ़ चिंतन के पश्चात समय एवं काल के परे चैतन्यता के बारे में एक सत्व अर्थात मर्म की खोज की । यद्यपि किसी व्यक्ति का शरीर एवं मन, समय के बदलाव अर्थात बचपन, यौवन और बुढ़ापे का अनुभव करता है, लेकिन यह उसकी 'पहचान' ही है जो अपरिवर्तनीय रहती है और शरीर एवं मन में हो रहे बदलावों की साक्षी रहती है। इस चेतनाशीलता का सत्व, काल की सीमा से परे है, जो न तो किसी अवयव या अंग विशेष तक सीमित है और ना ही इस सत्व का कोई आदि, मध्य और अंत है। ऋषियों ने इस चेतनाशीलता के सत्व को एकल आत्मा या आत्मा, आत्मसाक्षी, ब्रह्मास्मि (हममें भगवान का वास है) के रूप में संदर्भित किया है।

गहन ध्यान अवस्था में, ऋषियों ने यह भी पाया कि संपूर्ण ब्रह्माण्ड में अविभाज्य एकता, सत्य, चेतनाशीलता व्यापत हैं । वे इसे ब्रह्म कहते थे। ब्रह्म सर्वोपरि देवत्व है, जो इस ब्रह्माण्ड सृजन, बनाए रखने, विनाश और पुर्नसृजन का कारण हैं ; भगवान को सर्वोत्त्कृष्ट (हमारी इंद्रियों एवं सोच से परे) रूप में संदर्भित किया है। लेकिन आत्मा और ब्रह्म के मध्य कोई भी वास्तविक

अलगाव नहीं है। ब्रह्म एक विशाल सिंधु है और एक आत्मा जल की एक बूंद और सत्य दोनों में ही निहित है ।

अन्य शब्दों में सत्य, अनंत ब्रह्माण्ड में सर्वव्याप्त आत्मा, अंर्तसाक्ष्य, स्वयं दैव्यता के रूप में हम सब में उपस्थित है। 'सत्य' सूक्ष्म की तुलना में सूक्ष्मतम और बलिष्ठ की तुलना में बलिष्ठतम है। एक नास्तिक को ईश्वर कहीं प्राप्त नहीं हो सकता है एवं एक आस्तिक को ईश्वर सर्वत्र दिखाई देता है। अगर हम बुरे हैं तो हमारे भीतर या बाहर कोई भी जगह नहीं है, हम सत्य से भाग कर कही भी मुंह नहीं छुपा सकते और ना ही उससे जीत सकते हैं । सत्य सर्वव्यापी, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान और शाश्वत हैं ।

हमारे भीतर या बाहर ऐसी कोई जगह नहीं है, जहां इस अनंत ब्रह्माण्ड में निहित, एक लोक या तीनों लोकों, या सातों लोकों या चौदह लोकों या कही भी सत्य को छुपाया नहीं जा सकता हो। जैसा कि चार सिंहों वाला हमारा राष्ट्रीय प्रतीक उद्घोषित करता है । 'सत्यमेव जयते' ।

हमारे उपर्यक्त दृष्टांत में हमने दो आयामों का उपयोग आत्मा और ब्रह्म के रूप में सत्य को वर्णित करने के लिए किया है, इसका कारण सत्य को समझने में हमारी सीमाएं हैं। किंतु वास्तव में इस सत्य की किसी भी परिधि या आकार या किसी अन्य प्रारूप में व्याख्या नहीं की जा सकती। हम केवल बहुआयामी अनंत और बहुप्रारूपों में इसकी उपस्थिति या अदृश्य बलों के रूप में इसकी कल्पना कर सकते हैं ।

ईश्वर, सत्य का अनिवार्य रूप है और किसी अन्य रूप की सीमाओं या नामों में परिभाषित करके उसे सीमाओं में नहीं बांधा जा सकता । किंतु किसी भी साधारण मन के लिए निराकार एवं अनाम पर ध्यान केंद्रित करना मुश्किल है। अत: भक्त भगवान को कई रूपों और नामों से बुलाते हैं जैसे कि हम किसी व्यक्ति को पिता, शिक्षक, भाई, मित्र या शत्रु के रूप में बुलाते है ।

उदाहरणस्वरूप भगवान के रचनात्मक पक्ष को ब्रह्मा तथा उनसे संबद्ध स्त्री पक्ष को देवी 'सरस्वती' के नाम से संदर्भित किया जाता है, क्योंकि रचना के लिए ज्ञान की आवश्यकता होती है। उनके पालनकर्ता पक्ष को विष्णु तथा संबद्ध स्त्री पक्ष को देवी 'लक्ष्मी' के नाम से संदर्भित किया जाता है, क्योंकि पालन-पोषण के लिए धन की आवश्यकता होती है। उनके विध्वंसक स्वरूप को शिव तथा संबद्ध स्त्री पक्ष स्वरूप को देवी 'पार्वती' के रूप में संदर्भित किया जाता है, क्योंकि विध्वंसता के लिए शक्ति की आवश्यकता होती है। अन्य स्वरूपों में, आग के देवता के रूप में अग्नि, जल के देवता के रूप में वरूण, हवा के देवता के रूप में वायु है तथा इसी प्रकार कई अन्य स्वरूप हैं। चित्र एवं मूर्तियां तो निराकार पर ध्यान केंद्रित करने का साधन मात्र हैं, लेकिन यह स्वयं में कोई भगवान नहीं हैं। इंद्र, इंद्रियों के देवता है उनकी अभिव्यक्ति अर्जुन हैं।

संपूर्ण जीवन पूर्ण एवं विशुद्ध रूप से दिव्य है तथा हमारे आंतरिक अध्यात्म पूर्ण रूप से एक ईश्वर, सत्य, चेतना में एकाकार है। हम सभी दिव्य अग्नि की लौ है । प्रत्येक दिव्य लौ को, अर्थात् हममें से प्रत्येक को, आवागमन जन्म, मृत्यु एवं पुनर्जन्म के चक्र के माध्यम से एक वर्णनातीत दीर्घ यात्रा करनी है तथा यह चक्र या यात्रा कर्म के नियम द्वारा शासित होता है, जो स्वसृजित नियति का नियम है। गांधीजी ने एक बार कहा था "मैने जो भी यात्रा करनी थी, मैने कर ली है और अब घर आना बाकी है"।

रात के बिना दिन का कोई महत्व नहीं है, अंधेरे के बिना प्रकाश का, गहराई के बिना ऊचाई का, पीड़ा के बिना सुख का, नकारात्मक के बिना सकारात्मकता का और बुराई के बिना अच्छाई का कोई महत्व नहीं है। यद्यपि सत्य के स्वरूपों में एकता है, प्रकृति में हमेशा द्वितीयक या बहुलक होता है जो सृजन में विविधता का कारण होता है लेकिन 'विविधता में एकता' हमेशा होती है ।

जैसाकि 'अवचेतन-मन' अध्याय में व्याख्या की गई है, ब्रह्माण्ड में ऊर्जा और तत्व निहित हैं, जो एक से दूसरे में परिणत हो सकती हैं । प्रत्येक सोच, ऊर्जा (मन) एवं तत्व तीन गुणों के मिश्रण होते हैं -तामस (अंधकार, अज्ञानता, निरूत्साह एवं निष्क्रियता), -राजस (सक्रियता, जुनून जो अच्छा और बुरा दोनों हो सकता है) एवं -सत्व (अच्छाई, पवित्रता, प्रकाश, सद्भाव या संतुलन)।

अंग्रेजी या किसी अन्य भाषा में इन तीन शब्दों का कोई ठीक-ठाक रूपांतरण नहीं किया जा सकता। विकासानुक्रम के अनुसार सत्व सर्वोच्च है । राजस महत्वाकांक्षी है और कर्म करने की प्रेरणा प्रदान करता है, परन्तु क्रोध्र, घृणा और लालच में स्वयं को अभिव्यक्त भी कर सकता है। विकासानुक्रम के अनुसार तामस सबसे निम्न स्थिति है जहां अच्छा अथवा बुरे से ज्यादा कुछ नहीं हो सकता ।

गुणों को तत्व की तीन स्थितियों ठोस, द्रव एवं गैस के साथ तुलना करके समझाया जा सकता है। बिल्कुल एक बर्फ के टुकड़े के समान ही तामस जमी हुई ऊर्जा (निष्क्रियन) है, इसमें रासायनिक बंधों में अच्छी मात्रा में ऊर्जा विद्यमान रहती है, लेकिन ऊर्जा को बंद एवं कठोर कर दिया गया है। जब बर्फ पिघलती है, कुछ ऊर्जा जल बहाव के रुप में निकल जाती है तो राजस (सक्रियता) बाढ़ रूपी नदी के समान होती है, अनियंत्रित शक्ति से पूर्ण । सत्व (सद्भावना) की भाप के साथ तुलना की जा सकती है जब इसकी शक्ति को निंयत्रित करके इसका उपयोग भाप के इंजन चलाने में किया जाता है ।

गुण, ब्रह्माण्ड के वस्त्र हैं, इसके घूंघट ने विविधता के आच्छादन में एकता को ढक रखा है । तामस, माया अर्थात अंधकार या अज्ञानता के आश्रय में पनपती है, जो एकात्मकता की यथार्थता को ढक लेती है; राजस ध्यान भंग करता है और बाह्य दुनिया को विविधता की यथार्थता से दूर ले जाता है । अत: गुण मन में अनिवार्य रूप से जन्म लेते हैं । जब मन की गतिविधियां स्थिर होती है, तब हम जीवन को यथावत देखते हैं ।

चेतना के विभिन्न स्तरों पर हम गुणों पर विचार कर सकते हैं। तामस में विकल्प या जागरूकता नहीं है; यह जीवन की एकता के गुणों से पूर्णत: अभिनिज्ञ तथा अपनी तीव्र इच्छाओं की तुलना में किसी अन्य के बारे में जहालत की सीमा तक अज्ञानी है ।

सामान्य रूप से राजस का सम्बन्ध मन से होता है, इच्छा, चिंता, क्रोध,प्रतिस्पर्धा करना, योजना बनाना और निराश हो जाना। राजस विसर्जित शक्ति का अनियंतित्रत एवं अहंकारी रूप है।

सत्व उच्चतम मन है - अनासक्त, आत्म नियंत्रित एवं स्थिर है ।

रजसिक व्यक्ति ऊर्जा से परिपूर्ण होते हैं; तामसिक व्यक्ति, सुस्त, उदासीन, असंवेदनशील होते हैं; सात्विक लोग शांत, साधन सम्पन्न, दयालु एवं निस्वार्थी होते हैं। हालाँकि ये सभी तीनों गुण विभिन्न मात्राओं में हमेशा उपस्थित रहते हैं: वो हमारे व्यक्तित्व में परस्पर गतिशील रहते हैं।

हम सभी का एक समय होता है, जब हम विचारपूर्ण ऊर्जा से भरे होते हैं तथा एक समय होता है, जब हम शांतिपूर्ण होते हैं और एक ऐसा समय होता है, जब हम कुछ भी न करने वाली जड़ता और सुस्ती महसूस करते हैं। व्यक्ति एक ही है पर विभिन्न समय में उसके गुणों के अलग अलग रूप को अनुभव करते हैं। जैसे ही हम मन एवं शरीर को पहचान लेते हैं, हम इस खेल के दयापात्र बन जाते हैं, परन्तु हमारा वास्तविक मन, गुणों की इस पारस्परिक क्रिया में सम्मिलित नहीं होता हैं यह सहभागी होने के बजाय साक्षी होता है । स्वयं के असली रूप को पहचानने के लिए, हमें तामस से राजस की ओर बढ़ने और वहां से सत्व तथा अन्ततः सत्व गुण से भी परे निकल जाने की आवश्यकता है ।

सत्त्वम्, रजः, तमः, इति, गुणाः, प्रकृतिसम्भवाः।
निबध्नन्ति, महाबाहो, देहै, देहिनम्, अव्ययम्।।

अर्थात

ये तीन गुण – सत्व, राजस एवं तामस ही हैं जो शरीर से अमर आत्मा को बांधे हुए हैं ।
(श्रीमद्भवद गीता 14: 5)

तत्र, सत्त्वम्, निर्मलत्वात्, प्रकाशकम्, अनामयम्।
सुखसंगेन, बध्नाति, ज्ञानसंगेन, च, अनघ।।

अर्थात

यद्यपि सत्व पवित्र एवं प्रकाशवान है फिर भी यह हमें ज्ञान और सुख की आसक्ति के साथ बांधता है। हम अपने ज्ञान पर अभिमानी हो जाते हैं। (श्रीमद्भवद गीता 14: 6)

रजः, रागात्मकम्, विद्धि, तृष्णासंगसमुद्भवम्,। तत्,
निबध्नाति, कौन्तेय, कर्मसंगेन, देहिनम्।।

अर्थात

राजस जूनूनी है और यह हमें स्वार्थ, महत्वकांक्षा और सुख से बांधता है।
(श्रीमद्भवद गीता 14: 7)

तमः, तु, अज्ञानजम्, विद्धि, मोहनम्, सर्वदेहिनाम्,
प्रमादालस्यनिद्राभिः, तत्, निबध्नाति, भारत।।

अर्थात

तामस, अज्ञान से जन्म लेता है और हमें आलस्य, नींद और निष्क्रियता द्वारा बांधता है।
(श्रीमद्भवद गीता 14: 8)

इदम्, ज्ञानम्, उपाश्रित्य, मम, साधर्म्यम्, आगताः,
सर्गे, अपि, न, उपजायन्ते, प्रलये, न, व्यथन्ति, च।।

अर्थात

वे जो इस ज्ञान पर विश्वास करते हैं, ब्रह्म में विलीन होंगे। उनके लिए न ही पुनर्जन्म होगा और न ही उन्हें मृत्यु का भय होगा। (श्रीमद्भवद गीता 14: 2)

माम्, च, यः, अव्यभिचारेण, भक्तियोगेन, सेवते,
सः, गुणान्, समतीत्य, एतान्, ब्रह्मभूयाय, कल्पते।।

अर्थात

दृढ़ प्रेम के साथ ब्रह्म (अर्थात् ब्रह्माण्ड के समस्त जीवों एवं चराचरों) की सेवा द्वारा, कोई भी व्यक्ति गुणों के परे हो जाता है । ऐसा व्यक्ति ब्रह्म के साथ एकाकार होने के योग्य हो जाता है । (श्रीमद्भवद गीता 14: 26)

विशुद्ध होने के नाते सात्विक प्रकृति आध्यात्मिक उन्नति में सक्षम बनाती है। लेकिन यहाँ एक समस्या उत्पन्न हो सकती हैं जब कोई इस विशुद्ध ज्ञान में स्वयं को प्रवीण मानने लगता है और इससे अंहकारी बन जाता है। कोई भी सुख, चाहे वह अच्छा क्यों ना हो, आसक्ति पैदा करता है । ये सोने की रस्सी के समान है जो भौतिक जगत की पीड़ा एवं दु:ख से आत्मा को बांधे रखता है ।

राजस व्यक्ति को उसकी महत्वाकांक्षाएं उसे क्रियान्वित करने के लिए उकसाती रहती है और मन में पाखंड की भावना उत्पन्न करती हैं। यह मानव की इन्द्रियों को आकर्षित करने एवं सुख भोगने की इच्छा को पूर्ण करने के लिए भौतिक वस्तुओं के प्रति आसक्ति उत्पन्न करता है । इस आसक्ति का जब विरोध होता है तो यह क्रोध का कारण बनती है। क्रोध से व्यक्ति अपनी भावनाओं पर नियंत्रण खो देता है, उसे ठीक तरह से सोचने विचारने नहीं देता और क्या सही है और क्या गलत, के इसका निर्णय लेने की क्षमता को खत्म कर देता है । वह अपने पतन की और अग्रसर हो जाता है ।

प्रकृति की सभी चीजें, यहां तक कि जो मन, इंद्रियां एवं पदार्थ, जो इंद्रियों को आकर्षित करती है, मात्र तीन गुणों अर्थात तीन विशेषताओं का संयोजन है। जो व्यक्ति इन तीन विशेषताओं के आकर्षण से ऊपर उठता है वह स्वयं को प्रकृति के मूल तत्व की ओर बढ़ा रहा होता है। ऐसे व्यक्ति का ईश्वर से एकाकार हो जाता है और मृत्यु एवं पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त हो जाता है।

तीन गुणों की माया से विरक्त होने तथा मन की अग्नि को प्रजल्वलित रखते हुए जीवन की समस्याओं से लड़ने के लिए, हमें ज्ञान-योग, ध्यान-योग, भक्ति-योग तथा कर्म-योग का साथ साथ दृढ़ अभ्यास करने की आवश्यकता है ।

ज्ञान-योग, तामसिक अज्ञान का समाधान है तथा हमें धर्म एवं कर्म के अनुसार जीना सिखाता है। कर्म-योग सात्विक शान्तिमयता एवं सुखदाता द्वारा उत्पन्न निष्क्रियता का समाधान है । ध्यान-योग एवं भक्ति-योग रजसिक महत्वाकांक्षाओं एवं गतिविधियों द्वारा उत्पन्न उत्तेजना और स्वार्थ का समाधान है ।

वास्तविक रूप से ईश्वर हर जगह उपस्थित है। जिस प्रकार सूर्य की रोशनी गंदे पानी की तुलना में साफ पानी में बेहतर प्रकाशित होती है, उसी प्रकार पवित्र व्यक्ति के ह्रदय में भगवान का अधिक वास होता है। जल की एक बूंद विशाल महासागर का एक अंश है। अत: आध्यात्मिक अनुगमन स्वयं को शुद्ध करने की प्रक्रिया है तथा दूसरों में उपस्थित ईश्वर से प्रेम करना भी है। अत: मानवता सेवा भगवान की सेवा है ।

ज्यादातर लोग धर्म, कर्म के बारे में, क्या सही है या क्या गलत, इतना ही जानते हैं। वे सही चीजें करना चाहते हैं, यहां तक कि उन्होंने गलत कार्य करना भी छोड़ दिया। वे बिल्कुल अर्जुन की मनोंस्थिति में होते हैं, और वही प्रश्न पूछते हैं जो, हो सकता है, हमारे द्वारा भी वही पूछा जाता है कि यह अदृश्य बल या शक्ति क्या है जो किसी व्यक्ति को बुरा करने के लिए मजबूर कर देती है, यहां तक कि जब वो सही समाधान करने की ठान चुका होता है ?

श्री कृष्ण ने अर्जुन को रजसिक प्रवृत्ति के संकटों से बचे रहने के लिए सावधान किया था । राजस के कारण ही इंद्रियों को आकर्षित करने वाली स्वाभाविक प्रवृत्ति या बल उन असंख्य वस्तुओं की ओर उस दिशा में कदम बढाने के लिए मजबूर करती है। राजस के दो पक्ष हैं ; पहला, कामदेव–जुनून–वासना जो आकर्षण और प्रेम का कारण है और अत्याधिक लालसा का कारण बनता है; दूसरा, क्रोध–खीज–नफरत है, जो अरुचि का बल है जो कई प्रकार के द्वेष उत्पन्न करता है ।

जैसे दिए की रोशनी को धुएं द्वारा ढक लिया जाता है, ठीक उसी प्रकार ज्ञान को स्वार्थी महत्वाकांक्षाओं द्वारा ढक लिया जाता है। मनुष्य की आत्मा अग्नि है, लौ है तथा जब स्वार्थी महत्वाकांक्षाओं के धुएं की मात्रा बढ़ जाती है तो लौ बुझ जाती है । यदि किसी व्यक्ति में स्वार्थी महत्वाकांक्षाएं एवं जुनून बलवान हो जाता है तो उसका आध्यात्मिक रूप से पतन हो जाता है। अतः यह अनिवार्य है कि हम धुएं की मात्रा को बढ़ने न दें, हमारी व्यक्तिगत पसंद एवं नापसंद ही हमारी आत्मा की अग्नि को बढ़ाती एवं आच्छादित करती हैं। हमें अपनी इच्छाओं को अपने नियंत्रण में रखना चाहिए तथा उनके प्रभाव में नहीं आना चाहिए ।

–*–

अध्याय 15
ध्यान योग (ध्यान की राह)

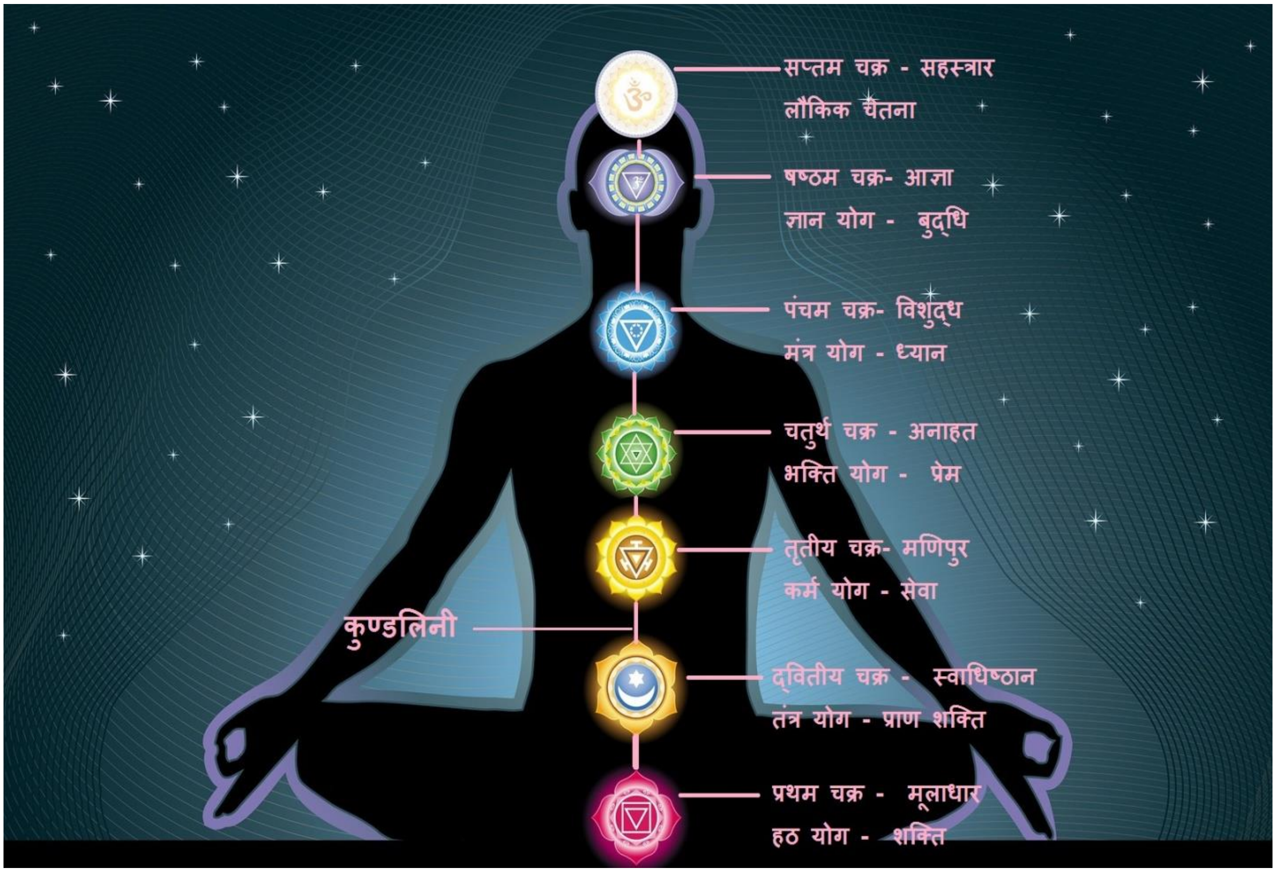

गांधी जी के अनुसार "एक समय ऐसा आता है जब व्यक्ति अप्रतिरोध्य एवं अनूठा हो जाता है तथा उसके कार्यों का प्रभाव सर्वव्यापक हो जाता है। यह तब संभव होता जब वह स्वयं को नगण्य बना लेता है"।

हममें से बहुत कम लोग जीवन को वैसे देखते हैं जैसा यह है। हममें से ज्यादातर लोग चीजों को अपनी निजी पसंद और नापसंद, हित एवं भय के नजरिये से देखते है। यह एक अलगाववादी दृष्टिकोण है जो व्यक्ति के विरूद्ध व्यक्ति, समुदाय के विरूद्ध समुदाय, राष्ट्र के विरूद्ध राष्ट्र अर्थात जीवन की एकता में सेंध लगता है। वास्तव में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जो अकले ही जीवन यात्रा पूरी कर सके, वह जन्म से मरण तक अन्य व्यक्तियों से जुड़ा हुआ है ।

जीवन जैसे है, उसे वैसा देखने के लिए, एक व्यक्ति को पूर्णत: अविभाज्य होना होता है, हमें अपने व्यक्तिगत लाभ, शक्ति, प्रतिष्ठा और अंहकार जैसी सभी आसक्तियों का त्याग करना पड़ता है, अन्यथा हम जीवन को अपनी व्यक्तिगत शर्तों के अनुसार ही देखगे तथा हम संसार वैसे नहीं देख पाएंगे जैसी यह वास्तव में है, बल्कि हम अपनी पसंद और नापसंद के आधार पर ही देख पाएँगे।

बहुत वर्षों तक हम बार-बार अपने अंहकार को संतुष्ट करने के लिए अपनी पसंद और नापसंद के आधार पर यह प्रयास करते रहते हैं, तो हमें यह भ्रम हो जाता है कि यह हमारा वास्तविक व्यक्तित्व है

। यथार्थ में, यह सिर्फ अंहकार का मुखौटा है जिसे कैसे निकाला जाए हम भूल गए हैं। इस मुखौटे के पीछे हमारा वास्तविक मूल, पूर्ण निर्भयता, निस्वार्थ प्रेम और स्थायी सुख का परमानंद छुपा है।

यह सर्वज्ञात है कि गांधीजी ने ध्यान तकनीक के एक रूप को प्राप्त किया था। गांधीजी तब अपने सांसारिक मुखौटे को उतारने में सफल रहे और वर्षों तक स्वयं के बजाय दूसरों के लिए जीने की प्रक्रिया से जब उन्होंने स्वयं को नगण्य बनाया, तो उन्होंने पाया कि उन्होंने अपने व्यक्तित्व से जिसे निकाला था, वो और कुछ नहीं केवल उनकी अलगाववादिता, उनकी स्वार्थता, उनका भय था । जो बच गया था वो प्रेम और निर्भयता थी जो हर समय छिपी रहती थी ।

हर व्यक्ति तीन स्थितियों अर्थात स्वप्न, गहरी निद्रा और चेतना या जागृत अवस्था में से किसी एक स्थिति में जीता है। जागृत अवस्था में व्यक्ति को अपने शरीर और मन के बारे में पता होता है। स्वप्नावस्था में व्यक्ति का केवल मन सक्रिय होता है न कि शरीर । गहरी निद्रा में व्यक्ति का न तो मन सक्रिय होता है न ही शरीर। इस स्थिति में व्यक्ति न ही धनी होता है, न ही गरीब, न अज्ञानी होता है और न ही बुद्धिमान, न ही पुरूष होता है न ही महिला। वह न ही हिंदु या ईसाई या अमेरिकी या न ही चाईनीज। वह जो होता है वैसा ही यर्थाथ स्थिति में रहता है – स्वयं की वास्तविकता में ।

किंतु गहन निद्रा में व्यक्ति इस सत्य को जान नहीं पाता है । इस स्थिति को केवल नियमित रूप से गहन ध्यान से ही अनुभव किया जा सकता है ।

ध्यान के विभिन्न संस्करण हैं; जिनमें प्रमुख है श्वास पर ध्यान केंद्रित करते रहना; बार-बार या कभी कभी मंत्रोच्चार करना इत्यादि। हम इस पुस्तक में ध्यान के अंतिम संस्करण को अपने अभ्यास में उपयोग करेंगे। यह उपयुक्त रहेगा कि ध्यान का अभ्यास किसी योग्य गुरू की देख-रेख में ही किया जाए। परन्तु गुरू की अनुपस्थिति में निम्न प्रक्रिया अपनाई जा सकती है:

अपनी पसंद का कोई एक शब्द चुने, जो स्मरण और उच्चारण करने में सरल हो। यह ॐ, राम या मूसा या जीसस या अल्लाह हो सकता है। ध्यान में किसी प्रकार का कोई धर्म नहीं है ।

शब्द मन को शांत करते हैं और मन को ध्यान के लिए तैयार करते हैं, जो चरित्र एवं चेतना के रूपांतरण के लिए महत्वपूर्ण है। ध्यान कोई धर्म नहीं है । यह किसी भी विश्वास का स्वतंत्र ऊर्जस्वी अनुशासन है जिसमें किसी व्यक्ति के ध्यान अर्थात एकाग्रता की सभी शक्तियां को एक आदर्श सीमा तक ला कर, मन की प्रत्येक कोशिकाओं में तब तक इतनी गहराई तक पहुँचाना है, जब तक सभी लघु विचार एवं लक्ष्य धीरे-धीरे इसमें समा न जाए ।

इस अनुशासन के माध्यम से व्यक्ति चेतना के गहनतम स्तर में प्रवेश करता है, जहां गहरी जड़े जमाए मतभेदों का तूफान दिन-रात लगातार संघर्ष करता रहता है। इस प्रबल गहराई में, गांधी जी ने प्रेम का क्रोध एवं भय के साथ संघर्ष कराया और अन्ततः अन्य सभी भावनाओं पर महारत प्राप्त कर ली।

ध्यान से पूर्व, अत्याधिक भोजन या अल्प भोजन न करें, क्योंकि ऐसी स्थितियां ध्यान के लिए उचित नहीं हैं। आपको न ही भूखा और न ही भरपेट भोजन के साथ निद्रायुक्त होना चाहिए ।

अपना फोन बंद कर दीजिए, क्योंकि ध्यान की गहरी स्थिति में एक हल्की आवाज भी अत्यन्त हानिप्रद हो सकती है । दूसरों से अनुरोध कीजिए कि वे कम से कम 15-30 मिनट आपको परेशान न करें तथा किसी एकांत कमरे अथवा क्षेत्र का चयन करें ।

ऐसी कुर्सी पर बैठें, जो नही बहुत ऊंची हो, न ही बहुत नीचे, ताकि आपके पैर जमीन को छूते रहें और आरामदायक महसूस करें ।

अपने शरीर, सर और गरदन को सीधा रखें ताकि आप झुके न रहें और अपनी आंखे बंद रखें ।

आप यह पाएँगे कि आपका मन निम्नलिखित तीन स्थितियों के मध्य निरंतर बदलता रहता है :

1. पहली स्थिति में (उद्देश्यों या अवधारणा के बारे में) कुछ नये विचार उत्पन्न होंगे ।
2. उपर्युक्त विचारों का लगातार आना दूसरी स्थिति हैं।
3. अचानक उपर्युक्त विचार आने समाप्त हो जाना तीसरी स्थिति है ।

इसके पश्चात् पुन: मन में नए विचारों का आगमन होता है, यह भी कुछ समय के लिए जारी रहता है, इसके पश्चात् खत्म हो जाता है। अत: मन विचारों की इन तीन स्थितियों पर हमेशा बदलता रहता है। विचारों का प्रवाह एक के बाद एक धारा के रूप में उत्पन्न होता रहता है ।

मौजूदा विचारों या नए विचारों के शुरू होने या वर्तमान विचारों के लगातार आगमन को रोकने में लिप्त न हो । एक निश्चित समयांतराल (जैसे 15 सैंकेंड के अन्तराल) के बाद अपने चयन किए गए शब्दों का उच्चारण बिना होठों को खोले, मन में करें। आप इस ध्यान को सहजता से बिना किसी विशेष परेशानी के करने में समर्थ होंगे ।

'ध्यान' एक ऐसी स्थिति का अनुभव है जो न ही पूर्णत: जागृत, निद्रा और न ही स्वपन की है तथा 'भौतिकवादी जगत से विरक्त' करती है । ध्यान हमें तनाव से मुक्त भी करता है तथा हमें हमारे विचारों और ऊर्जा पर बेहतर ढंग से ध्यान केंद्रित करने के लिए सक्षम बनाता है ।

सर्वभूतस्थम्, आत्मानम्, सर्वभूतानि, च, आत्मनि,
ईक्षते, योगयुक्तात्मा, सर्वत्रा, समदर्शनः ।।

अर्थात

वे स्वयं को सभी जीवों में तथा सभी सृजन में देखते हैं। ध्यान के माध्यम से चेतनशीलता को एकीकृत करके वे सब कुछ निष्पक्षता से देखते हैं । (श्रीमद्भगवद्गीता 6-29)

यः, माम्, पश्यति, सर्वत्रा, सर्वम्, च, मयि, पश्यति,
तस्य, अहम्, न, प्रणश्यामि, सः, च, मे, न, प्रणश्यति ।।

अर्थात

उसके ह्रदय में सर्वदा ब्रह्म बसता है, जिसने यह जान लिया कि प्रत्येक जीव में ब्रह्म उपस्थित है। जो उसकी सभी अभिव्यक्तियों में जीवन देखते है, वे उनसे कभी अलग नहीं होते हैं । (श्रीमद्भगवद्गीता 6:30)

गहन ध्यान में अलगववाद के समस्त चिह्न (''मैं', 'मुझे', 'मेरा') गायब हो जाते हैं तथा जीवन पूर्ण रूप से अविभाज्य प्रतीत होती है । व्यक्ति एक ऐसी स्थिति का अनुभव करता है जो चैतन्यता, स्वपन्न एवं गहन निद्रा की तीनों स्थितियों से परे हैं । इसे तुरीय स्थिति को चतुर्थ-आयामी स्थिति कहा जाता है। इस मनोस्थिति में समय रूक जाता है तथा कोई भूत, भविष्य एवं वर्तमान नहीं रह जाता है ।

एक बार जब किसी व्यक्ति में इस बृहद् एवं उज्जवल अनुभव का उदय होता है, तब उस व्यक्ति में आस-पास की पूरी दुनिया के प्रति सच्चे प्यार का अलोकिक प्रस्फुटन होगा । वो सभी रूप में

एक ही देवत्व पा कर और उनमें अपने भगवान का रूप देख कर उनकी सेवा करने में संतोष पाता है। उसके लिए इन नामों एवं रूपों की दुनिया की सेवा ही पूर्ण आनंद है।

यही 'विश्व रूप संदर्शन' (लौकिक दृष्टि) का अवसर था, जब अर्जुन तुरीय के चतुर्थ आयाम में गहन ध्यान में पहुँच गया, मानों वह कृष्ण, सत्य, चेतना -जो सर्वव्यापी है और जिसके अनंत रूप और नाम हैं, से अलग नहीं था ।

परन्तु कोई भी व्यक्ति अधिक समय के लिए तुरीय के चतुर्थ आयाम में नहीं रह सकता। कुछ समय पश्चात् शरीर एवं मन की चेतना वापस आ जाती है और पुन: बहुलता की पारंपरिक दुनिया चलायमान हो जाती है ।

यह क्या है जो विभिन्न क्षणिक वस्तुओं से निर्मित दुनिया को सत्य बना देता है? ऐसा क्या है जो हममें से प्रत्येक को यह विश्वास दिलाता है हम आत्मा के बजाय शरीर हैं ? जैसाकि पिछले अध्याय में बताया गया है, यह माया, भगवान के भ्रम की देवी के कारण होता है ।

सामान्य तौर पर लोग, योग को हठ योग के रूप में देखते हैं, जो भौतिक मुद्राओं और व्यायाम का समन्वय है, जो अभ्यासी को बल और स्वास्थ्य प्रदान करता है तथापि, 'योग' का सही मतलब 'एक्य' होता है तथा जो भगवान के साथ 'एक्य' या 'एकाकार' को बताता है। तांत्रिक योग विशाल उॅर्जा संरक्षण के इरादे से पुरूष और स्त्री को एक्य करने से संबंधित है। यह पथ बहुत से खतरों से भरा तथा सामान्य लोगों के लिए यह उपयुक्त नहीं है ।

ऋषियों का मानना है कि व्यक्ति की आध्यात्मिक ऊर्जा मूलाधार, चक्र के पास सर्व रूपी अधोमुखी कुण्डली में स्थित होता है। जब इसे आध्यात्मिक प्रक्रियाओं से जागृत किया जाता है, तो यह ऊर्जा सहस्रार तक पहुँच जाती है और इसी जागृत अवस्था को 'कुण्डलनी जागरण' या आत्म-साक्षात्कार' कहा जाता है। ऐसी आध्यात्मिक प्रक्रियाएं 'सिद्धी' नामक महाप्रकृति शक्तियों को प्राप्त करने के लिए अभ्यासी को सक्षम बनाती है। यह राह गंभीर तपस्या की ओर ले जा सकती है, जहां एक मध्यस्थ भगवान के पास पहुचना चाहता है, परन्तु स्वयं की महत्वाकांक्षाओं के चंगुल में फंस कर, स्वयं को भगवान बनाने की इच्छा और अन्तत: स्वयं को पतन की ओर ले जाता है ।

कोई भी नश्वर कभी भगवान या उसकी जगह नहीं ले सकता है। 'ध्यान' करने का हमारा उद्देश्य भगवान, सत्य और चेतना के साथ अपने संबंधों का मात्र एहसास करना है। हमें सिद्धियों के पीछे नहीं भागना चाहिए, किंतु अपने लक्ष्य पर बने रहना चाहिए, जो मोक्ष है। अत: ध्यान-योग पर अत्यन्त ध्यान लगाने के बजाय, हमें ज्ञान-योग, भक्ति-योग तथा कर्म-योग का पालन करना चाहिए ।

ज्ञान-योग जीवन की समझ प्रदान करता है, इस पुस्तक में इसकी पूर्ण व्याख्या की गयी है। अगले दो अध्यायों में क्रमश: भक्ति-योग और कर्म-योग पर प्रकाश डाला गया है।

महर्षि पंतजलि ने योग की व्याख्या 'योग-चित्तवृत्ति-निरोध' के रूप में की है जिसका अर्थ है योग विभिन्न रूपों (वृत्तियों) के आगमन से मन (चित्त) को रोकता (निरोध) है। उन्होंने निम्नलिखित आठ घटकों या योग के अंगों, जिन्हें अष्टांग योग कहा जाता है, की व्याख्या की है।

1. यम
2. नियम
3. आसन

4. प्राणयाम

5. प्रत्याहार

6. धारणा

7. ध्यान

8. समाधि

1. यम : पांच नैतिक मूल्य हैं जो इस प्रकार हैं :-

(क) अहिंसा : दूसरों को नुकसान न पहुचाना

(ख) सत्य : सत्यता या सच्चाई

(ग) अस्तेय : चोरी न करना

(घ) ब्रहमचर्य : इंद्रिय निग्रहता, वैवाहिक निष्ठा या यौन संयम। जैसाकि समान्य मान्यता है ब्रह्मचर्य का मतलब यौन क्रिया से परहेज या अविवाहित रहना नहीं है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि कृष्ण एवं अर्जुन की भी पत्नियां एवं बच्चे थे। यह प्रकृति निर्मित है कि जीवन प्रजनन करता है और आगे बढ़ता है। वास्तव में ब्रह्मचर्य का मतलब, इस तथ्य का ध्यान रखना है कि आत्मा एक है जो ब्रह्म से अलग नहीं है

(ङ) अपरिग्रह - ग्रहण न करना ।

2. नियम : जो गुणों, आदतों और व्यवहार को शामिल करता है, जो इस प्रकार है

क. शौच - मनस्व शरीर की शुद्धता और स्वच्छता

(ख) संतोष : तुष्टि, आशावाद, दूसरों की स्वीकार्यता, अपनी परिस्थितियों की स्वीकार्यता जैसा कि उन्हें अतीत में प्राप्त हुआ है या उन्हें बदला है।

(ग) तापस: दृढ़ता, आग्रह, आत्मसंयम ।

(घ) स्वध्याय: शस्त्रों के अध्ययन एवं स्वयं का अध्ययन, अपने विचारों का आत्म-मंथन।

(ङ) ईश्वर प्राणीधन - ईश्वर (भगवान, सत्य, ब्रह्म) का चिंतन ।

3. आसन: आसन शारीरिक मुद्राएं है, जिसे व्यक्ति कुछ समय आराम करने के लिए, सहज और स्थिर रहने के लिए कर सकता है। पतंजलि ने 'स्थिर सुखासन' (ऐसी मुद्रा जिसमें व्यक्ति सहज और स्थिर बना रह सकता है) के सुझाव को छोड़कर किसी भी विशेष आसन की सूची नहीं बताई है । ऐसी मुद्रा जो पीड़ा या असहजता का कारण हो योग की मुद्रा नहीं है। बाद में योग की परम्परा के विद्वानों ने विभिन्न मुद्राओं जैसे पद्मासन (कमल के समान), शवासन (शव के समान), व्रजासन (द्विपदी), भुजंगासन (सर्प के समान) इत्यादि को विकसित एवं संस्तुत किया। हठयोग प्रदीपिका ने 84 आसनों की विधियों की व्याख्या की जिसमें 4 को अत्यन्त महत्वपूर्ण कहा है - पद्मासन (कमल,) भद्रासन (सज्जन), सिंहासन (शेर) और सिद्धासन (सुसंस्कृत) ।

4. प्राणायाम : यह दो संस्कृत शब्दों प्राण (श्वास) और आयाम (निरोधक) से मिलकर बना है। यह चेतन रूप से श्वास को (सांस लेना और सांस छोड़ने के द्वारा) विनियमित करने का अभ्यास है। उदाहरणस्वरूप श्वास लेना तथा एक अवधिक के लिए श्वास को रोकना, फिर छोड़ना एवं फिर श्वास को कुछ अवधि के लिए रोकना, जानबूझकर समय के बदलाव करना। छोड़ने की अवधि को बढ़ाना, छोड़ना और श्वास रोकना ।

5. प्रत्याहार: यह संस्कृत के दो शब्दों प्रति (समर्पण) एवं आहार (लगे रहना) के समन्वय से बना है। प्रत्याहार व्यक्ति की चेतना एवं व्यक्ति के स्वयं के विचारों के प्रति समर्पण लाता है। यह बाह्य चीजों, वस्तुओं, व्यक्तित्व एवं स्थितियों से विरक्ति की एक प्रक्रिया है। यह व्यक्ति को स्वयं के सत्य, आंतरिक दुनिया, अनुभव एवं स्व मूल्यांकन की ओर ले जाता है। प्रत्याहार का तात्पर्य व्यक्ति का संवेदी दुनिया से जानबूझकर आंख मूंदना नहीं है, यह जागृत रूप से ग्रहणशील दुनिया द्वारा नियंत्रित किए जा रहे मन को रोकने में सशक्त बनाता है, आत्मज्ञान की खोज करने के लिए व्यक्ति का ध्यान आकर्षित करता है तथा व्यक्ति को आंतरिक दुनिया में सहज स्वतंत्रता की अनुभव कराता है ।

प्रत्याहार, बाह्य रूपों के प्रथम चार अंगों से अंतर रूप के अंतिम तीन अंगों में, बाह्य दुनिया से आंतरिक दुनिया में, बाह्य चक्र से आत्मा के अंतर चक्र के लिए योग के रूपांतरण का चिह्न है

6. **धारणा:** संस्कृत के इस शब्द का अर्थ है 'एकाग्रता और मन को एकचित्त करना'। 'मन' किसी एक मंत्र या श्वास या किसी इच्छा प्राप्ति के लक्ष्य या किसी अवधारणा या विचार पर केंद्रित हो जाता है। मन को केंद्रित करने का अर्थ है बिना मन के बहाव एवं एक विचार से दूसरे विचार पर जाए बिना, मन को एक चित्त करना ।

7. **ध्यान:** इसका अर्थ है "चिंतन या मीमांसा"। 'ध्यान' का तात्पर्य किसी विचार पर मन को एकचित्त कर मनन करना है। यदि योग के छठे अंग में कोई व्यक्तिगत देवता पर ध्यान केंद्रित करता हैं, तो ध्यान उसका चिंतन है। यदि चिंतन किसी एक उद्देश्य (वस्तु) पर था, तो ध्यान उस वस्तु के लिए बिना निष्कर्ष, बिना अहंकार का दृष्टिकोण रखेगा। ध्यान, विचारों की निर्बाध रेलगाड़ी के सामान गतिशील, अनुभूति का प्रवाह, चेतना का बहाव है ।

ध्यान और धारणा में अटूट सम्बन्ध है; दोनों एक दूसरे का नेतृत्व करते हैं। 'धारणा' मन की एक स्थिति है, 'ध्यान' मन की प्रक्रिया है। ध्यान, धारणा से अलग भी है क्योंकि ध्यानी अपने ध्यान के विषय के साथ सक्रिय रूप से संबद्ध हो जाता है। आदि शंकराचार्य ने योग-सूत्र में अपनी टिप्पणी में ध्यान को धारणा से अलग बताया है, अपनी व्याख्या में उहोंने ध्यान को योग की वह स्थिति बताई है जब उसी उद्देश्य के लिए विभिन्न प्रकार के अन्य विचारों से बाधित हुए बिना, केवल उसी उद्देश्य के बारे में लगातार धारा प्रवाह विचार आते रहते हैं। शंकराचार्य ने कहा कि धारणा एक उद्देश्य पर केंद्रित होती है, किंतु उसी उद्देश्य के कई पक्षों और विचारों के बारे में जागरूक रहता है। शंकराचार्य ने उदाहरण देते हुए व्याख्या की है कि धारणा की स्थिति में एक योगी प्रभात के सूर्य की श्रेष्ठता, उसके रंग तथा कक्षा के बारे में जागरूक हो सकता है, पर ध्यान की स्थिति में वही योगी केवल सूर्य की कक्षा पर चिंतन करता है; उदाहरण स्वरूप बिना उसके रंग प्रतिभा या अन्य दूसरे संबंधित विचारों द्वारा बाधित हुए बिना ।

8. समाधि: इसका अर्थ है "सर्वस्व समर्पण, एकजुटता, समन्वय, संयोजन, संगठन, एकता, संपूर्ण सामजस्य, तन्मयावस्था"। समाधि का अर्थ ध्यान के विषय में एक्य हो जाना है । योग के आठवें अंग में ध्यान करने वाले में, ध्यान की क्रिया और ध्यान के विषय में कोई अंतर नहीं रह जाता है । समाधि एक ऐसी आध्यात्मिक स्थित है जब योगी का मन अपने विषय के चितंन में पूर्णत: खो जाता है अर्थात अवशोषित हो जाता है और स्वयं

की पहचान की चेतना भी खो देता है । विचारक, विचार प्रक्रिया एवं विचार, विचार के विषय में एकरूप हो जाते हैं । केवल एकरूपता होती है, और वह है समाधि ।

समाधि दो प्रकार की होती है, किसी माध्यम की सहायता से ध्यान के उद्देश्य की प्राप्ति और बिना किसी माध्यम की सहायता से ध्यान के उद्देश्य की प्राप्ति।

(क) सविकल्प या संप्रज्ञता समाधि: उद्देश्य की प्राप्ति के लिए दिए की लौ, नाक की ऊँचाई या देवता की छवि के सहयोग से किए जाने वाला ध्यान सविकल्प या संप्रज्ञता समाधि है, जो अंतत: अवधारणा (विकल्प), प्रत्यक्ष ज्ञान, शब्द अथवा ध्यान की वस्तु के ज्ञान के रूप में स्थान ले लेती है ।

इसकी चार स्थितियां होती हैं :

(i) सवितर्क : चित्त यानी मन, ध्यान की स्थूल वस्तुऐ जैसे दिए की लौ, नाक की नोक, अथवा देवता के चित्र इत्यादि पर ध्यान केद्रित करता है ।

(ii) सविचार : चित्त, ध्यान की सूक्ष्म वस्तुओं जैसे तन्मात्राओं पर ध्यान केंदित करता है ।

(iii) सानंद : चित्त, ध्यान की स्थिर सूक्ष्म वस्तुओं जैसे इंद्रियों पर ध्यान केंद्रित करता है

(iv) सस्मिता : चित्त उन अंहकार अवयव पर ध्यान केंद्रित करता है जिसके लिए वह स्वयं सामान्य रूप से पहचाना जाता है ।

(ख) निर्विकल्प या असंप्रज्ञता समाधि: यह बिना किसी वस्तु की सहायता से ध्यान की प्रक्रिया है जो चेतना के अतिसूक्ष्म तत्वों के ज्ञान की ओर ले जाती है।

–*–

अध्याय 16

भक्ति योग (प्रेम की राह)

गांधीजी ने चरणबद्ध विकास की प्रक्रिया की निम्नलिखित रूप में व्याख्या की है :

> *"यदि हम गुजरे हुए समय की ओर रूख करें जिसके इतिहास ने हमारी किसी घटना को अंकित किया हो, तो हम पायेंगे कि मानव अंहिसा की ओर लगातार प्रगतिशील रहा है। हमारे आदिकालीन पूर्वज नरभक्षी थे। फिर एक समय आया जब वे राक्षसीपन से ऊब गए और उन्होंने शिकार पर जीना शुरू कर दिया। अगले चरण में मानव ने कृषि को अपना लिया और अपने भोजन के लिए मातृभूमि पर आश्रित हो गया। इस प्रकार मानव खानाबदोश से एक स्थिर एवं सभ्य जीवन की ओर अग्रसर हुआ, गांव और नगरों को बसाया और एक परिवार का सदस्य होने के नाते वह एह समुदाय और एक राष्ट्र का सदस्य बना।*
>
> *यह सभी प्रगतिशील अहिंसक होने एवं हिंसा में निरंतर कमी आने के लक्षण हैं। यदि ऐसा न हुआ होता, मानव प्रजाति का अस्तित्व अब तक विलुप्त होने के कगार पर होता और कई छोटी प्रजातियाँ विलुप्त हो गई होती। जानवर के रूप में मानव हिंसक है लेकिन आत्मिक के रूप में वह अहिंसक है। वह क्षण जब उसके भीतर आत्मचेतना जगती है, वह हिंसक नहीं बना रह सकता। या तो वह अहिंसा की ओर प्रगतिशील रहता है या अपने पतन की ओर चला जाता है" ।*

भगवान के प्रति अपार प्रेम ही भक्ति है, और भगवान सभी जीवों में आत्मा के रूप में उपस्थित है। भगवान को आप, पालण-पोषण करने वाले पिता, प्रेम करने वाली माता, गुरू, परमप्रिय पति या पत्नी, सहानुभूतिशील मित्र, एक ग्राहक यहां तक कि बालकृष्ण के रूप में दर्शाये गए एक नटखट बच्चे के रूप में भी पा सकते हैं।

'योमां पश्यति सर्वत्र सर्व च मयि पश्यति ।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च में न प्रणश्यति ।।
अर्थात

मैं उनके लिए सर्वदा उपस्थित हूँ जो मुझे प्रत्येक जीव में देखता है । जो सम्पूर्ण जीवन को मेरी अभिव्यक्ति के रूप में देखता है, वह मुझसे कभी अलग नहीं होता। (श्रीमद्भगवद्गीता 6-30)

'सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकात्वमा स्थित : ।
सर्वथा वर्तमानोअपि स योगी मयि वर्तते ।।
अर्थात

वह जो मुझे सभी जीवों में एकभाव के रूप में भजता है, ऐसा व्यक्ति, ध्यान में या कर्म करते हुए भी, मुझ में बना रहता है। (श्रीमद्भगवद्गीता 06/31)

आत्मापम्येन सर्वत्र समं पश्यति योअर्जुन ।
सुखं वा यदि वा दु:ख स योगी परमो मत: ।।
अर्थात

जब कोई व्यक्ति दूसरों के सुखों एवं दुखों में अपने सुखों एवं दुखों की अनुभूति करता है, ऐसा व्यक्ति आध्यत्म एकात्म की सवश्रेष्ठ स्थिति प्राप्त करता है। (श्रीमद्भगवद्गीता 6-32)

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्र: करूण एवं च।
निर्ममों निरहंकार समदु:खसुख क्षमी।।

अर्थात

मैं उस व्यक्ति से प्रेम करता हूँ जो बुरा नहीं सोचते, जो मित्रवत एवं सहानुभूतिपूर्ण रहते हैं और जो 'मैं', 'मुझे' और 'सिर्फ मेरा' की स्वार्थपूर्ण भावना और खुशी एवं किसी पीड़ा के बिना जीते हैं। (श्रीमद्भगवद्गीता 12:13)

संतुष्ट सतत् योगी यतसत्मा दृढ़निश्चय: ।
मथ्यर्पितमनोबुदिद्वधर्यो मभक्त: स मे प्रिय: ।।

अर्थात

अर्थात मुझे उनसे प्रेम है जो धैर्यवान, संघर्षशील, आत्मनियंत्रित एवं मुझसे दृढ विश्वास रखते हैं

(श्रीमद्भगवद्गीता 12:14)

समं पश्यन्हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम।
न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम।।

अर्थात

जो मनुष्य नष्ट होते हुए भी सब चराचर भूतों में परमेश्वर को नाशरहित और समभाव से स्थित देखता है वही एकमात्र यथार्थ देखता है। (श्रीमद्भगवद्गीता 13:27)

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठतं परमेश्वरम्।
विनश्यत्स्वविनश्यंत य पश्यति स पश्यति।।

अर्थात

जो प्रत्येक स्थान पर उसी ब्रह्म को समान रूप से देखता है, वे स्वयं एवं दूसरों को हानि नहीं पहुँचाते हैं। वे ही अतत: अपनी परमगति को प्राप्त होता है। (श्रीमद्भगवद्गीता 13:28)

1. अहिंसा या हिंसा न करना या प्रेम के मार्ग का पहला कदम किसी भी प्रकार या रूप में समस्त घृणा का त्याग करना है तथा किसी भी जीव को विचारों, शब्दों एवं कार्यों से आहत करने से बचना है।

गांधी जी का कहना था *"वो प्रेम नहीं है यदि हम सिर्फ उन्हें प्रेम करते हैं जो हमें प्रेम करते हैं, वास्तव में प्रेम वह है जब हम उन्हें भी प्रेम करते हैं जो हमसे नफरत करते हैं। मुझे पता है कि प्रेम के इस भव्य नियम का पालन करना कितना मुश्किल है ? लेकिन क्या सभी महान एवं अच्छे काम करने मुश्किल नहीं है? नफरत करने वाले को प्रेम करना सभी के लिए अत्याधिक मुश्किल है। लेकिन भगवान की कृपा से यदि हम कोई कार्य करने की ठान लें तो चाहे कितना भी कार्य मुश्किल क्यों न हो आसानी से पूर्ण हो जाता है"।*

परन्तु हम प्रेम को किस प्रकार विकसित एवं संरक्षित कर सकते हैं? हम किस प्रकार भ्रष्ट एवं अपमान करने वाले अधिकारियों, ईर्ष्यालु सह कर्मियों एवं पीठ पीछे चुगली करने वाले मित्रों से प्यार कर सकते हैं ? इसे केवल प्यार के क्षेत्र को व्यापक करके ही प्राप्त किया जा सकता है।

उनके पास आए उन लोगों से गांधी जी कभी यह उम्मीद नहीं रखते थे कि उनके अंदर इस तरह का त्वरित रूपांतरण हो जाएगा या वर्षों पुरानी मानव प्रकृति रातों-रात बदल जाएगी और वे अपने से अधिक अपने

शत्रुओं से प्रेम करने लगेंगे । वह स्वयं ऐसी उच्च स्थिति तक पहुँचने हेतु अपने प्रयासों में अनगिनत बार असफल हुए थे ।

> वह हमेशा कहा करते थे *'' जहां तुम हो वहीं से प्रारंभ करो, अगर आप वायसराय या प्रधानमंत्री से प्रेम नहीं कर सकते, तो अपनी पत्नी या अपने पति या अपने बच्चों से इसकी शुरूआत कीजिए । दिन के हर पल पहले उनके कल्याण का ध्यान रखें इसके पश्चात् अपना और धीरे धीरे अपने प्यार के क्षेत्र को बढ़ाते जाएं। जब तक आप अपने सर्वश्रेष्ठ प्रयास करते रहेंगे तब तक असफलता का कोई प्रश्न ही नहीं उठता ''।*
>
> *सत्य का मार्ग जितना सीधा होता है उतना ही संकरा होता जाता है । ऐसा ही अहिंसा का मार्ग है। यह तलवार की धार पर स्वयं को संतुलन करने जैसा है । एकाग्रता द्वारा एक कलाबाज रस्सी पर चल सकता है। लेकिन सत्य और अहिंसा के मार्ग पर चलने के लिए एकाग्रता की कहीं ज्यादा आवश्यकता है । पथ से थोड़ा भी विचलन व्यक्ति को भूमि पर गिरा देता है ।*
>
> *व्यक्ति के सतत् प्रयासों के माध्यम से ही सत्य और अहिंसा की अनुभूति हो सकती है। अहिंसा स्वयं उत्पन्न होने वाली चीज नहीं है, इसे प्रकट करने के लिए प्रयास करने पडते हैं। किसी जीव का दिल न दुखाना अहिंसा का हिस्सा है, इसमें कोई दो राय नहीं है। किंतु यह इसकी न्यूनतम अभिव्यक्ति है। प्रत्येक बुरे विचार से, अनावश्यक शीघ्रता से, झूठ से, घृणा से, किसी के अस्वस्थ्य होने की कामना करने से अहिंसा का सिद्धांत आहत होता है। जिन वस्तुओं की दुनिया को आवश्यकता है, उनकी जमाखोरी करने से भी उल्लंघन होता है। लेकिन दुनिया को वो सब चाहिए जो हम हर दिन खाते जा रहे है। जहां हम खड़े हैं वह लाखों सूक्ष्म जीवों का जीवन स्थल है, और जो हमारे वहां होने से आहत होते हैं । तब हमें क्या करना चाहिए? क्या हमें आत्महत्या कर लेनी चाहिए? यह कोई समाधान नहीं है, यदि हम विश्वास करें, जैसा कि हम करते है, कि जब तक आत्मा इस हाड़मांस के साथ जुडी है तो शरीर जीवित है, शरीर के प्रत्येक विनाश पर आत्मा स्वयं को दूसरे रूप में बदल लेती है ।*
>
> *शरीर का त्याग केवल तभी होगा जब इसकी आसक्तियां समाप्त हो जाएगी। सभी आसक्तियों से मुक्ति प्राप्त होने से ही सत्यरूपी ईश्वर की अनुभूति होती है। ऐसी अनुभूति को शीघ्रता से नहीं प्राप्त किया जा सकता । इस शरीर का हमसे कोई संबंध नहीं है। जब तक यह शरीर जीवित है हमें इसका उपयोग एक ट्रस्ट के रूप में करना है, तत्पश्चात अपना प्रभार सौंप देना है। हाड़मांस की इस वस्तु के बारे में हमें यह मान कर चलना है कि एक दिन इस शरीर के बोझ से मुक्त होना है । हाड़मांस के इस पुतले की सीमाओं को अनुभूत करके हमें अपनी उपलब्ध क्षमताओं से उस आदर्श को प्राप्त करने के लिए प्रतिदिन संघर्ष करना चाहिए। शायद यह पहले से ही स्पष्ट है कि अहिंसा के बिना सत्य का अनुसरण एवं खोजा जाना संभव नहीं है। सत्य और अहिंसा एक दूसरे से इस प्रकार गुथे हुए है कि इन्हें वास्तविक रूप से सुलझाना तथा इसे अलग कर पाना संभव नहीं है । ये एक सिक्के के दो पहलू के समान है ।*

2. प्रेम की भावना यह जतलाती है कि कर्म ही पूजा है । कार्य करने की मंशा अहंकार बढ़ाने के लिए या इसके परिणामस्वरूप कोई पुरस्कार प्राप्त करने की नहीं है । कार्य निस्वार्थ सेवा की भावना से किया जाना है क्योंकि भगवान को ढूढने का एकमात्र मार्ग अपने अंदर के सृजन में 'उसके' दर्शन करना और उसमें एकाकार होना है ।गांधीजी ने दीरद्र नारायण (गरीब, शोषित और दलित के रूप में प्रकट होने वाले भगवान) की विशेष रूप से सेवा करने पर जोर दिया ।

"ईश्वर को प्रसन्न करने लिए गरीबों की निस्वार्थ सेवा से बढ़कर कोई विशुद्ध पूजा नहीं है । धनी व्यक्ति अपने अहंकार एवं बुद्धिमता के अभिमान से प्राय: भगवान को भूल जाते है, यहां तक उसके अस्तित्व पर भी प्रश्न उठाते है । लेकिन भगवान, गरीबों-निर्बलों में बसते हैं, क्योंकि निर्बल उसकी शरण में ऐसे रहते हैं जैसे वो उनके एकमात्र शरणदाता या आश्रयदाता हों । अत: गरीबों की सेवा ईश्वर की सेवा है। यदि मैं समझता हूँ कि मुझे राजनीति में हिस्सा लेना है, तो ऐसा केवल इसलिए है कि राजनीति हमें सर्प की कुण्डली के समान घेरे हुए हैं, हम कितना भी प्रयास क्यों ना कर लें बाहर नहीं आ सकते । मेरी कामना उस सर्प के साथ संघर्ष करने की है।

3. प्रेम और समकक्ष जीवों के दुखों प्रति निष्ठुर उदासीनता एक साथ नहीं रह सकती है । जैसे कि 'गरीबी के भय' अध्याय में समग्र प्रतिमान से अस्तेय और अपरिग्रह के सिद्धांत की उत्पत्ति की व्याख्या की गई है कि ईश्वर ही समस्त चीजों का सजृनकर्ता है अत: सभी कुछ ईश्वर का ही है। चूंकि समस्त जीव एक ही ईश्वर की अभिव्यक्ति है, अत: इस ब्रह्मांण्ड की सभी चीजें सभी के द्वारा समान रूप से साझा की जाएंगी, किसी को भी अपने अनुपातिक हिस्से से ज्यादा उपभोग या अधिग्रहित करने का अधिकार नहीं है अत: जो अपने हिस्से से ज्यादा लेता है वह 'चोरी' किए जाने का दोषी है। ईश्वर को पाने का इच्छुक व्यक्ति, ऐसी चोरी करके एवं ईश्वर का अनुसरण या उसका प्यार जताने का दावा साथ-साथ नहीं कर सकता है ।

जानबूझकर अपनी चाहतों या इच्छाओं पर स्वैच्छिक प्रतिबंध, कृत्रिम गरीबी या बजट द्वारा इच्छाओं की सीमाओं के निर्धारण से एकदम अलग है । चाहत की स्वैच्छिक प्रतिबंधता कोई नाकारात्मक गतिविधि नहीं है बल्कि समकक्ष जीवों के लिए प्रेम की सकारात्मक अभिव्यक्ति है। स्वैच्छिक सरलता या गैर-अधिग्रहिता का अर्थ यह नहीं है कि मानव श्रम, प्रतिभा और क्षमताओं का किसी भी प्रकार से कम उपयोग किया जाए या उनको बेकार किया जाए। इनका अधिकतम सीमा तक सही दिशा में उपयोग किया जाना चाहिए । प्रत्येक को अपनी प्राकृतिक प्रतिभा एवं अपनी सामर्थ्य की क्षमता के अनुसार कार्य करना होगा, लेकिन अपनी वास्तविक आवश्यकताओं से अधिक नहीं लेना होगा । यदि किसी के पास अतिरिक्त धन है, तो वो इसे, इसके ट्रस्ट के रूप में या समाज के श्रेष्ठ हित में इसका उपयोग कर सकता है ।

4. भक्ति योग का अर्थ निस्सहाय होना या संघर्ष का त्याग करने की निष्क्रिय स्थिति नहीं है । एक बार गांधीजी ने कहा था "यद्यपि मैं सर्प से प्रेम करता हूँ, किंतु यदि यह मुझे काटने आएगा तो मुझे इसे मार देना चाहिए"। अत: श्रीमद्भगवद्गीता में किसी भी प्रकार की व्याघात स्थिति नहीं है, जहां भक्ति योग अर्जुन को सभी से प्रेम करना सिखाता है, वहीं कर्मयोग में उससे दुष्टों से युद्ध करना और सज्जनों की रक्षा करने की अपेक्षा भी है । ऋषि मुनियों के अनुसार आत्महत्या या किसी की हत्या करना सभी पापों की तुलना में सबसे बड़ा पाप है, जिसे 'ब्रह्म हत्या पाथकम' कहते हैं जिसका अर्थ है ईश्वर के निवास स्थल की हत्या करना । लेकिन अर्जुन का एक योद्धा के रूप में कर्तव्य है कि युद्ध करें और श्री कृष्ण ने व्याखयित किया है कि वह किस प्रकार बिना धर्म का उल्लंघन किए और कर्म के नियम द्वारा बंधे रह कर अपने कर्तव्य को पूर्ण कर सकता है ।

अपने सबसे सक्रिय रूप में अहिंसा 'सत्याग्रह' बन जाता है, जो गांधीजी का ब्रह्मास्त्र अर्थात् 'ब्रह्माजी का अस्त्र' था। सत्य का अर्थ केवल सच (असत्य के विपरीत) बोलना नहीं है । 'सत्य' का अर्थ है सत्य, ब्रह्म । 'आग्रह' का अर्थ क्रोध नहीं, बल्कि दृढ़ता है । सत्य में दृढ़ता ही 'सत्याग्रह' है । इस क्रिया में आत्मबल है। गांधी जी के अनुसार 'सत्याग्रह' दुष्ट कर्मियों के प्रति बिना द्वेष रखें, सत्य के पालन में दृढ़ता और निर्भयता दर्शाना है, चाहे मृत्यु का मुख क्यों न देखना पड़े। सत्याग्रह अनुनय, आत्मबलिदान और आत्मपीड़ा के माध्यम से अनुचित करने वालों के हृदय में सत्य जगाने का प्रयास है ।

सत्याग्रही किसी भी प्रकार के बल के प्रयोग के माध्यम से अपने विरोधी को दबाने का या नुकसान पहुंचाने का प्रयास नहीं करता है । बुरे कर्म करने वाला स्वयं को ''मैं'' के विस्तार के रूप में देखता है, और सत्याग्रही ऐसे व्यक्ति को किसी प्रकार की हानि पहुंचाए बिना, आत्म बलिदान के माध्यम से उसमें सत्य का प्रकाश जलाने के लिए गंभीर एवं निडर प्रयास करता है। अत: सत्याग्रह दोनों सत्याग्रही और बुरे कर्म करने वाले के लिए उन्नति प्रदान करने वाला है । सत्याग्रही की कभी भी बुरे कर्म करने वाले को शर्मिंदा करने की नियत नहीं होती है । भयभीत होकर कभी प्रार्थना नहीं की जाती है, यह हमेशा हृदय से होनी चाहिए। सत्याग्रहियों का उद्देश्य बुरे कर्म करने वाले को अपने मार्ग पर लाना ही नहीं है अपितु उन्हें अच्छा इंसान बनाने का भी है। सत्याग्रह किसी भी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह द्वारा परिवार, समाज और राष्ट्र एवं और अन्य विषयों में बदलाव लाने की किसी इच्छा हेतु किया जा सकता है ।

-*-

अध्याय 17
कर्म योग (कर्म की राह)

तस्मादज्ञानसम्भूतं हृदस्थं ज्ञानासिनात्मन: ।
छिच्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ।।

अर्थात

हे भारत, स्वयं के समत्व रूप के बारे में अपने हृदय में संदेहों को ज्ञान रूपी तलवार से काट दो, उठो और (कर्म) योग के पथ पर अग्रसर हो जाओं। (श्रीमद्भगवद्गीता 4:42)

श्रीभगवद्गीता न केवल अर्जुन को, अपितु प्रत्येक एवं हममें से सभी को संबोधित है। कृष्ण ने भारत के रूप में अर्जुन को संबोधित किया है । संस्कृत में 'भा' का अर्थ है 'प्रकाश और ज्ञान' तथा 'रत' का अर्थ समर्पण है । भारत का अर्थ है वह जो ज्ञान के प्रकाश के प्रति समर्पित है । ऋषियों द्वारा सभी बुद्धिजीवी व्यक्तियों को भारत से संबोधित किया जाता था एवं जहां वे रहते थे उसे भारत के नाम से जाना गया । जब बाह्य आक्रमणकारियों ने देश पर अधिकार कर लिया, तो उन्होंने इंडिया, बम्बई, मद्रास, आदि जैसे अर्थहीन शब्दों के साथ इतिहास संस्कृति के सभी निशानों को मिटाने या विकृत कर इसे पुनर्निमित करने का प्रयास किया।

भारत की कोई सीमा नहीं है एवं इसने संपूर्ण जगत को अपने ज्ञान का प्रकाश दिखाया है । फारस के लोग सिंधु नदी के पार रहने वालों को हिंदू रूप में बुलाते थे। लेकिन, अतिप्राचीन काल से यह भूमि किसी एक विशेष भगवान या धर्म में विश्वास रखने वाले के रूप में परिभाषित नहीं है । यह आध्यात्मिक ज्ञान, सत्य एवं मोक्ष के अंवेषकों तथा सनातन धर्म (शाश्वत सत्य) के अनुयायियों की भूमि है ।

जब स्वामी विवेकानंद ने 1893 में शिकागो में विश्व धर्म सम्मेलन की संसद को संबोधित किया था तो अमेरिकी उनके शब्दों से अचंभित थे। शहर लोग उनसे पूछ रहे थे "कृपया हमें बताएं आपका देश आध्यात्मिक ज्ञान में इतना धनी है, परन्तु आपका देश इतनी गरीबी एवं गुलामी में क्यों जी रहा है" ?

स्वामीजी ने उत्तर दिया "इसका कारण है कि आपके लोग आध्यात्मिक ज्ञान का पालन करते हैं जबकि हमारे लोग केवल उसका उपदेश देते हैं"।

अमेरिका, कनाडा और ऐसे ही दूसरे देशों में, लोग अपनी आने वाली पांच पीढ़ियों की मदद के लिए धन संग्रह नहीं करते हैं। वे आधारभूत शिक्षा देने के लिए एक सीमा तक अपनी अभिभावकीय भूमिका निभाते हैं और उन्हें अपने पंखों से उड़ान भरने देते हैं। बच्चों का उद्देश्य मेरिट छात्रवृत्ति और छात्र ऋण प्राप्त करना है जो

उन्हें समय और कठोर श्रम से प्राप्त धन की कीमत सिखा देती है । अत: मां बाप पर भी गलत साधनों के माध्यम से धन प्राप्त करने का दबाव नहीं रहता।

इन देशों में हम ज्यादातर लोगों को पूजा के स्थान पर उनके एकत्रित होने की बजाए समुदाय सेवा तथा सामाजिक संगठनों में स्वैच्छिक सेवा करते पा सकते हैं। यहां तक कि एक सामान्य मनुष्य, शक्तिशाली राजनेता और अधिकारियों को न्याय एवं जवाबदेही के लिए कटघरे में खड़ा कर सकता है । प्रत्येक व्यक्ति जो कार्य कर रहा है, उस कार्य से प्रेम करता है तथा 'कर्म ही पूजा है' के सिद्धांत का पालन करता है। लोग सार्वजनिक स्थानों पर कूड़ा नहीं फेंकते हैं क्योंकि इससे दूसरे मानवों का अहित होता है । क्या हमारे लिए अपनी गलतियों को सही करने तथा बेहतर जीवन जीने एवं अपने आस-पास की स्थिति में सुधार लाना संभव नहीं है ?

आध्यात्मिक जीवन का अर्थ सक्रिय जीवन से विमुख हो जाना या सन्यासी के रूप में भिक्षा मांग कर जीवन जीना नहीं है। भगवद्गीता हमें समस्याओं से संघर्ष करने तथा बुराई से लड़ने एवं अच्छे के साथ खड़े होने की शिक्षा देती है। अर्जुन, गांधी जी जैसे आत्मबोध वाले लोग समाज को समर्पित हो जाते हैं तथा इस दुनिया को एक बेहतर स्थान बनाने का प्रयास करते हैं। दुर्भाग्यवश दैनिक जीवन में महान लोगों को आदर्श व्यक्ति मानकर उनसे सीखने के बजाय उन्हें उच्च स्थान देकर एवं केवल उनकी पूजा करना ही हमारी परंपरा रही है ।

जब भारत को हाल-फिलहाल में आजादी मिली थी तो देश सांप्रदायिक दंगों से ग्रस्त था। गांधी जी, अपनी हत्या के दिन तक भी 78 साल की आयु में भी, बिना रूके कार्य कर रहे थे । उन्होंने कई दंगा पीड़ित क्षेत्रों का दौरा किया और संघर्षरत समुदायों के बीच शांति की प्रक्रिया की सहायता की गांधी जी ने लोगों को सलाह दी कि उन्हें पशु के रूप में प्रवृत्त होने के बजाय मानव की तरह ही जीना और मानव के समान ही मरना चाहिए । वह प्रधानमंत्री एवं गृह मंत्री और अन्य नेताओं के मध्य समन्वय कराने भी व्यस्त थे ।

गांधी जी नव-निर्मित राष्ट्र के संविधान बनाने में मदद करने में भी सक्रिय रहे "*मै एक ऐसा संविधान बनाने में प्रयासरत हूँ, जो भारत को समस्त गुलामी और अधीनता से मुक्त कर दे तथा ऐसा करने के लिए यदि आवश्यकता हो तो नीतिविरूद् होनी भी सही है । मैं भारत के लिए कार्य करूँगा, जिसमें अत्यन्त निर्धन भी महसूस करेगा कि यह उसका देश है, जो उन्हें प्रभावशाली आवाज़ वाला बनाता है, एक भारत जिसमें कोई उच्च वर्ग या निम्न वर्ग के लोग नहीं होंगे : एक भारत जिसमें सभी समुदाय उत्तम सद्भाव में जीएंगे*"।

अपृश्यता या मादक द्रव्यों एवं दवाओं के सेवन जैसे अभिशापों का भारत में कोई स्थान नहीं हो सकता है। पुरूषों की तरह ही महिलाएं समान अधिकारों का आनंद ले पाएंगी । तब हम सभी शेष विश्व के साथ शांतिपूर्वक रहेंगे, न ही शोषण करेंगे, न शोषित होंगे। हमें अत्यन्त छोटी सेना की कल्पना करनी चाहिए। सभी के हितों में आपसी टकराव न हो, चाहे वह विदेशी हों या स्वदेशी, सभी भोलेभाले लोगों के हितों का सत्यपरायण के साथ सम्मान होगा। विदेशी और स्वदेशी के मध्य में भेद से मैं व्यक्तिगत रूप से नफ़रत करता हूँ । यह मेरे सपनों का भारत है . . . . इससे कम से मैं संतुष्ट नहीं होऊँगा"।

गांधी जी अपनी गतिविधियों से अपने लिए कुछ प्राप्त करने के लिए नहीं वरन लेकिन वह साथी मनुष्यों के प्रेम और उनकी सेवा करने की इच्छा से काम कर रहे थे। वो एक वाक्यांश में : 'निष्काम कर्म', नि:स्वार्थ सेवा, स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों से मुक्त कार्य' के रूप में गीता के संदेश का सार प्रस्तुत करते थे। 'निष्काम कर्म' का शाब्दिक अर्थ है ऐसा कर्म जो स्वार्थपूर्ण इच्छा के बिना किया गया है; यह नोट करना महत्वपूर्ण है कि इच्छा ही जीवन की ज्वाला है । बिना इच्छा के कुछ भी नहीं प्राप्त किया जा सकता, चाहे वो मुक्ति हो या जीवन का पुर्नसृजन अथवा सततता के रूप में कोई प्राकृतिक प्रक्रिया हो।

निष्काम कर्म परोपकारी गतिविधि नहीं है। अच्छे कार्य करना जिसमें दूसरों को लाभ हो, उसमें भी अहंकार के मूल तत्वों की सहभागिता बनी रहती हैं। निस्वार्थ उद्देश्य से किया गया कर्म मन को विशुद्ध करता है क्योंकि कर्ता में कर्म के पश्चात् अहंकार उत्पन्न होने की संभावना कम होती है।

विश्व के कल्याण के लिए सदैव तत्पर रहो ;

तस्मादसक्त: सततं कार्य कर्म समाचर:
असक्तो हयाचरन्कर्म परमोप्नोति पुरूष: ।।
अर्थात

अतैव तुम अनासक्त होकर होकर निरंतर कर्म कर्तव्य का अनुपालन करो, क्योंकि अनासक्त होकर कर्म का आचरण करने से पुरुष मोक्ष प्राप्त करता है। (श्रीमद्भगवद्गीता 3:19)

कर्मनेव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादय: ।
लोकसंड्ग्रहमेवापि सम्पश्यन कर्तुमर्हसि ।।
अर्थात

मन में सदैव दूसरों के कल्याण की भावना के साथ कार्य करें। ऐसे ही कर्मों द्वारा राजा जनक ने परम सिद्धि प्राप्त कर ली थी। दूसरों को भी इसी मार्ग का पालन करना है। (श्रीमद्भगवद्गीता 3:20)

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तस्तदेवेतरा जन: ।
स यत्प्रमाणं कुरूते लोकस्तदनुवर्तते ।।
अर्थात

महान पुरूष जो आचरण करता है, दूसरे लोग भी वैसा आचरण करने का प्रयास करते हैं, महान व्यक्ति द्वारा तय मानकों को ही सम्पूर्ण जगत द्वारा पालन किया जाता है। (श्रीमद्भगवद्गीता 3:21)

न में पार्थस्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किंचन।
नान वाप्तमवाप्तव्यं वर्त एवं च कर्माणि ।।
अर्थात

यद्यपि मेरे लिए कुछ भी करने योग्य कर्म नहीं है, क्योंकि मेरे लिए तीनों लोकों में कुछ भी अप्राप्य या प्राप्त करने योग्य नहीं है तथापि मैं कर्म में संलिप्त हूँ किंतु स्वयं की किसी भी आवश्यकता के लिए नहीं। (श्रीमद्भगवद्गीता 3:22)

सक्ता: कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत
कुर्याद्विद्वांस्तथा सक्ता रिचकीर्षुर्लोकसंग्रहम ।।
अर्थात

कर्म में आसक्त अज्ञानी लोग जिस प्रकार कर्म करते हैं, लोक हित के इच्छुक ज्ञानी व्यक्ति भी उस प्रकार अनासक्त होकर कर्म करें। (श्रीमद्भगवद्गीता 3:25)

न बुद्दिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसंड्गिनाम।
जोषयेत्सर्वकर्मनि विद्यान्युक्त: समाचरन ।।
अर्थात

ज्ञानलोक के उपदेशक अन्य व्यक्तियों को यह उपदेश देकर उनकी बुद्धि में भ्रम उत्पन नहीं करेंगे कि कर्म त्याग करो, ज्ञान का अभ्यास करो, बल्कि समाहित चित्त से स्वयं सभी कर्मों का भली भांति आचरण करते हुए, अन्य व्यक्तियों को भी कर्म में शामिल करेंगे (श्रीमद्भगवद्गीता 3:26)

एक व्यक्ति के कल्याण में समाज का कल्याण शामिल होता है। उचित रूप से कार्य करने के लिए समाज को गुरू की आवश्यकता होती है जो पथ प्रदर्शित करे, एक नेता की, जो आंतरिक एवं बाह्य शत्रुओं से लोगों की रक्षा करें, किसान एवं उद्यमियों की जो संपत्ति सृजन करें, श्रमिकों तथा कर्मचारियों की जो समाज की सेवा करें।

1. गुरू : किसी गुरू का अनिवार्य रूप से यह अर्थ नहीं है जो विज्ञान या भाषा की शिक्षा देता है। संस्कृत की एक सूक्ति है 'गुरू साक्षात परम् ब्रह्म' । सच्चा गुरू वह जिसे आत्म-बोध है (बोध कि वह ब्रह्म से भिन्न नहीं हैं) एवं वह ऐसे ज्ञान को प्राप्त करने के लिए अन्य लोगों का मार्गदर्शन करें। गुरू होना मात्र अधिकार का एक पद नहीं है, अपितु उत्तरदायित्व का पद है।

दुर्भाग्यवश आज बहुत से गुरू सरकारी खजाने से भारी वेतन लेते हैं, लेकिन शायद ही कुछ सिखाते हैं। इनमें से ज्यादातर प्राइवेट ट्यूशन, धन उधारी, रियल स्टेट, लेन-देन, जीवन-बीमा कारोबार एवं इसी प्रकार के साधनों से अतिरिक्त धन अर्जन मे लिप्त है। चूंकि माता-पिता एवं शिक्षक युवा मन पर महान प्रभाव डालते हैं, अत: वे हमारे भविष्य की पीढ़ियों के लिए बुरे आदर्श बन जाते हैं।

" गांधी जी ने कहा था कि मीलों दूर बैठा एक गुरू भी शिष्यों की आत्मा पर अपने जीने के मार्ग द्वारा प्रभाव डाल सकता है। एक कायर शिक्षक अपने शिष्यों को साहस कभी नहीं सिखा सकता। जो स्वयं आत्म-संयमी नहीं हैं वे अपने शिष्यों को आत्म संयम के मूल्य कभी नहीं सिखा सकते हैं। यदि मैं झूठा होता, तो मैं दूसरे लोगों को सत्य बोलना का उपदेश देकर अपना समय व्यर्थ शिष्यों कर रहा होता। अत: मैंने महसूस किया कि मेरे साथ रहने वाले शिष्यों के लिए मुझे एक शाश्वत-वस्तु के उदाहरण की तरह होना चाहिए। तब वे मेरे गुरू बने और मैंने सीखा कि मुझे अच्छी और सादा जीवन जीना है, केवल उनके प्रयोजन के लिए"।

2. नेतृत्वकर्ता : राजनीति के क्षेत्र में नए नेताओं की भारी मांग है; यह मांग संकेत करती है कि स्थिति बहुत गंभीर है, आपातकालीन स्थिति से कम नहीं। आज बहुत से राजनेता भ्रष्ट, सफेदपोश अपराधी और सत्ता के दलाल बन गए है। वे भ्रष्ट अधिकारियों को संरक्षित करते हैं एवं धन, उपहार, जाति विभाजन एवं इसी प्रकार की चीज़ो से वोटरों की कमज़ोरियों से शोषण करते हैं।

एक सच्चा नेता सेवा और रक्षा के प्रयोजन हेतु अपना जीवन कुर्बान कर देते हैं। वो या तो अकेले या अपने जैसे बुद्धिजीवी लोगों को संगठित करके राजनीतिक पार्टी या एनजीओ के रूप में कार्य करता है और सूचना के अधिकार अधिनियम, जनहित याचिकाओं (पीआईएल) ; सत्याग्रह इत्यादि जैसे साधनों के माध्यम से लोगों की समस्याओं के लिए संघर्ष कर सकता है। जैसे कि गांधी जी ने ठीक ही कहा है, बुरी राजनीति का इलाज़ राजनीति न करना नहीं है बल्कि अच्छी राजनीति करना है। अत: हार-जीत और सत्ता शक्ति हासिल करने की इच्छा न रखने वाले आदर्श विचारों वाले लोगों की जनहित सेवा के लिए राजनीति में अत्यंत आवश्यकता है।

3. उद्यमी : एक लालची व्यापारी मानवीय मूल्यों की अनदेखी करके केवल अपने व्यापार में लाभ के बारे में ही सोचता है और उसी अनुसार कार्य करता है। सच्चा कारोबारी स्वयं को एक ट्रस्टी के रूप में मानता है, जिसका कर्तव्य कारोबार का इस प्रकार प्रबंधन करना है कि किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को अधिक परेशानी का सामना न करना पड़े। सही दाम पर ग्राहकों के उपलब्ध कराने के लिए वस्तुएं बनाना एवं सेवाएं देना, कर्मचारियों को उचित वेतन का भुगतान करना, सरकार को नियमित रूप से कर देना इत्यादि एक प्रबुद्ध कारोबारी की जिम्मेदारी है।

जो कारोबारी यह मानता है कि जो आत्मा उसमें निहित है वही आत्मा दूसरे भी वास करती है, ऐसा कारोबारी अपने ग्राहकों या सरकार के साथ कभी धोखा नहीं कर सकता। हालांकि, अधिकतर कारोबारी यह

सोचते हैं कि आज की वास्तविक परिस्थितियों में सच्चा होना बहुत मुश्किल है । इस दिशा में शुरूआती प्रयास के रूप में, ऐसे व्यक्ति नेक एवं जनहित गतिविधियों के लिए उदारता से अपना योगदान दे कर लाभ उठा सकते हैं।

4. सेवक : हम जो भी कार्य या व्यवसाय करते हैं, हम अपने कार्य को उसी प्रकार कर सकते हैं; जैसा कि गांधी जी ने अपने कानूनी कैरियर में किया था।

उनके अनुसार "*जहां तक मुझे याद आता है, मैने पहले भी कहा है कि मैंने अपने पेशें में असत्य का कभी सहारा नहीं लिया, तथा मेरी कानूनी प्रैक्टिस का एक काफी लम्बा समय जनहित कार्यों के लिए था, जिसके लिए मैंने छोटे–मोटे फुटकर खर्चों से अधिक कभी कोई फीस नहीं ली, वह भी तभी जब मेरे द्वारा वो खर्चे किए गए हो। मैंने सोचा था कि मेरे यह करने से मेरी कानूनी प्रैक्टिस से संबंधित यह सभी अनिवार्य चीज़े पूर्ण हो जाएंगी। लेकिन मेरे मित्र मुझसे और अधिक अपेक्षाएं रखते थे। मुझे ऐसा लगता था कि वे यह सोचते हैं कि कुछ अवसरों पर मैंने सत्य के मार्ग पर चलते हुए सेवा करने के लिए मना ना करके यदि मैंने उन मौको पर जिरह की होती तो कानूनी पेशें में लाभ हो सकता था।*

एक छात्र के रूप में मैंने सुना था कि वकीलों का पेशा, झूठ बोलने का पेशा है। लेकिन इस कथन ने मुझे कभी प्रभावित नहीं किया, क्यूंकि झूठ बोलकर पद या पैसा कमाने की मेरी कोई नियत नहीं थी।

मेरे सिद्धांत ने दक्षिण अफ्रीका में कई बार मुझे मुश्किल में डाल दिया था। मैं हमेशा से जानता था कि मेरे प्रतिद्वन्दी अपने साक्षियों को सिखाते पढ़ाते थे और यदि मैं केवल अपने मुवक्किलों को या उसके गवाह को झूठ बोलने के लिए प्रोत्साहित करता तो हम केस जीत गए होते। लेकिन मैंने सर्वदा ही प्रलोभन का विरोध किया है। मुझे केवल एक ही अवसर याद आता है जब एक केस जीतने के बाद, मुझे संदेह हुआ कि मेरे मुवक्किल ने मुझे धोखा दिया है। मैने अपने हृदय में हमेशा यह इच्छा की है कि मैं अपना केस केवल तभी जीतूं जब मेरा मुवक्किल सच्चा हो । मुझे याद नहीं आता कि कभी मैंने अपनी फीस तय करते समय अपने केस के जीतने पर अधिक फीस की शर्त रखी हो। चाहे मेरा मुवक्किल जीते या हारे, मैंने कभी भी अपनी तय फीस न तो ज्यादा और न ही कम की अपेक्षा रखी।

मैं शुरूआत में ही अपने प्रत्येक नए मुवक्किल को सावधान कर देता था कि मुझसे झूठा केस लेने या गवाहों को झूठी बयानबाजी कराने की अपेक्षा नहीं रखनी चाहिए, इसे परिणामस्वरूप मैंने अपनी ऐसी छवि बना ली कि कोई भी झूठा केस मेरे पास ले कर नहीं आता था। वास्तव में मेरे कुछ मुवक्किल मेरे लिए ही कुछ सच्चे केस रखते थे, किसी और के पास जाने में वे संदेहग्रस्त हो जाते थे" ।

यह अच्छी पहल होगी अगर लोग अपने पेशे के शुरूआती दौर में ही समाज के लिए योगदान करना शुरू कर दें। छात्र जीवन के दौरान ही हमको एनएसएस (राष्ट्रीय सेवा योजना) एनसीसी (नेशनल कैंडेट कोर) रक्तदान शिविर, प्राकृतिक आपदाओं के दौरान राहत शिविर, वृक्षारोपण एवं अन्य स्वैच्छिक सेवाओं जैसे कुछ कार्यक्रमों में भाग लेना चाहिए। ऐसे कार्यक्रम व्यक्तित्व विकास तथा आत्मसम्मान सशक्त करने के बहुमूल्य अनुभव प्रदान करते हैं ।

कर्म के नियम के अनुसार, जो हम बोते हैं वहीं काटते हैं। यदि हम सात्विक, राजसिक और तामसिक प्रवृत्तियों में बंधकर कार्य करते हैं, तो वो हमें आसक्तियों में बांधते है, और हमें अपने वास्तविक लक्ष्य से भटकाते हैं। उदाहरण के लिए यदि हम राजसिक प्रकृति के कारण धन संचय करते हैं; तो तब तक जीवन मृत्यु के चक्र से बंधें रहते हैं जब तक कि हम ऐसे धन की आसक्ति से मुक्त नहीं हो जाते। यदि हम तामसिक अज्ञानता के कारण बुरे कार्य करते हैं तो हमें जीवन के सबक सीखने के लिए उसके परिणाम को झेलना होगा ।

कर्म के बंधन से मुक्त होने के लिए, कुछ लोग सक्रिय जीवन का त्यागने का प्रयास करने लगते हैं। लेकिन कोई भी व्यक्ति कर्म करने से बच नहीं सकता, क्योंकि खाना और बात करना भी कर्म करने के रूप ही है । अत: जो मोक्ष प्राप्त करना चाहते हैं, उनको परिणामों की अनासक्ति के साथ कर्म करते हुए भगवान की सेवा के रूप में मानव जाति की अनवरत सेवा करते रहना चाहिए।

–*–

अध्याय 18
मृत्यु से अमरता तक

ॐ असतो मा सद्गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मामृतं गमय।
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

(बृहदारण्यक उपनिषद)

हिंदी अर्थ

- **असतो मा सद्गमय:** हे ईश्वर, मुझे असत्य (अज्ञान) से सत्य (ज्ञान) की ओर ले चलो।
- **तमसो मा ज्योतिर्गमय:** मुझे अंधकार (अज्ञानता) से प्रकाश (दिव्य ज्ञान) की ओर ले चलो।
- **मृत्योर्मा अमृतं गमय:** मुझे मृत्यु (संसार) से अमरता (मोक्ष/मुक्ति) की ओर ले चलो।
- **ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः:** चारों ओर शांति, शांति और शांति हो।

गांधी जी और अन्य स्वतंत्रता सेनानियों के दशकों के निरंतर प्रयासों के परिणाम स्वरुप 15 अगस्त 1947 को ब्रिटिश सरकार भारत को स्वतंत्रता देने के लिए सहमत हुई, और इस देश को धार्मिक आधार पर विभाजित कर दिया। गांधी जी ने देश के विभाजन का विरोध किया और हिंदुओं एवं मुसलमानों के बीच एकता को प्राप्त करने की दिशा में काम किया। परन्तु कुछ चरमपंथियों का मानना था कि उन्होंने मुस्लिम हितों को वरीयता देते हुए हिंदुओं के हितों की अनदेखी की। उनकी हत्या का भी एक प्रयास किया गया जो विफल रहा, फिर भी उन्होंने अपने मिशन को जारी रखा।

30 जनवरी 1948 की शाम को, गांधीजी अपने अस्थायी निवास बिड़ला हाउस से प्रार्थना स्थल जाने के लिए बाहर निकले। उपवास एवं निरंतर दौरो ने उन्हें कमजोर बना दिया था, वह अपने दो सहायको की सहायता से धीरे-धीरे चल रहे थे। सैकड़ों अनुयाई उनके पैर छूने के लिए, उनका आशीर्वाद पाने के लिए और प्रार्थना में उसके शामिल होने के लिए एकत्र हुए थे। गांधीजी रुक-रुक कर पारंपरिक ढंग से हाथ जोड़ते हुए अपने अनुयायियों का अभिवादन स्वीकार कर रहे थे। तभी भीड़ में से एक उग्रवादी गांधीजी का अभिवादन करने के बहाने से निकलकर सामने आया और गांधीजी की छाती एवं पेट पर एकदम समीप से अपनी पिस्तौल से तीन गोलियां दाग दी और गांधीजी के मुख से 'हे राम ' शब्द निकलने के साथ ही उनकी तुरन्त ही मृत्यु हो गई। मरने की कला, जीने की कला का ही एक रूप है।

उनके अंतिम संस्कार में लाखों लोगों और कई देशों के गणमान्य व्यक्तियों ने भाग लिया। आज, भारत में कोई शहर या कस्बा ऐसा नहीं है जहां उनकी मूर्ति स्थापित ना हुई हो या उनके नाम पर कोई सड़क ना हो।

> गांधी जी ने कहा था *"मेरा आत्मा की अमरता में विश्वास हैं, मैं आपको समुद्र का दृष्टांत देना चाहूँगा। समुद्र जल की बूंदों का संग्रह है; प्रत्येक बूंद का अपना अस्तित्व है और साथ ही उसका एक भाग है ; 'एक भी और अनेक भी' । जीवन के इस समंदर में, हम एक छोटी सी बूँद हैं। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि मेरा मेरे जीवन के साथ, दुनिया में रह रही अन्य समस्त चीजों के साथ, मेरी पहचान होनी चाहिए, जिसे मैं ईश्वर को साक्षी रखकर अपने जीवन की महिमा को साझा*

कर सकूँ । इस जीवन का कुल–योग अर्थात सार परमेश्वर ही है । हम भगवान तो नहीं हो सकते हैं, लेकिन हम भगवान ही के हैं ।

मैं यह ज़ोर देकर कहना चाहूंगा कि जिन्हें हम संत मानते हैं उनकी मृत्यु पर बिल्कुल शोक नहीं करना चाहिए तथा हमें दृढ़ विश्वास होना चाहिए कि उनकी मृत्यु के पश्चात् उनका सत्य कर्म शुरू होने वाला है या वे कर्मफल को भोगने वाले हैं । अपने संपूर्ण जीवन में उनके द्वारा जो महान उपलब्धियां हासिल की गयी हैं उनको क्या भविष्य में इसे निरर्थक मानेंगे । बेशक यह हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी क्षमता की हद तक उन लोगों के पद चिन्हों पर चले जिन लोगों का हमने संतों के रूप में सम्मान किया है।

युग के श्रेष्ठतम मस्तिष्क वाले व्यक्ति अल्बर्ट आइंस्टाइन ने कहा था कि आने वाली पीढ़ी इस बात पर मुश्किल से विश्वास करेंगी कि हाड़–मास से बना ऐसा कोई इंसान भी इस धरती पर आया था ।

गांधीजी की ने अपने जीवन काल में बहुत सी उपलब्धियां हासिल की थी । उनमें से सभी उसके निष्पादन या उनके निकले परिणामों के आधार पर निर्णित है जिसके कारण वे संपूर्ण विश्व में सम्मानित हैं।

गांधी जी ने मानव जाति के पांचवे हिस्से पर शासन करने वाले विदेशी शासकों से मुक्ति दिलाई थी और भारत की स्वतंत्रता अफ्रीका और एशिया के बहुत से देशों में प्रसिद्ध नेताओं जैसे दक्षिण अफ्रीका के नेल्सन मंडेला, म्यांमार की आंग सान सू की, अमेरिका के मार्टिन लूथर किंग एवं अनगिनत अन्य ने गांधी जी से प्रेरणा ली । यद्यपि उनकी मृत्यु के अड़सठ साल बीत गए, फिर भी भारत की हर गली, हर नुक्कड़ और चौराहे पर उनका प्रभाव देखा जा सकता है ।

यह कोई कम महत्वपूर्ण बात नहीं है कि उन्होंने उन लोगों के लिए क्या कुछ नहीं किया जो कभी 'अछूत' के रूप में तिरस्कृत थे। उन्हें सदियों पुरानी जाति उत्पीड़न और सामाजिक तिरस्कार की जंजीरों को तोड़ दिया। यह उन्ही के प्रयासों का परिणाम था कि स्वतंत्रता की परिभाषा में गांवों में रहने वाले लाखों लोगों के लिए सामाजिक, नैतिक और आर्थिक भलाई के प्रयास भी शामिल किये गए। उन्होंने जीवन का एक ऐसा रास्ता दिखाया जो कि भविष्य में किसी दिन दोनों, संगठित एवं अर्जनशील समाज, का विकल्प प्रदान कर सकता है।

उनकी मौत भी अपने आप में एक उपलब्धि थी, उनकी शहादत से नफरत और भ्रातृघात वाले उन्मादी लोग शर्मिंदा हुए और नवनिर्मित राष्ट्र में धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक सिद्धांतों के समेकन से उसको मजबूत करने के लिए मदद की।

शास्त्रों में देवों (अच्छे) और असुरों (बुरे) के युद्ध की कहानियों का वर्णन है, परन्तु इन कहानियों के शब्दों को अक्षरक्ष: नहीं लेना चाहिए । शास्त्रों ने विश्व में अच्छी और बुरी ताकतों के मध्य संघर्ष को नाटकीय ढंग से तथा कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है ।

भगवद्गीता में कहा गया है कि मानवता के दो रास्ते हैं – दैवीय एवं आसुरिक । दैविक गुणों की समावेशता से आसुरिक अवगुणों की उपस्थिति कम होती है। हमें आसुरिक प्रवृत्तियों पर ध्यान देने की जरूरत है उनकी नकारात्मकता पर ध्यान केन्द्रित नहीं करना है परन्तु उनसे सावधान जरूर रहना है।

दिव्य प्रवृत्तियों वाले व्यक्ति के गुण एवं व्यवहार हैं: प्रेम, नकारात्मक भावनाओं एवं भय की अनुपस्थिति, आत्मानुशासन, नि:स्वार्थ सेवा, सत्यपरायणता, विनम्रता, क्षमाशीलता ; मन में समभाव आदि ।

वह प्रवृत्तियों एवं व्यवहार जो हमें आसुरिक व्यक्ति बनाते हैं : धृणा, क्रोध, प्रभुत्व का दंभ, अहंकार, क्रूरता, पाखंड (स्वयं और दूसरों के लिए दोहरे मापदंड रखना), भय एवं नकारात्मक भावनाएं, सही और गलत के बीच अंतर कर पाने में अक्षम इत्यादि ।

आसुरिक प्रवृत्ति वाले लोग तर्क देते हैं कि शास्त्र एक झूठ का पुलिंदा है, ब्रह्मांड एक ऐसा स्थान है जहाँ बलवान का ही अस्तित्त्व है और इसका कोई नैतिक आधार नहीं है। ऐसी विकृत दृष्टि रखने के कारण वे स्वयं एवं दूसरों के लिए पीड़ा का कारण बनते हैं। वे अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए किसी भी प्रकार के साधनों का उपयोग करने में नहीं हिचकेंगे। यदि इन भोगासक्त को अकेला छोड़ दिया जाए तो ये अपने कुकृत्यों से दुनिया को खत्म कर देंगे। वे स्वार्थी अपनी इच्छाओं को पूर्ण कर सकते हैं लेकिन उनका गंतव्य उन्ही का बनाया हुआ नरक होता है और अक्सर वे अपने जीवन में ही उसे भोगते हैं।

लेकिन चूंकि ईश्वर आत्मा के रूप में उनमें भी मौजूद है, अत: उसकी शाश्वत नरकदण्ड हेतु निंदा नहीं की जाती है। सही मार्ग का चयन करने का अधिकार उनके लिए सदैव खुला है।

अर्जुन ने श्रीकृष्ण से एक महत्वपूर्ण प्रश्न पूछा - ऐसे व्यक्ति के साथ क्या होगा जो आध्यात्मिक लक्ष्य पर तो विश्वास करता है, लेकिन आत्म अनुशासन की कमी और भटकाव के कारण सफलता नहीं प्राप्त कर पाता है ? यदि वह असफल होता है, तो क्या वह आत्म-बोध के साथ साथ वो सब भी खो देगा जो उसने आत्म-बोध के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सांसारिक जीवन में सब कुछ छोड़ कर प्राप्त किया ?

श्रीकृष्ण ने उन्हें आश्वस्त किया कि आध्यात्मिक स्थिति की सुधार का उसका कोई भी प्रयास व्यर्थ नहीं जा सकता। यहाँ तक की पुनर्जन्म लेने पर भी, वह कुछ भी खोएगा नहीं अपितु प्राप्त ही करेगा। वह शेष रह गई अपनी इच्छा को पूर्ण करने के लिए उचित स्थान पर पुनर्जन्म को प्राप्त होगा। अपने अगले जीवन में, वह अपनी आध्यात्मिक यात्रा को शुरू करेगा तथा जिसकी नए सिरे से शुरूआत होगी।

दिव्य मार्ग हमें मोक्ष की ओर ले जाता है जबकि आसुरिक मार्ग हमें बंधन के मार्ग की ओर। एक पशु के रूप में हमें अंधकार में फेंका जाना (जन्म लेना) हमारे बुरे कार्यों के परिणामों का एक उदाहरण है। मानव के रूप में जन्म लेना मिले जुले पारितोषिक का एक उदाहरण है।

महान व्यक्ति के रूप में जन्म लेना महान कार्यो के परिणाम का उदाहरण है। लेकिन बुद्धिमान लोग जानते हैं कि धन एवं सुख प्रकृति का हिस्सा हैं अत: अन्तत: इसे नष्ट हो जाना है। जब अपने जीवन में कमाया हुआ पुण्य समाप्त हो जाता है, तो यह सामान्य जन्म-मृत्यु चक्र के अगले चरण में पुन: मिल जाता है। यह बंधन मार्ग है। अत: हमारा लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त करना तथा सत्य, ब्रह्म अविनाशी विशुद्ध चेतना में विलय होना चाहिए।

अनन्यचेता: सततं यो मां स्मरति नित्यश: ।

तस्याहं सुनभ: पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिन : ।।

अर्थात

जो सर्वदा मुझे जपता है, मैं उस व्यक्ति को को सरलता से प्राप्त हो जाता हूँ एवं उसमें कोई भी आसक्ति शेष नहीं रह जाती है। ऐसा व्यक्ति ही सच्चा योगी है। (श्रीमद्भगवद्गीता 8:14)

मामुपेत्य पुनर्जन्म दु:खालयमाशाश्वतम्।

नारनुवन्ति महात्मान: संसिद्धि परमा गता।।

अर्थात

महात्मजन अपने जीवन को सिद्ध करते हैं और मुझे प्राप्त करते हैं। वह मृत्यु और जीवन-मृत्यु की पीड़ा से मुक्त हो जाते हैं। (श्रीमद्भगवद्गीता 8:15)

आब्रह्मभुवनात्, लोकाः, पुनरावर्तिनः, अर्जुन,
माम्, उपेत्य, तु, कौन्तेय, पुनर्जन्म, न, विद्यते||

अर्थात

ब्रह्मांड में प्रत्येक जीव पुनरावर्ती है केवल उस व्यक्ति को छोड़कर जो मुझमें समाहित हो जाता है । (श्रीमद्भगवद्गीता 8:16)

सहस्त्रयुगवर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणों विदु : ।
रात्रि युगंसहस्त्रांतां तेडहोरात्रविदो जना: ।।

अर्थात

जिन्हें ब्रह्मांड के नियम का ज्ञान है वो यह जानते हैं कि ब्रह्मा का एक दिन एक हजार युग है एवं ब्रह्मा का एक रात हज़ारों युगों की रात है। (श्रीमद्भगवद्गीता 8:17)

अव्यक्ताद्व्यक्तय: सर्वा प्रभवत्यहरागमें ।
रात्र्यागमे प्रलीयंते तत्रैवात्यक्तसंज्ञके ।।

अर्थात

जब ब्रह्मा के दिन का उदय होता है, तो समस्त चराचर उसी सूक्ष्म शरीर से प्रकट होते हैं तथा जब ब्रह्मा की रात्रि आती है तो यह सभी चराचर इसी अव्यक्त में पुन: लीन हो जाते हैं। (श्रीमद्भगवद्गीता 8:18)

भूतग्राम: स एवायं भूत भूत्वा प्रलीयते ।
रात्र्यागमेअवश: पार्थ प्रभवत्यहरागमें ।

अर्थात

इस प्राणी समुदाय का सृजन और विनाश होता है, बारंबर आने वाले ब्रह्मा के दिन एवं रात्रि में।

(श्रीमद्भगवद्गीता 8:19)

प्रकट होने, अभिव्यक्ति एवं गतिविधि की अवधि को मतावन्तर के नाम से जाना जाता है तथा अनुपस्थिति, विघटन एवं निष्क्रियता को प्रलय कहा जाता है । मनवंतरा एवं प्रलय को क्रमश: ब्रह्मा के दिन एवं रात्रि के नाम से जाना जाता है ।

परस्तस्मातु भावोअन्योअव्यक्तोअव्यक्तात्सनातन:।
य स सर्वेषु भूतेषु नश्यरसु न विनश्यति ।।

अर्थात

इसके अतिरिक्त एक अन्य अव्यय प्रकृति है, जो शाश्वत है और इस व्यक्त तथा अव्यक्त पदार्थ से परे है।यह परा (श्रेष्ठ) और कभी न नाश होने वाली है।जब इस संसार का सब कुछ लय हो जाता है, तब भी उसका नाश नहीं होता। (श्रीमद्भगवद्गीता 8:20)

अव्यक्तोअक्षर इत्युक्तस्तमाहु: परमां गतिम् ।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ।।

अर्थात

जिसे वेदान्ती अप्रकट और अविनाशी बताते हैं, जो परम गन्तव्य है, जिसे प्राप्त कर लेने पर कोई वापस नहीं आता, वही मेरा परमधाम है। (श्रीमद्भगवद्गीता 8:21)

पुरूष: स पर: पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया ।
यस्यान्त: स्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम् ।।

अर्थात

यह सर्वोच्च शक्ति जो सभी जीवों में व्याप्त है, सभी का स्वयं सत्य है को अविभाज्य प्रेम के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। (श्रीमद्भगवद्गीता 8:22)

सही मायने में कई हजारों में केवल एक भगवान को चाहता है। और सही मायने में इनमें से भी कई हजारों में से केवल एक भगवान को प्राप्त करता है। इन बाधाओं के बावजूद, भगवान को पाने का यह मार्ग सभी प्राणियों को पूर्णता की इस स्थिति में पहुचने के लिए भाग्य में निर्धारित समय एवं काल में प्राप्त करते हैं। लोग पूजा करने के लिए चाहे जिस भी देवता को चुने, वो आपको अंततः ईश्वर तक पहुँचने के लिए चरण दर चरण यात्रा पूरी कर अपने गंतव्य तक पहुंचा देता है।

न मे विदुः सुरगुणा प्रभवं न महर्षय।

अहमादिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः ॥

अर्थात

न ही देवता और न ही ऋषि मेरे स्रोत को जानते हैं, क्योंकि मैं ही वो स्रोत हूँ जिसमें देवता और ऋषि उत्पन्न हुए। (श्रीमद्भगवद्गीता 10:2)

यो मामजमनादि च वेत्ति लोकमहेश्वरम्।
असम्मूढः स मर्त्येषु सर्वपापै प्रमुच्यते॥

अर्थात

जो मुझे अजन्मा एवं अनादि वाला समस्त सृजन के ईश्वर के रूप में जानता है, सत्य जानकर स्वयं को अज्ञानता एवं समस्त बुराईयों से मुक्त कर लेता है। (श्रीमद्भगवद्गीता 10:3)

ईश्वर अनन्त है एवं देवता और ऋषि भी उसके स्रोत को नहीं जानते हैं, क्योंकि वह सभी लोगों का उपत्तिकर्ता है। ईश्वर अजन्मा एवं अनादि है। बच्चे बार-बार अपने माता-पिता से उनके जन्म एवं बचपन के बारे में पूछते है, लेकिन वे पूरी तरह से कभी उत्तर को समझ नहीं पाते हैं। इसी प्रकार, परमेश्वर की महिमा को किसी के भी द्वारा मात्र आंशिक रूप से ही जाना जा सकता है।

ईश्वर समय, मृत्यु और अमरता सजीव एवं निर्जीव है। ईश्वर की दिव्य अभिव्यक्ति का कोई अंत नहीं है क्योंकि ईश्वर सर्वव्यापी है, एवं उसके बाहर किसी का अस्तित्व नहीं है।

ज्ञानं तेहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याक्यशेषतः ।

यज्ज्ञात्वा नेह भूयोअन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते॥

अर्थात

मैं आपको ज्ञान और विवेक दोनों दूंगा। जब इन दोनों का एहसास होगा तो कुछ और जानने के लिए नहीं रह जाएगा। (श्रीमद्भगवद्गीता 7: 2)

ईश्वर की क्षण ज्योति प्राप्त करने के लिए, हमें ज्ञान और विवेक दोनों की आवश्यकता होती है। दोनों में फर्क सिर्फ इतना है कि हमें इंद्रियों और मन - ग्रहण क्षमता और सोच के माध्यम से ज्ञान प्राप्त होता है और सीधे अनुभव और आत्मज्ञान के माध्यम से विवेक की प्राप्ति होता है। ज्ञान सैद्धांतिक रूप से ईश्वर को जानता है। विवेक ईश्वर का 'एहसास' कराता है और हमारे जीने के प्रत्येक क्षण में इस ज्ञान का प्रयोग करने के काबिल बनाता है।

प्रबुद्ध व्यक्ति इस 'सत्य के लिए स्वयं को पूर्ण रूप से समर्पित कर देते हैं। वो सब जो ईश्वर का एहसास कर उसके 'परमधाम' को चले जाते हैं , वे कभी पृथक नहीं होते और पुन: जन्म नहीं लेते । वर्षों के निरंतर प्रयासों से ही यह उद्देश्य से यह प्राप्त होते हैं। अगर आत्मा अपनी मरणशीलता की यात्रा को समाप्त करती है और पुन: ब्रह्म में समाहित हो जाती है ।

एक बार गांधी जी ने अपने सहकर्मी को चेतावनी थी, जो उनके पश्चात् उनके आदर्शों को प्रचार करने के लिए उनके नाम से समाज का गठन करने वाला था - गांधीवाद जैसी कोई चीज़ नहीं है, और मैं अपने पीछे कोई संप्रदाय नहीं छोड़कर जाना चाहता। मैने किसी भी नए सिद्धांत या मत को उत्पन्न करने का दावा नहीं किया है। मैने केवल प्रयास किया है, अपने तरीके से, मेरे दैनिक जीवन और समस्याओं में इस शाश्वत सत्य का उपयोग करने के जो मत, विचार मैने बनाए हैं और जिन नतीज़ों पर पहुँचा हूँ, वह किसी भी प्रकार से अंतिम नहीं है । अगर मुझे इससे बेहतर रास्ता मिलता है तो कल मैं इन्हें बदल सकता हूँ। मेरे पास विश्व को सीखाने के लिए नया कुछ भी नहीं है। सत्य और अंहिसा पर्वतों के समान ही पुराना है। वो सब कुछ जो मैने किया है, व्यापक पैमाने पर एवं जितना श्रेष्ठ मैं कर सकता था, दोनों प्रयोग करने का प्रयास किया है। ऐसा करने में मैंने कुछ गलतियां की हैं, और अपनी गलतियों से सीखा हूँ ।

मेरे एक समान अनुभव ने मुझे आश्वस्त किया कि सत्य के अतिरिक्त कोई ईश्वर नहीं। और यदि इन अध्यायों का प्रत्येक पेज पाठकों को प्रेरित नहीं करता है तो इसका सिर्फ ये अर्थ है कि सत्य की अंहिसा के रूप में पहचान नहीं हुई है। मैं समझूंगा मेरे द्वारा इस अध्याय के लिखने में किया गया समस्त प्रयास विफल हो गया है । यद्यपि इस संबंध में मेरी ओर से किया गए समस्त प्रयास असफल सिद्ध हो सकते है पर पाठकों को विदित है कि संवाहक सैद्धांतिक रूप से गलत नहीं होता । हालांकि, अहिंसा के प्रति किया गया मेरा गंभीर प्रयास हो सकता है, पर ये अभी भी अपरिपक्व या अपर्याप्त है। छोटी क्षणिक झलक, ताकि मैं उस अवर्णनीय प्रकाश सत्य के विचार को, जो मैं प्राप्त करने में सक्षम हुआ हूँ, आप तक शायद ही पहुँचा सकूँ, जो हमारे द्वारा रोज अपनी आंखों से दिखने वाले सूर्य से लाख गुणा ज्यादा प्रकाशवान है । वास्तव में, जो भी मैं समझ पाया हूँ उस प्रकाशस्रोत की मात्र एक छोटी किरण है । लेकिन मैं यह आश्वासन के साथ कह सकता हूँ मेरे समस्त प्रयोगों के परिणामस्वरूप, सत्य के प्रति परिपक्व दृष्टि ही केवल अहिंसा के संपूर्ण एहसास का पालन कर सकती है ।

सार्वभौमिक और सर्वव्यापी आत्मा रूपी सत्य का सामना करने के लिए व्यक्ति को स्वयं के समान ही उसके सृजन की तुच्छता से प्यार करने में सक्षम होना होगा और वह व्यक्ति जो यह आकांक्षा रखता है इसके पश्चात् जीवन के किसी भी क्षेत्र में प्रयास नहीं कर सकता। इसी कारण सत्य के प्रति मेरा समर्पण मुझे राजनीति के क्षेत्र में ले आया और मैं थोड़ी भी हिचकिचाहट के बिना पूरी विनम्रता से यह कह सकता हूँ कि वे जो कहते हैं कि धर्म का राजनीति में कोई काम नहीं है वे वास्तव में नहीं जानते कि धर्म का क्या अर्थ है ।

बिना आत्म-शुद्धि के यह संभव नहीं है कि प्रत्येक सृजित पदार्थ की पहचान की जा सके ; बिना आत्म-शुद्धि के अहिंसा के नियम का अनुसरण करना एक दिवास्वप्न के सामान है ; ईश्वर का साक्षात्कार उस व्यक्ति द्वारा कभी नहीं किया जा सकता जिसका ह्रदय विशुद्ध नहीं है। अत: आत्मशुद्धि का अर्थ संपूर्ण जीवन में विशुद्धता से होना चाहिए । एवं विशुद्धता अत्यंत संक्रामक होती अत; एक की विशुद्धता आस-पास के लोगों को विशुद्धता की ओर अग्रसर करती है ।
लेकिन आत्म विशुद्धता का मार्ग कठिन एवं लंबा है । पूर्ण विशुद्धता प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को पूर्ण रूप से 'मानसा, वाचा और कर्मणा' अर्थात चिंतन, वक्तृता एवं अनुयोजन से पूर्णत: अभिलाषा

मुक्त होना होगा ; प्रेम एवं घृणा, आसक्ति एवं जुगुप्सा की नकारात्मक धाराओं से ऊपर उठाना होगा । मैं जानता हूँ कि अब तक निरंतर निर्विराम प्रयास करने के बावजूद यह त्रिशुद्धता मुझमें नहीं है। यही कारण है कि विश्व की प्रशंसा मुझे आगे बढ़ाने में असफल रही है, वास्तव में यह मुझे बहुत चुभता है ।

हथियारों के बल द्वारा दुनिया पर भौतिक विजय प्राप्त करने की तुलना में सूक्ष्म भावनाओं पर विजय प्राप्त करना बहुत कठिन है। अपने भारत में वापसी के बाद से ही, मैं अपने अंदर छिपी निष्क्रिय अभिलाषाओं का अनुभव करता रहा हूं। उनकी पहचान मुझे अपमानित करती रही है, किंतु हरा नहीं पाई । अनुभव एवं प्रयोगों ने मुझे निरंतर शक्ति और परमानंद प्रदान किया है । लेकिन मैं ये जानता हूँ मेरे समक्ष एक कठिन मार्ग है। मुझे स्वयं को नगण्य तक कम करना चाहिए । एक मनुष्य बहुत लंबे समय तक स्वयं को मुक्त अवस्था में नहीं रख सकता, उसे अपने साथी जीवों को मध्य स्वयं को लाना होगा, उसके लिए कोई मुक्ति नहीं है । अहिंसा ही मानव की सूझ की सीमा है ।

संस्कृत की सुक्ति है 'आत्मनो मोक्षार्थम जगत हिताय च' जिसका अर्थ है समाज की सेवा करके ही हम आत्म बोध प्राप्त करने की दिशा में खुद को शुद्ध कर सकते ही और अपने आसपास रहने की स्थिति में भी सुधार ला सकते हैं । संस्कृत की एक और सूक्ति है 'मनयेवं कारणं मनुशयानां बंध मोक्षयो' जिसका अर्थ है यह मन ही है जो हमें बांधे रखता है या मुक्त रखता है।

लेकिन गहरी जमी प्रवृत्तियां यथा आलस्य, लापरवाही, लोभ, घृणा, दुष्टता, असत्यपरायणता एवं भय इतनी जल्दी एवं आसानी से खत्म नहीं होतीं। इनको दूसरों लोगों में खत्म करने के पूर्व, हमें दूसरों के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करते हुए स्वयं में से इसे खत्म करने की आवश्यकता है । हमें सकारात्मक प्रवृत्तियों यथा विश्वास, प्रेम, निर्भयता, करूणा, अपरिग्रह को उत्पन्न करने की आवश्यकता है, ताकि नाकारात्मक प्रभावों को खत्म किया जा सके। इसी मार्ग को अपनाकर गांधीजी ने अपनी आत्मकथा को 'सत्य के साथ मेरे प्रयोग' नाम दिया; आइए हम अपने जीवन को भी सत्य के साथ प्रयोग करने वाला बनाए ।

यत्र योगेश्वर कृष्णों यत्र पार्थो धनुर्धर ।
तत्र श्री विजयो मूर्तिध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ।।

अर्थात

जहां योगेश्वर कृष्ण, सत्य, चेतन और नियंत्रण वाला धुर्नधर अर्जुन है वही सत्य; विजय ऐश्वर्य और सुख है। (श्रीमद्भगवद्गीता 18:78)

-*-

सारांश

भाग 1: भौतिक सफलता

1.**जीवन का संघर्ष:** कृष्ण ने अर्जुन को भगवद्गीता का पाठ सुनाने के लिए निर्जन वन ,अथवा आश्रम या मंदिर के बजाय पृष्ठभूमि के रूप में युद्ध भूमि को चुना । यह ऐसी पुस्तक नहीं है जिसे बक्से में बंद करके ताला लगाकर रखा जाना है या पूजा करनी है, और केवल अपने सक्रिय जीवन से सेवानिवृत्त के पश्चात् ही खोलना है । यह जीवन की नियमावली है जिसे हम अपने जीवन में किसी भी समय उपयोग कर सकते हैं। यह हमें जीवन त्यागने और समस्याओं से दूर भागने को नहीं कहती है ,बल्कि यह हमें विश्वास ,प्रेम और निर्भयता के साथ जीवन के युद्ध में आगे बढ़ते रहने का मार्गदर्शन करती है ।

2. विचारों की रचनात्मक शक्ति: केवल मानव ही सोच और कार्य कर सकता है जबकि अन्य दूसरे जीव स्वाभाविक प्रवृत्ति द्वारा चलायमान होते हैं । जहां सकारात्मक सोच हमें सफलता एवं खुशियां प्रदान करती है ,वहीं नकारात्मक विचार दुर्भाग्य लेकर आतेन हैं। अत :यह अनिवार्य है कि हम सभी नकारात्मक प्रभावित करने वाले विचारों के प्रति अपने मन के द्वार बंद कर लें । हमें अपने मनसा ,वाचा और कर्मणा पर नियंत्रण करने की आवश्यकता है ।

3. इच्छा – सभी उपलब्धियों का प्रारंभिक बिंदु: केवल विचार नहीं, अपितु तीव्र भावनाएं भी हमें कर्म की ओर प्रेरित करती हैं । अत: हमें अपने अपेक्षित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए ज्वलंत इच्छा की आवश्यकता है । जीवन के युद्ध में जीतना, परीक्षाओं में अव्वल आना, व्यावसायिक साम्राज्य प्रारम्भ करना इत्यादि इसी प्रकार की इच्छाओं के उदाहरण हैं। इच्छा धर्मसंगत और सभी के कल्याण के लिए होना चाहिए ,ना कि दूसरों की कीमत पर केवल अपने लाभ के लिए।

4. ईश्वर और स्वयं में विश्वास :विश्वास सभी चमत्कारों और सभी रहस्यों का आधार है। जिसकी किसी भी वैज्ञानिक तर्कशक्ति द्वारा व्याख्या नहीं की जा सकती है। हमें ,ब्रह्माण्ड के अदृश्य ताकतों को प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम विश्वास की छलांग लगानी चाहिए ।

5. ज्ञान का विवेकपूर्ण व्यवहारिक अनुप्रयोग : विवेक समस्याओं के कारण की पहचान करने और उनका हल ढूंढने में हमारी सहायता करता है । बिल्कुल वैसे ही जैसे शहद का धर्म मीठा होना है ,निष्कलंक मानवता ही हमारा धर्म है। वृहद् स्वरूप में' ,धर्म' एक सार्वभौमिक नियम है ,जो ब्रह्माण्ड में प्रदार्थों का अनिवार्य क्रम तथा सद्भाव बनाए रखता है। 'कर्म' महान समायोजक है जिनका उद्देश्य संतुलन बनाए रखना है ,ताकि हम धर्म के अनुसार जिएं ,दूसरे लोगों की कीमत पर अपने स्वार्थ हित को बढावा न दें ,अपितु जीवन में कुछ योगदान देते हुए एवं सभी के कल्याण पर विचार करें ।

6. कल्पना शक्ति : एक ओर जहां विवेक केवल परिचित ज्ञान तक ही सीमित है, कल्पना अज्ञात संसार का क्षेत्र है । यह वह क्षेत्र है जहां हम विचारों ,प्रेरणा और नवोन्मेषिताओं ,जैसे कि पहिये, फोन और इंटरनेट जिसने मानव जीवन को बदलकर रख दिया है ,को प्रेरित करते हैं ।

7. योजना बनाना : यह एक प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत इच्छाओं को समय-सारणी, संसाधनों का आबंटन जैसे धन और मानव-शक्ति आदि, के उपयोग से रचनात्मक अनुयोजन में परिवर्तित करना है ।
'निर्णय 'पर विषय व्याख्या करता है कि सफल व्यक्तियों की त्वरित निर्णय लेने तथा अपने निर्णयों को यदि एवं जब भी आवश्यकता हो उनको बदलने की आदत होती है ।

वे लोग जो असफल होते है उनमें इसके विपरीत धीमा निर्णय लेने तथा इस निर्णयों को बहुत तेजी बदलने तथा प्राय :बदलने की आदत होती है।

8. लौकिक मन एवं सहयोग शक्ति : जब हमारी व्यक्तिगत शक्ति, इच्छाओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त नहीं होती है, तो हमें और अधिक लोगों का सहयोग लेना होगा तथा ऐसे स्थिति में लौकिक मन का सिद्धांत उपयोगी होता है । इस सिद्धांत के अनुसार जब दो मन एक साथ कार्य करते हैं तो एक अदृश्य, अमूर्त शक्ति, जिसकी तृतीय मन के रूप में तुलना की जा सकती है, का निर्माण करते हैं। अत: दो या अधिक एक जैसे मन वाले मनुष्यों की संयुक्त शक्ति, उसकी स्वयं की शक्तियों के कुल योग से कई गुणा ज्यादा होता है।

9. नेतृत्व क्षमता, लोगों को लक्ष्य के प्रति प्रेरित एवं प्रोत्साहित करना : लौकिक मन टीम के गठन से पूर्व या बाद में ,हमें लोगों को एकत्रित करने तथा लक्ष्य की प्राप्ति के लिए टीम का सफलतापूर्वक नेतृत्व करने के लिए 'नेतृत्व-गुणों' को विकासित करने की आवश्यकता है। नेतृत्वकर्ता को सफलता या असफलता दिलाने वाले मुख्य कारणों की व्याख्या इस अध्याय में की गई है।

10. अवचेतन मन- हमारे सीमित मन एवं ब्रह्मांड के अनंत लौकिक मन को जोड़ने वाली कड़ी:
जब चेतन मन बाहरी दुनिया के साथ सूचना का आदान प्रदान करता है, तब अवचेतन मन आंतरिक दुनिया में विचरण करता है और यह आध्यात्मिक प्रकृति का है। यह हमारे सीमित मन और अनंत लौकिक मन के बीच जोड़ने वाली कड़ी है। इस कड़ी के माध्यम से हम भगवान की शक्तियों तक पहुँच प्राप्त कर सकते हैं।

11. निर्भयता: मृत्यु का भय और असफलता भय हमें निष्क्रियता या हार स्वीकार करने की ओर अग्रसर करता है तथा गरीबी का भय हमें शार्टकट तरीके अपनाने और गलत साधनों की ओर हमें अग्रसर करता है। इन समस्त भय का एक ही इलाज़ है कि परिणाम की आसक्ति से मुक्त होकर तथा भगवान में दृढ़ विश्वास रखकर कर्म किया जाए।

12. दृढ़ता -असफलताओं का सामना करने के लिए आवश्यक है: सफलता प्रथम प्रयास में प्राप्त नहीं की जा सकती है और हमें अपनी ज्वलंत इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए एक निर्दिष्ट एवं लिखित उद्देश्य को अपने लौकिक मन की टीम के साथ मैत्री संगठन के माध्यम से दृढ़ रहने की आवश्यकता है ,एक निर्दिष्ट योजना नियमित क्रिया अभिव्यक्त करती है एवं सभी नकारात्मक प्रभावों के विरूद्ध सख्ती से मन के दरवाजों को बंद कर रखती है।

भाग 2: आध्यात्मिक सफलता

13**. उद्भव एवं विकास :** - आपके पुराने व्यक्तित्व से नए व्यक्तित्व में रूपांतर। जब आपने इस पुस्तक की अवधारणाओं को व्यवहार में लाना शुरू कर दिया होगा तो आपने अपने आसपास के लोगों के साथ होने वाली बातचीत में आपने अपने बदलाव को महसूस करना शुरू कर दिया होगा। आपको यह एहसास होगा कि वे लोग आपके इस बदलाव को पसन्द नहीं कर रहें हैं - चाहे आपका पूर्व व्यवहार उनके लिए पूरी तरह मुसीबते क्यों ना करता रहा हो ! इसका कारण है कि वे एक खास तरीके से आप के साथ बातचीत करने के आदी थे। जब बातचीत का परिचित तरीका बाधित होता है तो ऐसी प्रतिक्रिया सामने आती है। आपको इन बदलावों के लिए तैयार रहना चाहिए।

14. माया -भ्रम की देवी या तिलिस्म : यह ईश्वर का रचनात्मक भ्रम या माया है जो विभिन्न स्वरूपों एवं नामों की शानदार दुनिया का कारण है। दुनिया का सृजन उससे होता है और चरणबद्ध विकास के चक्र की पूर्णता के पश्चात् पुन :उसी अनंत सागर में विलय को प्राप्त हो जाता है।

हमारे जीवन का परम लक्ष्य आत्म बोध है। हमें इसी की ओर बढ़ना है तथा सत्व , राजस और तामस के तीनों गुणों से पार पाने के लिए ज्ञान योग) बुद्धि मार्ग , (ध्यान योग) ध्यान का मार्ग , (भक्ति योग) प्रेम का मार्ग (तथा कर्म योग) कर्म का मार्ग (का अनवरत प्रयास करना होता है।

15. ध्यान योग (ध्यान का मार्ग) : जीवन जैसा है उसे वैसा देखते हुए एक व्यक्ति पूर्णत :अविभाज्य होता है , हमें अपने व्यक्तिगत लाभ , शक्ति , प्रतिष्ठा या अंहकार की सभी आसक्तियों से स्वयं को बचाना होगा , यह सब केवल मखोटे हैं जिन्हें निकालकर हम फैंकना भूल गए हैं। इस मुखौटे के पीछे हमारे वास्तविक मूल , पूर्ण निर्भयता , बिना शर्त प्रेम और स्थायी सुख या समस्त परमानंद छुपे हैं। इस स्थिति का ध्यान में अनुभव किया जा सकता है।

16. भक्ति योग (प्रेम का मार्ग) : जैसा कि भगवान सभी जीवों में आत्मा के रूप में उपस्थित है। भगवान को आप, पालण-पोषण करने वाले पिता, प्रेम करने वाली माता, गुरू, परमप्रिय पति या पत्नी, सहानुभूतिशील मित्र, एक ग्राहक यहां तक कि एक नटखट बच्चे के रूप में भी पा सकते हैं। अत: भक्ति योग हमें अपने प्रेम के क्षेत्र को परिवार से समुदाय तथा राष्ट्र एवं अंतिम रूप से सार्वभौमिक प्रेम के रूप में विस्तृत करने की शिक्षा प्रदान करता है। मानव सेवा ही ईश्वर सेवा है।

17. कर्म योग (कर्म का मार्ग) : प्रत्येक जीव को ईश्वर की अद्भुद सृष्टि योजना में अपनी भूमिका निभानी है , तथा इस उत्तरदायित्व से बचने का कोई रास्ता नहीं है। लेकिन , कर्म के नियमानुसार , मनुष्य जो बोता है वही काटता है। यद्यपि हम सात्विक , राजसिक और तामसिक प्रकृति द्वारा कार्य करने लिए बाध्य है ; 'उसने ' हमें आसक्तियों में बांध दिया है तथा हम मोक्ष के मार्ग से भटक जाते हैं। अत :कर्म योग हमें , ईश्वर की सेवा के एक साधन के रूप में , आसक्ति से मुक्त कर कर्म करना सिखाता है।

18. मृत्यु से मृत्युंजय तक : मरने की कला जीने की कला का ही एक परिणाम है। लगभग सभी मनुष्यों को मर जाने का भय है तथा अमरता एक जबरदस्त महत्वांकाक्षा है। अमरता का अर्थ भौतिक शरीर के साथ सर्वदा जीवित रहना नहीं है। भौतिक शरीर नाशवान है ; लेकिन हमें अंधकार से प्रकाश , असत्य से सत्य तथा मृत्यु से अमरता की ओर बढ़ना चाहिए।

एक आत्मबोध वाले व्यक्ति के पास अंतत :जर्जर रूप में उसके कर्म अवशेष) कार्मिक अवशिष्ट (रह जाते हैं। कार्मिक परिणामों की तुलना कुम्हार के चाक द्वारा बनाए गए बर्तनों के रूप में की जा सकती है। जब तक पहिया घूमता है , कर्मरूपी बर्तन का सृजन होता रहता है तथा जब वह नए बर्तन बनाना बंद कर देता है , तब वह चाक का पहिया धीरे-धीरे रूक जाता है। आत्मबोध के पश्चात् भी व्यक्ति तब तक अपने शरीर से जुड़ा रहता है जब तक वह अपने सभी पूर्व कर्मो से मुक्त न हो जाए , और इसके पश्चात जब वह शरीर छोड़ता है , तो वह पुन :जन्म नहीं लेगा।

लेकिन जब तक हम अपने भौतिक शरीर के साथ जीते हैं , इस पुस्तक के अंतिम अध्याय के साथ हमारा सीखना खत्म नहीं हो जाता , हमें हमेशा जीवन का संघर्ष ; हम जो चाहते हैं कैसे प्राप्त करें ; अनवरत कैसे रहें आदि जैसे इसी प्रकार के अध्यायों को सर्वदा संदर्भ में रखने की आवश्यकता होगी।

-*-

उपसंहार

गांधीजी ने सात घातक पाप कर्मों को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया है:

1. चरित्र के बिना शिक्षा- स्कूलों एवं कॉलेजों द्वारा विद्यार्थियों को आत्म-विकास एवं सहकर्मियों के साथ सहयोग करने की शिक्षा के स्थान पर केवल रैंक और मैडल लाने हेतु तैयार करना हैं।

2. मानवता के बिना विज्ञान- जहां विज्ञान केवल बाह्य दुनिया के बारे में सिखाता है और इसका जवाब नही देता कि आत्म-चेतना के साथ किस प्रकार समन्वय किया जाए।

3. नैतिकता के बिना व्यवसाय - सभी संबंधित पक्षों के लिए गोल्डन नियम या जीत की स्थिति के सम्बन्ध में प्रबुद्ध व्यवसायियों में नैतिकता और निष्पक्षता की भावना मार्गदर्शक कारक के रूप में होनी चाहिए ।

4. बिना कार्य किये धन: बिना कुछ किये धन प्राप्त करने, रातोरात धनवान बनाने की स्कीमें, लोगों के निवेशों एवं व्यापारिक गतिविधियों में हेराफरी करके बिना लाभ रिटर्न।

5. बिना दर्शन के राजनीति- जहां नेता सामूहिक सद्भाव के प्रति लोगों को प्रेरित करने के बजाय अपने स्वार्थ हित के लिए 'फूट डालो और शासन करो' की नीति अपनाता है। एक सच्चे नेता को ऐसे राजनेता के समान होना चाहिए जो लोगों के अल्पकालिक लाभों और उनकी कमजोरियों का शोषण करने के स्थान पर लोगों का दीर्घकालिक लाभ देखता है।

6. सच्चे हदृय के बिना अराधना- जहां लोग अपने साथियों की पीड़ा को नजरअंदाज कर मूर्ति पूजा और रीतियों में लिप्त रहते हैं । एक व्यक्ति सच्चे मन से भगवान को तभी देख सकता है जब ब्रह्माण्ड के सबसे निकृष्ट जीव से वह प्यार और उसकी सेवा करता है।

7. विवेक के बिना सुख: विवेक के बिना सुख की प्रमुख लागत को समय और पैसे के रूप में उच्च माना जा सकता है, परन्तु प्रतिष्ठा के मामले में, और भोग विलास में लिप्त अल्पावधि में सिर्फ खुद को कृतार्थ करना वाले लोगों द्वारा अन्य व्यक्तियों के दिल एवं मन में पीड़ा पहुँचाने के मामले में यह लागत कही अधिक है ।

ज्यादातर लोग मानते हैं कि 'भौतिकवाद' ऐसी संस्कृति को संदर्भित करता है जो मुख्य रूप से धन अधिग्रहण, अधिपत्य, भौतिक वस्तुओं और सर्वव्यापी सफलता की ओर प्रेरित करता है। परन्तु क्या वास्तव में भौतिकवाद का यह सही मतलब है कि भौतिक जीवन से ऊपर या उससे परे कुछ भी नही है, प्रत्येक वस्तु अनिवार्य रूप से भौतिक एवं जैविक है और आत्मा और भ्रम का विचार अज्ञानी भ्रम है ।

भौतिकवाद के उलट आध्यात्मवाद है, लेकिन यह भी एक अन्य ऐसा शब्द है जिसका दुरूपयोग होता आया है, और वास्तव में भौतिकवाद से भी ज्यादा। आध्यात्मवाद की कल्पना करने पर आधुनिक मन में भिक्षा मांगते साधु या आश्रम में रहने वाले भगवा धारण करने वाले लोगों तथा जीने के लिए घटिया तरकीबें करने वाले लोगों के चित्र मस्तिष्क में आ सकती है ।

वास्तव में, आध्यात्मवाद का तात्पर्य यह विश्वास है कि आधारभूत सत्य या वास्तवकिता शारीरिक तथा भौतिक नहीं है अपितु विशुद्ध आध्यात्मिक एवं 'उसकी' उत्कृष्ट सत्ता है तथा यही समस्त प्रदार्थों और सभी जीवों का स्रोत एवं अंतत: नियति है। यह द्रव्य एवं भौतिक अवधारणा को अस्वीकार्य नहीं करता, अपितु इनको अस्थाई प्रकृति वाला तथा इने आध्यात्मिक अनुभव एवं उन्नति के साधन के रूप में उपयोग किए जाने वाला मानता है।

यदि अर्जुन रणक्षेत्र छोड़कर भाग गया होता, तो वह तथाकथित 'भगवा साधु' के रूप में जाना जाता। बुराई से युद्ध और भले लोगों की सुरक्षा के कर्तव्य का त्याग का अर्थ होगा कि चीजों के सृजन की योजना की

अवज्ञा करना, जहां प्रत्येक को अपनी भूमिका निभानी है। यदि वह बिना भगवद्गीता सुने बिना युद्ध हेतु तत्पर हो गया होता, तो उसे 'भौतिकवादी' कहा जा सकता था।

भगवद्गीता की शिक्षा का सार है कि युद्ध के कार्मिक प्रभावों से उलझे बिना ही एक क्षत्रिय की भांति अपने कर्तव्य को निष्पादित किया जाए जैसे अर्जुन ने किया। गांधीजी के जीवन का सौंदर्य यही है कि उन्होंने बिना अपनी प्रसिद्धि एवं स्वार्थपूर्ण इच्छाओं के लिए शक्ति का उपयोग किये बिना ही राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया।

सदियों तक, पंडितों ने अपने सात्विक अहंकार में रजसिक लोगों का मजाक उड़ाया तथा गलत व्याख्या करते हुए इच्छाहीन स्थिति को ही प्राप्त करने योग्य इष्टतम स्थिति बताया। मध्यकाल के दौरान, समुद्री यात्राओं एवं वैज्ञानिक अन्वेषणों, वाणिज्य तथा धन-अर्जन, कमजोर की रक्षा के लिए शक्ति प्राप्त करना इत्यादि सभी की अवहेलना की गई। धीरे-धीरे समाज तामसिक अहंकार, आलस्य एवं दासता में घिर गया।

इच्छा अग्नि के समान है, जीवन की उर्जा है और इसका रचनात्मक प्रयोजनों जैसे स्वतंत्रता प्राप्त करने, औषिधयों का अन्वेषण करने, प्रौद्योगिकी विकास, धन-अर्जन तथा नौकरी एवं इसी प्रकार के अन्य प्रयोजन सृजन के सभी रहस्यों का पता लगाने हेतु उपयोग किया जा सकता है, तथा विनाशकारी उद्देश्यों या स्वार्थ लाभों, इच्छाओं के लिए इसका उपयोग व्यक्ति को स्वयं द्वारा सृजित पतन की ओर अग्रसर कर सकता है क्योंकि अंतत: धर्म की विजय होती है एवं 'सत्यमेव जयते'।

हमारा शरीर एवं मन मोक्ष प्राप्त करने, धर्म का अनुसरण करने, अर्थ अर्जन, काम पूर्ति एवं अन्य जीवों की सेवा करने का साधन है। अत: हमें भौतिक स्रोतों के यथोचित उपयोग एवं अपने आध्यात्मिक विकास, दोनों में ही सफलता, प्राप्त करने की आवश्यकता है।

-*-

दैनिक जीवन में धर्म का पालन

गांधीजी का परामर्श था "जो परिवर्तन आप इस दुनिया में देखना चाहते हैं, आप उसका हिस्सा बने।" कुछ लोग कह सकते हैं कि हमारे अकेले के प्रयास कोई परिणाम नहीं दे सकते, उनके अनुसार उनके प्रयास सागर में एक बूंद के बराबर भी नहीं होंगे। परंतु एक सागर भी तो बूंद-बूंद इकट्ठा होकर ही बना है। क्योंकि हमारी भलाई समाज की भलाई का ही एक अभिन्न अंग है, अत: हमें निम्नलिखित सिद्धांतों का पालन करना चाहिए :

1. मैं, अपनी प्रेम की परिधि को अपने व्यक्तिगत स्तर से समाजिक स्तर पर और फिर सार्वभौमिक स्तर पर विस्तृत करूंगा।

2. मैं, पारस्परिकता के स्वर्णिम नियम का पालन करूंगा और दूसरों से भी उसी प्रकार का व्यवहार करूंगा जैसाकि मैं अपने प्रति व्यवहार करने की अपेक्षा करता हूं। दूसरों के साथ लेनदेन करते समय मैं पस्पर-लाभ की अवधारणा का पालन करूँगा।

3. मैं, प्रत्येक क्षेत्र में, एक शिक्षक के रूप में ज्ञान के प्रसार के लिए अथवा एक लीडर के रूप में सुशासन के लिए अथवा एक उद्यमी के रूप में देश के संपदा निर्माण में, एक कामगार / कर्मचारी के रूप में अपनी क्षमताओं का शत-प्रतिशत उपयोग करते हुए राष्ट्र निर्माण में अपनी सेवाओं को अर्पित करूंगा।

4. मैं, खुले में शौच, पेशाब करने, थूकने, सार्वजनिक स्थलों पर कूड़ा फेंकने एवं ऐसे किसी क्रियाकलापों में संलग्न नहीं रहूंगा, जिससे मेरे साथी नागरिकों को परेशानी हो और बीमारियों के फैलने का खतरा हो। मैं, पेट्रोल, प्लास्टिक आदि के उपयोग को कम करके वृक्षारोपण और पेड़- पौधों के पोषण द्वारा पर्यावरण के संरक्षण के लिए योगदान दूंगा।

5. मैं, ड्राइविंग लाइसेंस के नियमों, सड़क सुरक्षा नियमों, क्यू सिस्टम आदि का पालन करूंगा।

6. मैं, परीक्षा में या नौकरियों के लिए भर्ती में नकल, रिश्वत, सिफारिशों आदि का सहारा नहीं लूंगा।

7. मैं, सरकारी सेवाओं, अनुबंध आदि प्राप्त करने के लिए घूस देने या अन्य अनैतिक तरीकों का सहारा नहीं लूँगा।

8. मैं, अपनी जरूरतों को कम करने और एक सरल जीवन जीने का प्रयास करूंगा।

9. मैं, कैशलेस अर्थव्यवस्था में अपना योगदान दूंगा, जिससे काले धन के निर्माण और आतंकवादियों की नकली मुद्रा के प्रभाव को कम किया जा सके। मैं, नकद खरीद को कम करके डेबिट / क्रेडिट कार्ड एवं चेक आदि का उपयोग बढ़ाऊंगा और खरीदे जाने वाली वस्तुओं के बिलों की मांग करूंगा।

10. मैं, स्वेच्छा से अपनी आय घोषित करूंगा और उस पर देय करों का भुगतान करूंगा। मैं नकद बिक्री / सेवाओं के नकद भुगतान को कम करूंगा और इसके स्थान पर डेबिट/ क्रेडिट कार्ड एवं चेक आदि में भुगतान स्वीकार करूंगा। बिक्री या सेवाओं के प्रति बिक्री कर रसीद जारी करूंगा।

*****

आभार एवं धन्यवाद

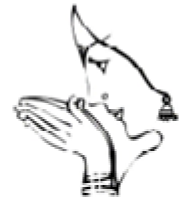

- 'सत्य के प्रयोग' – एमगांधी द्वारा लिखित और .के . नवजीवन ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित, पब्लिक डोमेन संस्करण:
- 'गांधी द मैनएकनाथ – ' ईश्वरनद्वारा लिखित ब्लू माउंटेन सेंटर ऑफ़ मैडिटेशन के संस्थापक ,, कॉपीराइट 1997, 2011; नीलगिरि प्रेस की अनुमति से पुनर्प्रकाशित,पोस्ट बॉक्स 256, टोमेल्स, कैलिफोर्निया, 94971 www.easwaran.org
- 'गांधी' : एक जीवनी – कृष्णा कृपलानी
- 'सोचिए और अमीर बनिए '– नेपोलियन हिल – मूल पब्लिक डोमेन संस्करण 1937 से
- गांधियन' होलिस्टिक इक्नोमिक्स '– शशि प्रभा शर्मा
- 'श्रीभगवदगीता' एकनाथ – ईश्वरन, ब्लू माउंटेन सेंटर ऑफ़ मैडिटेशन के संस्थापक द्वारा लिखित, कॉपीराइट1985; 2011 नीलगिरि प्रेस की अनुमति से पुनर्प्रकाशित, पोस्ट बॉक्स 256, टोमेल्स, कैलिफोर्निया 94971, www.easwaran.org
- 'द एल्केमिस्ट '– पाउलो कोइल्हो
- 'भक्ति योग' – स्वामी विवेकानंद
- इस पुस्तक के लिए चित्र प्रदान करने वाले कलाकारों
- और इस पुस्तक को तैयार करने में सहयोग देने वाले सभी साथीगण